अध्ययन मण्डल

अध्यक्ष **संयोजक**
कुलपति **निदेशक समाज विज्ञान विद्याशाखा**
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
1.प्रो0 अरविंद के जोशी, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
2.प्रो0 बी.मोहन कुमार, जी.बी.पंत कृषि व प्रोद्योगिको विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखण्ड

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 दीपक पालीवाल, सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन

1- डा0 संजीव महाजन**,** समाजशास्त्र विभाग**,** NAS P.G. College, Meerut
2- डा0 नीरजा सिंह**,** उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय
3- डॉ0 राजेश कुशवाहा**,** समाजकार्य विभाग**,** डॉ.बी.आर .अम्बेडकर विश्वविद्यालय,आगरा
4- डॉ0 योगेश चंद्रा**,** समाजशास्त्र विभाग**,** राजकीय महाविद्यालय, मानिला ,उत्तराखंड
5- डॉ0 रुपाली जोशी
6- पुनीत चतुर्वेदी

संपादन

डॉ0 दीपक पालीवाल, सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष- 2020

प्रकाशन- उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी- 263139

सर्वाधिक सुरक्षित। इस प्रकाशन का कोई भी अंश उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी

MASO-503

सामाजिक अनुसंधान विधि और कंप्यूटर अनुप्रयोग- I

Social Research methods and Computer Applications- I

Block 1:	**Introduction to Social Research**	
Unit 1 :	Social Research – Meaning and Purpose of Social Research सामाजिक शोध : अर्थ तथा सामाजिक शोध का उद्देश्य	पृष्ठ– 1–10
Unit 2 :	Theory and Research: Qualitative & Quantitative सिद्धान्त तथा शोध : गुणात्मक एवं गणनात्मक	पृष्ठ–11–23
Unit 3:	Objectivity and Subjectivity in Social Research सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता	पृष्ठ–24–31
Unit 4:	Ethics & Social Research सामाजिक शोध में नैतिकता	पृष्ठ–32–41
Block II :	**Research Design**	
Unit 5 :	Formulation of Research Problem अनुसंधान समस्या का निर्माण	पृष्ठ–42–47
Unit 6 :	Forms of Research Design :Descriptive, Diagnostic, Explanatory & Experimental Research Design वर्णात्मक ,अन्वेषणात्मक, प्रयोगात्मक एवं निदानात्मक शोध प्ररचना	पृष्ठ–48–54
Unit 7:	Comparative Analysis in Social Research तुलनात्मक विश्लेषण या पद्धति	पृष्ठ–55–65
Unit 8:	Textual Analysis, Media and Content Analysis टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया एवं अन्तर्वस्तु विश्लेषण	पृष्ठ–66–82
Unit 9:	Evaluative, Action and Participatory Research मूल्यांकनात्मक, कियात्मक तथा सहभागी अनुसंधान	पृष्ठ–83–106
Block III	**Methods of Data Collection**	
Unit 10:	Levels of Measurement and Use of standard scales मापन के स्तर एवं अनुमापन का उपयोग	पृष्ठ–107–125
Unit 11:	Sampling, Types of Sampling-probability and Non-probability sampling निद"र्न,निद"र्न के प्रकार- सम्भावना और असम्भावना निद"र्न	पृष्ठ–126–143
Unit 12:	Source of Data:Primary and Secondary Data तथ्य के स्रोत - प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्य	पृष्ठ–144–163
Unit 13:	Focused Group Discussion (FGD) केन्द्रित समूह साक्षात्कार	पृष्ठ–164–171
Unit 14:	Narratives and Oral Histories वृतान्त तथा मौखिक इतिहास	पृष्ठ–172–175
Unit 15:	Secondary Data bases and Official Documents द्वितीयक आधार सामग्री तथा कार्यालयी अभिलेख	पृष्ठ–176–188

इकाई 1 सामाजिक शोध : अर्थ तथा सामाजिक शोध का उद्देश्य
Social Research: Meaning & Purpose of Social Research

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 सामाजिक शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ
1.3 सामाजिक शोध की प्रकृति
1.4 सामाजिक शोध के उद्देश्य
1.5 सामाजिक शोध में प्रेरणार्थक कारक
1.6 सामाजिक शोध का महत्त्व
1.7 सामाजिक शोध की समस्याएँ
1.8 सारांश
1.9 शब्दावली
1.10 अभ्यास प्रश्न
1.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक शोध की अवधारणा को समझाने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही इसकी प्रकृति, उद्देश्यों, प्रेरणार्थक कारकों, महत्त्व एवं समस्याओं को स्पष्ट करना भी इस इकाई का उद्देश्य है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- सामाजिक शोध की अवधारणा को समझ पाएँगे;
- सामाजिक शोध की प्रकृति का ज्ञान प्राप्त कर पाएँगे;
- सामाजिक शोध के उद्दे"यों की व्याख्या कर पाएँगे;
- सामाजिक शोध में प्रेरणार्थक कारकों को समझ पाएँगे;
- सामाजिक शोध का महत्त्व समझ पाएँगे; तथा
- सामाजिक शोध की समस्याओं की चर्चा कर पाएँगे।

1.1 प्रस्तावना

मानव एक सामाजिक प्राणी है तथा प्रारम्भ से ही वह एक जिज्ञासु प्राणी रहा है क्योंकि उसने प्रकृति को समझने एवं अपनी समस्याओं के समाधान के लिए सदैव सतत प्रयास किया है। वास्तव में, सभ्यता एवं संस्कृति का विकास मानव की इस जिज्ञासा द्वारा प्रेरित अपने पर्यावरण को अनवरत रूप से समझने के प्रयासों का ही परिणाम है। आज प्रकृति को समझने तथा सामाजिक जीवन के बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के प्रयासों को ही शोध कहा जाने लगा है। अतः शोध ज्ञान की खोज से सम्बन्धित है।

1.2 सामाजिक शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

'सामाजिक शोध' का अर्थ समझने से पहले यह जान लेना अनिवार्य है कि '"गोध' या 'अनुसन्धान' किसे कहते हैं। '"गोध' शब्द अंग्रेजी के 'Research' शब्द का हिन्दी रूपान्तर है जिसे दो

भागों 'Re' तथा 'Search' में विभाजित किया जा सकता है। पहले अर्थात् 'Re' शब्द का अर्थ है 'पुनः' जबकि दूसरे अर्थात् 'Search' शब्द का अर्थ है 'खोज करना'। अतः '"ोध' का शाब्दिक अर्थ 'पुनः खोज करना' है। **प्लूटचिक** (Plutchik) के मतानुसार शोध शब्द का उद्‌गम एक ऐसे शब्द से हुआ है जिसका अर्थ सब दि"ाओं में जाना अथवा खोज करना है।

मूल रूप से शोध शब्द का अर्थ अन्वेषण (Enquiry) से लिया जाता था, परन्तु कालान्तर में इसका रूप शनैः शनैः निरन्तर सं"ोधित तथा विकसित होता गया। आधुनिक वैज्ञानिक शोध इसी सतत्, प्रगति"ाील एवं विकास"ाील प्रक्रम की देन है। **द न्यू सेन्चुरी डिक्शनरी** (The New Century Dictionary) के अनुसार शोध का अर्थ किसी वस्तु अथवा व्यक्ति के विषय में वि"ोष रूप से सावधानी के साथ खोज करना, तथ्यों अथवा सिद्धान्तों का अन्वेषण करने के लिए विषय–सामग्री की निरन्तर सावधानीपूर्वक पूछताछ अथवा जाँच–पड़ताल करना है।

सी0 वी0 गुड (C. V. Good) के अनुसार–"आद"ार रूप में शोध किसी समस्या के बारे में सावधानी एवं निष्पक्ष रूप से किया जाने वाला अन्वेषण है जिसमें यथासम्भव प्रमाणित तथ्यों में अन्तर, निर्वचन तथा सामान्य रूप से सामान्यीकरण को आधार बनाया जाता है।" इसी प्रकार, **सामाजिक विज्ञानों के विश्वकोश** (Encyclopedia of the Social Sciences) के अनुसार–'"ोध वस्तुओं, अवधारणाओं या प्रतीकों आदि को कु"ालतापूर्वक व्यवस्थित करता है, जिसका उद्दे"य सामान्यीकरण द्वारा ज्ञान का विकास, प्रामाणिकता की जाँच अथवा सत्यापन की जाँच होता है चाहे वह ज्ञान व्यवहार में सहायक हो या कला में।"

इस प्रकार, शोध का अर्थ केवल पुनः खोज करना ही नहीं है अपितु किसी प्रघटना या समस्या के बारे में में नवीन जानकारी प्राप्त करना या उपलब्ध ज्ञान में किसी प्रकार का सं"ोधन करना भी है। '"ोध' शब्द का प्रयोग भी एक प्रकार से शुद्धि, संस्कार या सं"ोधन के अर्थ के रूप में किया जाता है। सामान्यतः नवीन ज्ञान की दि"ाा में किया गया क्रमबद्ध प्रयास ही शोध कहलाता है, परन्तु सामाजिक विज्ञानों में '"ोध' शब्द का प्रयोग नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए ही नहीं किया जाता अपितु विस्तृत अर्थ में ज्ञान में वृद्धि के साथ–साथ इसमें किसी प्रकार का सं"ोधन करने या ज्ञान की पुनर्स्थापना करने के रूप में भी किया जाता है। वास्तव में, सामाजिक शोध मानव के सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण का एक वैज्ञानिक प्रयास है जिसका उद्देश्य नवीन ज्ञान प्राप्त करना अथवा/तथा विद्यमान ज्ञान का परिष्कार करना है। सामाजिक शोध में वैज्ञानिक एवं तार्किक पद्धतियों की सहायता से सामाजिक व्यवहार का विष्ले"ाण करने के पश्चात् सिद्धान्तों का निर्माण करने का प्रयास किया जाता है। अन्य शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक शोध की प्रकृति वैज्ञानिक होती है तथा इसमें निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों के अवलोकन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण हेतु व्यवस्थित ढंग से वैज्ञानिक पद्धति के सभी चरणों को अपनाया जाता है। सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता, सत्यापनशीलता, तटस्थता, व्यवस्थितता तथा भविष्योक्ति पर जोर दिया जाता है।

अतः सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक शोध का अर्थ सामाजिक घटनाओं या तथ्यों के बारे में नवीन जानकारी प्राप्त करना, प्राप्त ज्ञान में वृद्धि करना अथवा जिन सिद्धान्तों एवं नियमों का निर्माण किया गया है उनमें किसी प्रकार का सं"ोधन करना है। सामाजिक शोध की परिभाषाएँ विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित प्रकार से दी हैं–

यंग (Young) के अनुसार–"सामाजिक शोध नवीन तथ्यों की खोज, पुराने तथ्यों के सत्यापन, उनके क्रमबद्ध पारस्परिक सम्बन्धों, कारणों की व्याख्या तथा उन्हें संचालित करने वाले प्राकृतिक नियमों के अध्ययन की सुनियोजित पद्धति है।" उनके अनुसार, '"ोध का उद्दे"य (i) नवीन तथ्यों का पता लगाना अथवा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच एवं परीक्षण करना; (ii) उपयुक्त सैद्धान्तिक सन्दर्भ में तथ्यों के क्रमों, अन्तर्सम्बन्धों तथा कार्य–कारण व्याख्याओं का विष्ले"ाणकरना तथा (iii) नवीन

वैज्ञानिक यन्त्रों, आवधारणाओं और सिद्धान्तों का निर्माण करना है जिनसे कि मानवीय व्यवहार का वि"वसनीय और प्रमाणित अध्ययन किया जा सके।" **फिशर** (Fisher) के अनुसार–"किसी समस्या को हल करने या एक उपकल्पना की परीक्षा करने, या नए घटनाक्रम या उसमें नए सम्बन्धों को खोजने के उद्दे"य से उपयुक्त पद्धतियों का सामाजिक परिस्थितियों में जो प्रयोग किया जाता है, उसे सामाजिक शोध कहते है।" **रैडमैन** एवं **मोरी** (Redman and Mory) के अनुसार–"नवीन ज्ञान को प्राप्त करने के क्रमबद्ध प्रयास को हम शोध कह सकते हैं।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक शोध सामाजिक सम्बन्धों, घटनाओं तथा तथ्यों से सम्बन्धित है जिसमें इनकी व्याख्या, कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज, नवीन तथ्यों की खोज तथा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच वैज्ञानिक ढंग से करने का प्रयास किया जाता है। अतः सामाजिक शोध एक व्यवस्थित पद्धति है जिसमें सामाजिक तथ्यों की वास्तविकता, उनके कार्य–कारण सम्बन्धों एवं प्रक्रियाओं के बारे में क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

1.3 सामाजिक शोध की प्रकृति

शोध एवं सामाजिक शोध की अवधारणा के स्पष्टीकरण से सामाजिक शोध की प्रकृति का भी पता चल जाता है। सामाजिक शोध की प्रकृति निम्नांकित तथ्यों द्वारा स्पष्ट की जा सकती है–

(1) सामाजिक सम्बन्धों, घटनाओं, तथ्यों एवं प्रक्रियाओं की व्याख्या–सामाजिक शोध के अन्तर्गत मानव–व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। समाज में रहने वाले अन्य सदस्यों एवं समूहों के साथ उसके सम्बन्ध, उनकी विभिन्न प्रक्रियाओं एवं अन्तर्क्रियाओं का अध्ययन तथा विभिन्न सामाजिक तथ्यों एवं घटनाओं, जो कि व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करती हैं, का विष्ले"णसामाजिक शोध के अन्तर्गत किया जाता है।

(2) सामाजिक घटनाओं के बारे में नवीन तथ्यों की खोज करना–सामाजिक शोध का उद्दे"य किसी घटना के सम्बन्ध या व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों में नवीन तथ्यों एव नियमों की खोज करना है। इन नवीन तथ्यों की खोज द्वारा सामाजिक शोध सामाजिक सम्बन्धों द्वारा निर्मित संरचना एवं संगठन को भी समझने एवं इनका स्पष्टीकरण करने में सहायता देता है। नवीन तथ्यों की खोज के कारण अनेक विद्वान् सामाजिक शोध का उद्देश्य केवल सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त करने तक ही सीमित रखने का प्रयास करते हैं।

(3) सामाजिक समस्याओं की प्रकृति एवं कारणों का अध्ययन करना–सामाजिक शोध में विविध प्रकार की सामाजिक समस्याओं की प्रकृति एवं उनके कारणों का पता लगाने का भी प्रयास किया जाता है। जब तक सामाजिक समस्याओं की प्रकृति एवं कारणों का पता न हो तब तक उनका उपचार सम्भव नहीं है। **पी0 वी0 यंग** (P. V. Young) का कहना है कि सामाजिक शोध व्याधिकीय समस्याओं से केवल वहीं तक सम्बद्ध है जहाँ तक वे आधारभूत सामाजिक प्रक्रियाओं, मानव व्यवहार तथा व्यक्तित्व के विकास अथवा विघटन पर प्रका"ा डालती हैं। सामाजिक शोध में कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज करने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण के लिए–यदि शोध के आधार पर यह स्थापित हो जाए कि गन्दी बस्तियाँ बाल अपराध के लिए उत्तरदायी हैं, तो इसे कार्य–कारण सम्बन्धों की स्थापना कहा जाएगा।

(4) प्राचीन तथ्यों का पुनर्परीक्षण एवं सुधार करना–नवीन नियमों तथा सिद्धान्तों के निर्माण के साथ–साथ सामाजिक शोध का उद्दे"य प्राचीन तथ्यों की पुनर्परीक्षा करना तथा उनमें सुधार करना भी है। समयानुकूल ज्ञान के आधार पर सामाजिक तथ्यों की व्याख्या करना मानव जीवन को समझने के लिए अनिवार्य है। उदाहरण के लिए–सामाजिक शोध के आधार पर ही यह धारणा परिवर्तित हुई है कि अपराधी जन्मजात होते हैं।

(5) वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग–सामाजिक शोध में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है ताकि वि"वसनीय एवं प्रमाणित तथ्यों का संकलन किया जा सके और निष्पक्ष व्याख्या द्वारा मानव सम्बन्धों की प्रकृति को समझा जा सके। वैज्ञानिक पद्धति से अभिप्राय सामाजिक शोध में निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण हेतु व्यवस्थित विधि को अपनाना है। वैज्ञानिक पद्धति द्वारा किए गए अध्ययनों की सत्यापनशीलता कभी भी की जा सकती है।

(6) सांख्यिकीय विश्ले"ाण का प्रयोग–सामाजिक शोध में सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग भी किया जाता है जिससे कि विभिन्न चरों (Variables) अथवा घटनाओं में सहसम्बन्ध का पता चल सके और अधिक वि"वसनीय निष्कर्ष निकाले जा सकें। यदि शोध का उद्देश्य केवल घटनाओं का वर्णन करना है, तो उसे गुणात्मक शोध कहा जाता है तथा ऐसे शोध में सांख्यिकीय विष्ले"ाण की आवश्यकता नहीं होती है। गणनात्मक शोध सदैव सांख्यिकीय विष्ले"ाण पर आधारित होता है। गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध को विस्तार से इसी खण्ड की दूसरी इकाई में समझाया गया है।

सामाजिक शोध की प्रकृति से हमें पता चलता है कि इसका अध्ययन–क्षेत्र अति व्यापक है। वास्तव में, यह क्षेत्र इतना ही व्यापक है जितना कि स्वयं सामाजिक वास्तविकता का। इसके अन्तर्गत विभिन्न सामाजिक समस्याओं का विष्ले"ाण करना, उनके कारणों का पता लगाना, घटनाओं का समाधान प्रस्तुत करना, वर्तमान ज्ञान का परिवर्तित परिस्थितियों के सन्दर्भ में मूल्यांकन करके उपयुक्तता का पता लगाना इत्यादि विविध प्रकार के अध्ययनों को रखा जा सकता है।

1.4 सामाजिक शोध के उद्देश्य

सामाजिक शोध सामाजिक वास्तविकता से सम्बन्धित है। अतः इसका उद्दे"य सामाजिक वास्तविकता को यथासम्भव वस्तुनिष्ठ एवं क्रमबद्ध रूप में समझना है। इसका उद्दे"य केवल ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं है अपितु ज्ञान को व्यावहारिक जीवन में पाई जाने वाली समस्याओं के समाधान के लिए प्रयोग में लाना भी है। अतः सामाजिक शोध के निम्नलिखित तीन प्रमुख उद्दे"य हो सकते हैं–

(1) सामाजिक वास्तविकता के बारे में वि"ाुद्ध ज्ञान प्राप्त करना तथा सिद्धान्तों का विकास अथवा विस्तार करना,

(2) वि"ाष्ट समस्याओं का समाधान करना, तथा

(3) प्रचलित एवं वर्तमान सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा करना।

यह अनिवार्य नहीं है कि शोध का केवल एक ही उद्दे"य हो अपितु, वास्तव में, सामाजिक शोध का उद्दे"य नवीन तथ्यों की खोज, प्राचीन तथ्यों की नवीन ढंग से विवेचना करते हुए वर्तमान सिद्धान्तों की उपयुक्तता का परीक्षण करना तथा उनमें आव"यक सं"ाोधन करके नवीन सिद्धान्तों का निर्माण करना हो सकता है।

सामाजिक शोध का उद्दे"य अन्य शोधों की तरह ज्ञान की प्राप्ति करना है जिसे सैद्धान्तिक उद्दे"य (Theoretical objective) कहते हैं। इस प्रकार के शोध में सामाजिक घटनाओं के बारे में नवीन तथ्यों की खोज, पुराने नियमों की जाँच या पहले से उपलब्ध ज्ञान में वृद्धि केवल मात्र मानव जिज्ञासा की सन्तुष्टि के लिए की जाती है। परन्तु सामाजिक शोध का व्यावहारिक उद्दे"य (Applied or utilitarian objective) भी हो सकता है अर्थात् इसका उद्दे"य प्राप्त ज्ञान का प्रयोग व्याधिकीय एवं विघटनकारी समस्याओं के समाधान के लिए करना हो सकता है। **यंग** (Young), **लैजरफेल्ड** (Lazarsfeld) तथा **रोजनबर्ग** (Rosenberg) ने सामाजिक शोध के व्यावहारिक पक्ष पर अधिक महत्त्व दिया है। ज्ञान सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों ही दृष्टियों से तभी अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकता है, जबकि इसके अन्तर्गत भविष्यवाणी करने की क्षमता हो क्योंकि इससे परिस्थितियों का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है।

अतः स्पष्ट है कि अनेक विद्वानों ने सामाजिक शोध के उद्देश्यों को सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों की दृष्टि से प्रतिस्थापित करने का प्रयास किया है। यदि हम इसे केवल नवीन ज्ञान प्राप्त करने अथवा वर्तमान ज्ञान में वृद्धि करने तक ही सीमित रखें, तो निश्चित रूप से यह इसके सैद्धान्तिक महत्त्व का द्योतक है। दूसरी ओर, यदि हम सामाजिक शोध द्वारा प्राप्त ज्ञान का प्रयोग समाज में विद्यमान समस्याओं के निराकरण हेतु करने का प्रयास करें अथवा इसका प्रयोग समाज कल्याण एवं समाज सुधार कार्यों हेतु करें, तो यह शोध का व्यावहारिक महत्त्व है। व्यावहारिक महत्त्व के कारण ही सामाजिक शोध नीति–निर्माण में सहायक माना जाता है।

1.5 सामाजिक शोध में प्रेरणार्थक कारक

प्रत्येक मानवीय क्रिया के समान सामाजिक शोध भी सम्प्रेरित है। **पी0 वी0 यंग** ने सामाजिक शोध में चार प्रमुख प्रेरणार्थक कारकों का उल्लेख किया है जो कि इस प्रकार हैं–

(1) अज्ञात के प्रति जिज्ञासा–जिज्ञासा को मानवीय मस्तिष्क की मूल प्रवृत्ति माना गया है क्योंकि मनुष्य आदिकाल से ही उत्सुकता के साथ अज्ञात वस्तुओं के बारे में ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करता रहा है। इसी जिज्ञासा के कारण व्यक्ति सामाजिक वास्तविकता को भी समझने का प्रयास करता है। शोध इसी जिज्ञासा का परिणाम है।

(2) कार्य–कारण सम्बन्धों को समझने की इच्छा–विभिन्न घटनाओं एवं प्रक्रियाओं में कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज करना भी सामाजिक शोध का एक प्रेरणार्थक कारण रहा है क्योंकि अधिकतर शोध घटनाओं के परस्पर सम्बन्धों को समझने या इसके बारे में सन्देह दूर करने के लिए ही किए गए हैं।

(3) समय–समय पर नवीन एवं आशातीत घटनाओं का घटित होना–समय–समय पर नवीन एवं अप्रत्या"ित घटनाएँ हमारी जिज्ञासा को उकसाती हैं। अतः व्यक्ति इनके एवं विभिन्न समस्याओं के कारण जानकर हमे"ाा यह चाहता है कि वह उन पर विजय प्राप्त कर ले। अनेक सामाजिक शोध समस्याओं को समझने के प्रयास हेतु भी किए जाते हैं।

(4) लाभकारी एवं मौलिक ज्ञान प्राप्त करने हेतु नवीन वैज्ञानिक प्रवृत्तियों की खोज तथा पुरानी प्रणालियों की परीक्षा करने की इच्छा–सामाजिक शोध में एक अन्य प्रेरणार्थक कारक शोध के लिए नवीन विधियों एवं प्रविधियों को विकसित करने की इच्छा भी है ताकि सामाजिक समस्याओं को और अधिक अच्छी तरह से समझा जा सके।

1.6 सामाजिक शोध का महत्त्व

सामाजिक शोध आज के युग में दैनिक जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया है क्योंकि सामाजिक जीवन अत्यधिक जटिल होता जा रहा है। इसमें धन एवं समय दोनों ही लगते हैं परन्तु फिर भी अधिक–से–अधिक लोग शोध कार्यों में रुचि लेने लगे हैं। इसका कारण सामाजिक अनुसन्धान का बढ़ता हुआ महत्त्व है। सामाजिक शोध के महत्त्व को निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा सकता है–

(1) अज्ञानता और अन्धविश्वास को मिटाने में सहायक–अज्ञानता एवं अन्धवि"वास मनुष्य की अनेक समस्याओं का कारण हैं। सामाजिक शोध नवीन ज्ञान द्वारा अज्ञानता एवं अन्धवि"वास को मिटाने में सहायता देता है। इससे हम सामाजिक कुरीतियों के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करते हैं जिससे इनके प्रति हमारी अज्ञानता एवं अन्धवि"वास कम होता है।

(2) ज्ञान के विकास में सहायक–सामाजिक शोध मानवीय ज्ञान में निरन्तर वृद्धि करने में सहायक है तथा इससे बुद्धि का भी विकास होता है। आज के जटिल समाज को समझने के लिए निरन्तर ज्ञान में वृद्धि अनिवार्य है तथा सामाजिक शोध द्वारा वर्तमान ज्ञान को बढ़ाया जा सकता है।

(3) समाज के वैज्ञानिक अध्ययन में सहायक–सामाजिक शोध समाज के विभिन्न पहलुओं एवं उनमें पाई जाने वाली जटिलताओं का वैज्ञानिक ज्ञान उपलब्ध कराने में सहायता देकर हमें सामाजिक विभिन्नताओं को समझने में सहायता देता है। वैज्ञानिक ज्ञान समाज को उचित रूप से समझने के लिए अनिवार्य है।

(4) सामाजिक समस्याओं के निष्पक्ष विश्ले"ाण में सहायक–आज का मानव जीवन चारों ओर से विविध प्रकार की समस्याओं से घिरा हुआ है। सामाजिक शोध हमें ऐसी सामाजिक समस्याओं के निष्पक्ष विष्ले"ाणमें सहायता प्रदान करता है जिससे समस्याओं के कारणों का पता चल जाता है और उनके समाधान के बारे में सोचा जाता है।

(5) सामाजिक कल्याण में सहायक–सामाजिक शोध समाज सुधार से सम्बन्धित कार्यों को वैज्ञानिक आधार प्रदान करता है। सामाजिक शोध द्वारा ही अनेक कुरीतियों तथा उनके लिए उत्तरदायी कारकों को समझा जा सकता है और उन्हें दूर किया जा सकता है।

(6) भविष्यवाणी करने में सहायक–सामाजिक शोध सामाजिक वास्तविकता को समझने तथा उसके बारे में नियमों एवं सिद्धान्तों का निर्माण करने में सहायता प्रदान करता है। वर्तमान परिस्थितियों का वैज्ञानिक विष्ले"ाणभविष्य का अनुमान लगाने में सहायता देता है।

(7) सामाजिक नियन्त्रण में सहायक–सामाजिक शोध द्वारा प्राप्त ज्ञान सामाजिक नियन्त्रण में भी सहायक होता है। सामाजिक संगठन तथा इसकी भिन्न इकाइयों के बारे में सामाजिक शोध द्वारा पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है तथा यह पता लगाया जा सकता है कि कौन–सी विघटनकारी प्रवृत्तियाँ सामाजिक व्यवहार के लिए खतरा पैदा करती हैं। नियोजन भी सामाजिक शोध द्वारा ही सम्भव है।

1.7 सामाजिक शोध की समस्याएँ

सामाजिक शोध एक जटिल प्रक्रिया है। लगता तो ऐसा है कि शोध करना अत्यधिक सरल कार्य है, परन्तु जब हम सामाजिक शोध की प्ररचना (Research design) बनाना प्रारम्भ करते हैं तो हमें पता चलता है कि यह कार्य कितना कठिन है। सामाजिक शोध में अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रथम समस्या यह है कि शोध समस्या का निरूपण ठीक प्रकार से किया जा सके। ऐसा माना जाता है कि यदि शोध समस्या का निरूपण ठीक प्रकार से हो गया है तो यह आधे शोध के बराबर है। समस्या का सावधनीपूर्वक निर्माण हमें शोध के अगले चरणों में आने वाली अनेक बाधाओं से बचा सकता है। दूसरी समस्या निद"ान के चयन से सम्बन्धित है। सामान्यतया जिन सूचनादाताओं का चयन किया जाता है उनमें से बहुत–से मिलते ही नहीं हैं। इससे निद"ान की वि"वसनीयता प्रभावित होती है। तीसरी समस्या वि"वसनीय सामग्री के संकलन से सम्बन्धित है। अधिकां"ा सूचनादाता सही सूचनाएँ नहीं देते हैं जिसके कारण भ्रामक निष्कर्ष निकल सकते हैं। एक से अधिक अनुसन्धान प्रविधियों का प्रयोग करके संकलित सामग्री की वि"वसनीयता की जाँच की जाती है। सामाजिक शोध की चौथी प्रमुख समस्या शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखने की है। अधिकां"ा विद्वान् इस बात पर बल देते हैं कि सामाजिक शोध में प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति प्रामाणिकता लाना कठिन है। समाज विज्ञानों के नियम प्राकृतिक विज्ञानों के नियमों की भाँति अटल नहीं होते, वे तो सामाजिक व्यवहार के सन्दर्भ में सम्भावित प्रवृत्ति को प्रकट करते हैं। ऐसी स्थिति के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं; जैसे–सामाजिक घटना का

स्वभाव (प्रकृति) तथा ठोस मापदण्डों का विकसित न होना आदि। वस्तुनिष्ठ शोध से सम्बन्धित पाँच प्रमुख समस्याएँ हैं–

(1) समस्या का चयन सदैव मूल्य–निर्णयों द्वारा प्रभावित होता है। इसी खण्ड की तीसरी इकाई में आपको मैक्स वेबर के विचारों के सन्दर्भ में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जाएगा कि किस प्रकार शोध से सम्बन्धित समस्या का चयन सदैव मूल्यों से प्रभावित होता है।

(2) सामाजिक शोध में तटस्थता रख पाना सम्भव नहीं है। यह समस्या शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखने से सम्बन्धित है तथा इसकी विस्तृत विवेचना भी तीसरी इकाई में की गई है।

(3) शोधकर्ता के आन्तरिक एवं बाह्य हित व्यक्तिनिष्ठता को प्रोत्साहन देते हैं। प्रत्येक शोधकर्ता अनेक नैतिक मूल्यों एवं धारणाओं के आधार पर सामाजिक यथार्थता को समझने का प्रयास करता है। ऐसा करने में वह शोध के प्रत्येक स्तर पर निष्पक्ष न होकर वास्तविकता को एक–तरफा दृष्टि से देखने का प्रयास करता है। इसीलिए सामाजिक शोध में निष्कर्षों के प्रमाणीकरण (सत्यापनशीलता) एक कठिन कार्य माना जाता है।

(4) सामाजिक घटनाओं की गुणात्मक प्रकृति परि"ाुद्ध एवं यथार्थ रूप से घटनाओं के अध्ययन में एक बाधा है। एक तो सामाजिक घटनाएँ गुणात्मक होती हैं तथा दूसरे इनकी प्रकृति अत्यन्त जटिल भी होती है। इसका प्रमुख कारण यह है कि प्रत्येक सामाजिक घटना हेतु कोई एक कारक उत्तरदायी न होकर वह घटना अनेक कारकों की देन होती है। शोधकर्ता के लिए इन कारकों को एक–दूसरे से अलग कर घटना को समझना सम्भव नहीं है।

(5) शोधकर्ता के नैतिक मूल्य (संजातिकेन्द्रवाद) शोध की प्रत्येक अवस्था में उसे अत्यधिक प्रभावित करते हैं। जब हम अंग्रेज समाजशास्त्रियों एवं मानवशास्त्रियों पर भारतीय समाज की यथार्थता को गलत ढंग से चित्रित करने का आरोप लगाते हैं, तो हमारे सामने संजातिकेन्द्रवाद ही होता है। यूरोपीय विद्वान् अपनी संस्कृति को उच्च एवं आदर्श मानकर भारतीय समाज को समझने का प्रयास करते रहे हैं, जिससे वे निष्पक्ष होकर यथार्थता का वर्णन नहीं कर पाए हैं।

वास्तव में, सामाजिक शोध में उपर्युक्त समस्याओं के अतिरिक्त माप की समस्या का उल्लेख किया जाना भी आवश्यक है। सामाजिक यथार्थता के अनेक पहलुओं को मापना सम्भव नहीं है। उदाहरण के लिए–यदि कोई यह कहे कि भारतीय समाज में उच्च एवं निम्न जातियों में काफी सामाजिक दूरी पाई जाती है, तो हो सकता है यह सही हो परन्तु इन जाति श्रेणियों में दूरी को मापा नहीं जा सकता है।

सामाजिक शोध की अन्तिम समस्या अन्तःविषयक दृष्टिकोण (Interdisciplinary perspective) की है जो कि अधिकां"ा शोधकर्ताओं में नहीं पाया जाता है। इससे सामाजिक घटनाओं की यथार्थता का पूरा पता नहीं चल पाता है।

1.8 सारांश

सामाजिक शोध मानव के सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण का एक वैज्ञानिक प्रयास है जिसका उद्देश्य नवीन ज्ञान प्राप्त करना अथवा/तथा विद्यमान ज्ञान का परिष्कार करना है। सामाजिक शोध में वैज्ञानिक एवं तार्किक पद्धतियों की सहायता से सामाजिक व्यवहार का विष्ले"ाण करने के पश्चात् सिद्धान्तों का निर्माण करने का प्रयास किया जाता है। इसमें सांख्यिकीय विष्ले"ाण का प्रयोग किया जाता है। ऐसे शोध आनुभविक शोध कहलाते हैं। आधुनिक युग में सामाजिक शोध जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया है। इसका प्रयोग समाज कल्याण की नीतियों के मूल्यांकन एवं उन्हें प्रभावशाली बनाने हेतु भी किया जाने लगा है। सामाजिक शोध में तटस्थता अर्थात् वस्तुनिष्ठता बनाए रखना एक प्रमुख समस्या है क्योंकि शोधकर्ता के मूल्य, सोच एवं

उन्मुखीकरण निरन्तर इसे प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। इतना ही नहीं, सामाजिक घटनाओं की गुणात्मक प्रकृति एवं इनके लिए बहुकारकों का उत्तरदायी होना भी शोध में समस्यामूलक माना जाता है।

1.9 शब्दावली

सामाजिक शोध – सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण के वैज्ञानिक प्रयास को सामाजिक शोध कहा जाता है।

वैज्ञानिक प्रकृति – इससे अभिप्राय सामाजिक शोध के सभी सोपानों में वैज्ञानिक पद्धति को अपनाने से है।

कार्य–कारण सम्बन्ध – इससे अभिप्राय सामाजिक शोध के आधार पर कारणों एवं परिणामों में सम्बन्ध स्थापित करना है।

समाज कल्याण – समाज कल्याण का अभिप्राय समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त कर समाज सुधार कार्यों को प्रोत्साहन देना है।

1.10 अभ्यास प्रश्न

1. सामाजिक शोध किसे कहते हैं? इसकी प्रकृति स्पष्ट कीजिए।
2. सामाजिक शोध की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
3. सामाजिक शोध को परिभाषित कीजिए तथा इसके प्रमुख उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
4. सामाजिक शोध से आप क्या समझते हैं? इसे प्रेरणा देने वाले प्रमुख कारक कौन–से हैं?
5. सामाजिक शोध क्या है? इसका महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
6. सामाजिक शोध का अर्थ बताइए तथा इसकी प्रमुख समस्याओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

1.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

C. V. Good (1973), **Dictionary of Education**, McGraw-Hill Inc., New York.

Edwin Robert Anderson Seligman (1934), **Encyclopaedia of the Social Sciences**, Vol. XIV, The Macmillan Company, New York.

G. M. Fisher, Quoted in H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New York.

L. V. Redman and A. V. H. Mory (1933), **The Romance of Research**, The Williams and Wilkins Company, Baltimore.

P. V. Young (1966), **Scientific Social Surveys and Research : An Introduction to the Background, Content, Methods, Principles and Analysis of Social Studies**, Prentice-Hall, Englewood Cliffs, N.J.

R. Plutchik (1968), **Foundations of Experimental Research**, Harper & Row, New York.

The New Century Dictionary, 17th Edition (1957), Standard Reference Works Publishing Company Inc., New York.

The Encyclopedia of the Social Sciences (1930), MscmiUan and Co. Ltd. MCMXXX. London.

इकाई 2 सिद्धान्त तथा शोध : गुणात्मक एवं गणनात्मक

Theory & Research: Qualitative & Quantitative

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 सिद्धान्त की अवधारणा का स्पष्टीकरण
2.3 शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण
2.4 शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध
2.5 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध
2.6 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में अन्तर
2.7 सारांश
2.8 शब्दावली
2.9 अभ्यास प्रश्न
2.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सिद्धान्त की अवधारणा को समझाने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध तथा गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध को स्पष्ट करना भी इस इकाई का उद्देश्य है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- सिद्धान्त की अवधारणा को समझ पाएँगे;
- शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण कर पाएँगे;
- शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध को स्पष्टतया समझ पाएँगे; तथा
- गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध का ज्ञान प्राप्त कर पाएँगे।

2.1 प्रस्तावना

मानव की जिज्ञासात्मक प्रकृति शोध के लिए उत्तरदायी मानी जाती है। मानव एक सामाजिक प्राणी है तथा प्रारम्भ से ही एक जिज्ञासु प्राणी रहा है क्योंकि उसने प्रकृति को समझने एवं अपनी समस्याओं के समाधान के लिए सदैव सतत प्रयास किया है। वास्तव में, सभ्यता एवं संस्कृति का विकास मानव की इस जिज्ञासा द्वारा प्रेरित अपने पर्यावरण को अनवरत रूप से समझने के प्रयासों का ही परिणाम है। आज प्रकृति को समझने तथा सामाजिक जीवन के बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के प्रयासों को ही शोध कहा जाने लगा है। अतः शोध ज्ञान की खोज से सम्बन्धित है। सामाजिक शोध द्वारा प्राप्त तथ्यों को जब परस्पर सम्बन्धित किया जाता है तो एक सिद्धान्त का निर्माण होता है। समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का प्रयोग इसके सामान्य जीवन में व्यवहार के विपरीत अर्थ के रूप में नहीं किया जाता है। सिद्धान्त से अभिप्राय तथ्यों के क्रमबद्ध अवधारणात्मक ढाँचे से है। इस प्रकार, शोध तथा सिद्धान्त परस्पर सम्बन्धित हैं तथा दोनों एक–दूसरे को प्रोत्साहित करते हैं।

2.2 सिद्धान्त की अवधारणा का स्पष्टीकरण

सिद्धान्त वैज्ञानिक अन्वेषण का महत्त्वपूर्ण चरण है। **गुड** एवं **हैट** (Goode and Hatt) ने इसे विज्ञान का एक उपकरण माना है क्योंकि इससे हमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का पता चलता है, तथ्यों को सुव्यवस्थित करने, वर्गीकृत करने तथा परस्पर सम्बन्धित करने के लिए इससे अवधारणात्मक प्रारूप प्राप्त होता है, इससे तथ्यों का सामान्यीकरण के रूप में संक्षिप्तीकरण होता है तथा इससे तथ्यों के बारे में भविष्यवाणी करने एवं ज्ञान में पाई जाने वाली त्रुटियों का पता चलता है।

कई बार सिद्धान्त को तथ्यों का योग मात्र ही मान लिया जाता है जो ठीक नहीं है तथा यदि हम इस अर्थ में सिद्धान्त को परिभाषित करते हैं तो इसका क्षेत्र अत्यन्त सीमित हो जाता है। तथ्य एक आनुभविक रूप से प्रमाणित अवलोकन है तथा सिद्धान्त के निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। सिद्धान्त शब्द किसी वस्तु/घटना के परिकल्पनात्मक स्वरूप को इंगित करता है। यह घटनाओं के कारणों की व्याख्या से सम्बन्धित है। इसमें 'क्यों' और 'कैसे' जैसे प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास किया जाता है।

समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का प्रयोग तीन प्रमुख अर्थों में किया जाता है–सामान्यीकरण के अर्थ में, आनुभविक सिद्धान्त के रूप में तथा व्याख्यात्मक सिद्धान्त के रूप में। अनेक विद्वान् यह मानते हैं कि सिद्धान्त से अभिप्राय केवल मात्र सामाजिक विश्व के बारे में सामान्यीकरण तथा इसका वर्गीकरण है। सामान्यीकरण का क्षेत्र कुछ मूर्त घटनाओं से लेकर अत्यधिक अमूर्त एवं समाज के सम्पूर्ण इतिहास के सामान्य सिद्धान्त तक विस्तृत हो सकता है। आनुभविक अर्थात् अनुभवपरक दृष्टि से सिद्धान्त को ऐसे कथन माना जा सकता है जिसके आधार पर व्यवस्थित रूप से जाँच–पड़ताल की जाती है। इस अर्थ में प्रयोग किए जाने वाले सिद्धान्त को 'प्रत्यक्षवाद' के नाम से भी जाना जाता है। जब सिद्धान्त शब्द का प्रयोग व्याख्यात्मक अर्थ में किया जाता है तो इसे केवल घटनाओं की व्याख्या तक ही सीमित करने का प्रयास किया जाता है। ऐसे सिद्धान्त कारणात्मक सम्बन्धों एवं प्रक्रियाओं को प्रकट करने वाले होते हैं। अवधारणात्मक ढाँचा होने के नाते सिद्धान्तों को प्रत्यक्ष रूप में देखा तो नहीं जा सकता, परन्तु इनके प्रभावों को अनुभव किया जा सकता है।

सिद्धान्त के अर्थ के बारे में पाए जाने वाले एक सामान्य भ्रम को दूर करना भी अनिवार्य है। इस भ्रम का कारण सिद्धान्त जैसी अन्य समाजशास्त्रीय अवधारणाओं के अर्थ को जानने हेतु अंग्रेजी–हिन्दी शब्दकोशों का भी प्रयोग करना है। वास्तविकता यह है कि समाजशास्त्र में प्रयुक्त अवधारणाएँ इनके सामान्य अथवा शब्दकोशीय अर्थ से भिन्न अर्थ रखती है। उदाहरणार्थ–'सिद्धान्त' शब्द का शब्दकोशीय अर्थ 'व्यवहार के विपरीत' अथवा 'अव्यावहारिक' है। इसलिए बहुधा यह कहा जाता है कि जो सिद्धान्त में उपयुक्त होता है वह अनिवार्य रूप से व्यवहार में नहीं। समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का अर्थ व्यवहार के विपरीत कदापि नहीं है।

प्रमुख विद्वानों ने इसकी परिभाषाएँ निम्न प्रकार से दी हैं–

गुड एवं **हैट** (Goode and Hatt) के अनुसार–''एक वैज्ञानिक के लिए सिद्धान्त का अर्थ तथ्यों में पाए जाने वाले सम्बन्धों से अथवा उन्हें निश्चित क्रम प्रदान करने से है।'' **जैटरबर्ग** (Zetterberg) के अनुसार–''सिद्धान्त सुव्यवस्थित रूप से सम्बन्धित प्रस्तावनाओं का कुलक है।'' **फिलिप्स** (Phillips) के अनुसार–''सिद्धान्त को प्रस्तावनाओं में पाए जाने वाले विशिष्ट सम्बन्धों के अंश के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसलिए प्रत्येक सिद्धान्त का मूल्यांकन इस अंश की मात्रा, प्रामाणिकता, विषय–क्षेत्र तथा व्याख्या एवं भविष्यवाणी की क्षमता के आधार पर किया जा सकता है।'' **लिन** (Lin) के अनुसार–''एक सिद्धान्त को परस्पर सम्बन्धित प्रस्तावनाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनमें से कुछ का आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि सिद्धान्त उन प्रस्तावनाओं से बनता है जिनका कि आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है। सिद्धान्त को सामान्यतः नियम भी मान लिया जाता है, परन्तु

सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में अभी तक ऐसे सार्वभौमिक सिद्धान्तों का निर्माण नहीं किया गया है जिन्हें नियम कहा जा सके। **फेयरचाइल्ड** (Fairchild) के शब्दों में, "सामाजिक घटना के बारे में एक ऐसा सामान्यीकरण जो पर्याप्त रूप में वैज्ञानिक ढंग से स्थापित हो चुका है तथा समाजशास्त्रीय व्याख्या के लिए एक विश्वसनीय आधार बन सकता है, सिद्धान्त कहलाता है।" इसी भाँति, **पारसन्स** (Parsons) के मतानुसार, "एक वैज्ञानिक सिद्धान्त को आनुभविकता के सन्दर्भ में तार्किक रूप में परस्पर सम्बन्धित सामान्य अवधारणाओं के समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"

विज्ञान का अन्तिम उद्देश्य सिद्धान्तों का निर्माण करके घटनाओं की व्याख्या करना है। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि सिद्धान्त सामाजिक वास्तविकता के बारे में ही अवलोकित प्रस्तावनाओं का सार है। समाजशास्त्र में प्रयोग की जाने वाली अवधारणाओं की अस्पष्टता के कारण अभी अधिक सिद्धान्तों का निर्माण नहीं किया गया है।

वे सिद्धान्त जो अधिक सुव्यवस्थित नहीं हैं, प्ररूप अथवा प्रतिरूप (Model) कहे जा सकते हैं। प्रतिरूप किसी सामाजिक घटना अथवा इकाई के व्यवहार के बारे में आनुभविक सिद्धान्त बनाने के लिए निर्मित कुछ सैद्धान्तिक कल्पनाएँ हैं। यह कहा जा सकता है कि प्रतिरूप किसी घटना अथवा इकाई का वर्णन मात्र नहीं है, अपितु उसकी प्रमुख विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करता है। प्रतिरूप द्वारा की जाने वाली व्याख्या अवलोकित घटना के विष्ले"ाण किए जाने वाले वास्तविक व्यवहार के अधिक समीप है।

2.3 शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण

सामाजिक शोध का अर्थ सामाजिक घटनाओं या तथ्यों के बारे में नवीन जानकारी प्राप्त करना, प्राप्त ज्ञान में वृद्धि करना अथवा जिन सिद्धान्तों एवं नियमों का निर्माण किया गया है उनमें किसी प्रकार का संशोधन करना है। यद्यपि शोध एवं सामाजिक शोध की अवधारणाओं को पिछली इकाई में स्पष्ट किया जा चुका है, तथापि यहाँ पर भी इसको संक्षेप में समझाने का प्रयास किया गया है। किसी वस्तु, व्यक्ति, घटना आदि के सम्बन्ध में सावधानीपूर्वक खोज करना तथा तथ्यों या सिद्धान्तों का पता लगाने हेतु विषय–सामग्री की जाँच–पड़ताल करना शोध कहलाता है।

सामाजिक शोध की परिभाषाएँ विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित प्रकार से दी हैं–

मोजर (Moser) के अनुसार–"सामाजिक प्रघटनाओं एवं समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए की गई व्यवस्थित खोज ही सामाजिक शोध है।" **बोगार्डस** (Bogardus) के अनुसार–"साहचर्य में अर्थात् एक साथ रहने वाले लोगों के जीवन में क्रियाशील अन्तर्निहित प्रक्रियाओं की खोज ही सामाजिक शोध है।" **यंग** (Young) के अनुसार–"सामाजिक शोध नवीन तथ्यों की खोज, पुराने तथ्यों के सत्यापन, उनके क्रमबद्ध पारस्परिक सम्बन्धों, कारणों की व्याख्या तथा उन्हें संचालित करने वाले प्राकृतिक नियमों के अध्ययन की सुनियोजित पद्धति है।" उनके अनुसार शोध के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं–प्रथम, नवीन तथ्यों का पता लगाना अथवा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच एवं परीक्षण करना; द्वितीय, उपयुक्त सैद्धान्तिक सन्दर्भ में उनके क्रमों, अन्तर्सम्बन्धों तथा कार्य–कारण व्याख्याओं का विश्लेषण करना; तथा तृतीय, नवीन वैज्ञानिक यन्त्रों, आवधारणाओं और सिद्धान्तों का निर्माण करना है जिनसे कि मानवीय व्यवहार का विश्वसनीय और प्रमाणित अध्ययन किया जा सके।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक शोध सामाजिक सम्बन्धों, घटनाओं तथा तथ्यों से सम्बन्धित है जिसमें इनकी व्याख्या, कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज, नवीन तथ्यों की खोज तथा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच वैज्ञानिक ढंग से करने का प्रयास किया जाता है। अतः सामाजिक शोध एक व्यवस्थित पद्धति है जिसमें सामाजिक तथ्यों की वास्तविकता, उनके कार्य–कारण सम्बन्धों एवं प्रक्रियाओं के बारे में क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। जब हम कहते हैं कि शोध से अभिप्राय वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान से है, तो हमारा अभिप्राय शोध में निरीक्षण,

परीक्षण, तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण के आधार पर वस्तुस्थिति की तार्किक ढंग से विवेचना करने से है।

2.4 शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध

शोध एवं सिद्धान्त परस्पर एक–दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। यदि यह कहा जाए कि दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध निम्नलिखित दो रूपों में समझा जा सकता है–

(अ) शोध को सिद्धान्त का योगदान–किसी भी विषय में सिद्धान्तों का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है तथा इन्हीं से शोध को दिशा–निर्देश मिलते हैं। समाजशास्त्र इनमें कोई अपवाद नहीं है क्योंकि इसमें भी समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को अधिक उपयोगी बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। **रोबर्ट के० मर्टन** (Robert K. Merton) के अनुसार समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध को निम्नांकित छह प्रकार से प्रभावित करता है–

(1) पद्धतिशास्त्र के विकास में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध के पद्धतिशास्त्र को प्रभावित करता है क्योंकि बिना पद्धतिशास्त्र के कोई भी शोध सम्भव नहीं है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध के निष्कर्षों को वास्तविक दिशा–निर्देश देता है।

(2) सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण विकसित करना–सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर हमें आनुभविक शोध की रूपरेखा का निर्माण करने में सहायता मिलती है। अन्य शब्दों में, सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण ही उपकल्पनाओं का निर्माण करने में सहायक है। सामान्यतः विद्वान् यह स्वीकार करते हैं कि समाजशास्त्रीय शोध अथवा उपकल्पना समाजशास्त्रीय सिद्धान्त से सम्बन्धित होनी चाहिए। अन्य शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि समाजशास्त्रीय सिद्धान्त यह निर्धारित करता है कि आनुभविक शोध अथवा उपकल्पना कैसी होनी चाहिए। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को एक विशिष्ट दृष्टिकोण प्रदान करता है।

(3) समाजशास्त्रीय अवधारणाओं का विश्ले"ाण में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त से हमें समाजशास्त्रीय अवधारणाओं का विष्ले"ाण करने में सहायता मिलती है। इन अवधारणाओं के स्पष्टीकरण के अभाव में न ही तो सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण है और न ही आनुभविक शोध अधिक उपयोगी हो सकता है। वस्तुतः अवधारणाएँ शोध में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करके तथा इनके निर्माण में विशेष रूप से सहायता देता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त समाजशास्त्र में हो रहे आनुभविक शोध में प्रयुक्त उपकल्पनाओं का एक प्रमुख आधार है। इससे अवधारणाओं के निर्माण में ही सहायता नहीं मिलती अपितु इनके वर्गीकरण में भी सहायता मिलती है जो कि (अर्थात् वर्गीकरण) शोध में विशेष महत्त्व रखता है।

(4) उत्तर–कारकीय समाजशास्त्रीय विश्ले"ाण में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त उत्तर–कारकीय समाजशास्त्रीय विष्ले"ाण में सहायक है अर्थात् यह आनुभविक शोध द्वारा संकलित तथ्यों के विष्ले"ाण में सहायता देता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त हमें अनेक ऐसी प्रतिस्थापनाएँ प्रदान करते हैं जिनके आधार पर तथ्यों को संकलित किया जा सकता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध द्वारा एकत्रित तथ्यों की व्याख्या करने तथा उनके बारे में भविष्यवाणी करने में सहायक है। तथ्यों के आधार पर समाजशास्त्री भविष्यवाणी कर सकते हैं, चाहे इसकी उपयोगिता सीमित ही क्यों न हो।

(5) आनुभविक सामान्यीकरण में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध के लिए अनेक आनुभविक सामान्यीकरण प्रस्तुत करता है जिन्हें हम शोध द्वारा प्रमाणित करते हैं। अतः **मर्टन** के अनुसार समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध के लिए अनेक प्रस्तावनाएँ प्रस्तुत करता है जिनको शोध के द्वारा प्रमाणित व पुनःप्रमाणित किया जा सकता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध

द्वारा प्राप्त विस्तृत एवं व्यापक ज्ञान को अमूर्त रूप में भी प्रस्तुत करता है। इस प्रकार, यह सामान्यीकरण के साथ–साथ विस्तृत ज्ञान के संक्षिप्तीकरण में भी सहायक है।

(6) नवीन समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों के निर्माण में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को दिशा प्रदान करके नवीन सिद्धान्तों के निर्माण में सहायता प्रदान करता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को केवल दृष्टिकोण प्रदान करने के साथ–साथ उसे एक निश्चित दिशा भी देता है। सिद्धान्त से ही हमें यह पता चलता है कि कौन–से कारण हमारी शोध समस्या की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। अतः समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध को दिशा प्रदान करता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध में रह गई कमियों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है ताकि इनको दूर करके अधिक विस्तृत एवं सार्वभौमिक सिद्धान्त बनाए जा सकें।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सिद्धान्त का प्रमुख कार्य क्रमबद्ध ज्ञान का संचय करना है तथा समाजशास्त्रीय सिद्धान्त इसमें कोई अपवाद नहीं है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के आधार पर उपकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है, नवीन तथ्यों का संकलन किया जाता है तथा पहले से निर्मित सिद्धान्त में संशोधन किया जाता है। इस प्रकार, समाजशास्त्रीय सिद्धान्त द्वारा आनुभविक शोध को दिए जाने वाले योगदान के परिणामस्वरूप ज्ञान की निरन्तर वृद्धि होती रहती है। नवीन तथ्यों के आधार पर सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा होती रहती है तथा कई बार नए सिद्धान्तों का विकास भी आनुभविक सिद्धान्त से प्राप्त तथ्यों के आधार पर ही होता है।

(ब) सिद्धान्त को शोध का योगदान–जिस प्रकार सिद्धान्त शोध में सहायक है, ठीक उसी प्रकार शोध भी सिद्धान्त के निर्माण में सहायक है। **मर्टन** के अनुसार सिद्धान्त के निर्माण में शोध की सक्रिय भूमिका होती है। उनके अनुसार समाजशास्त्र में सिद्धान्त को आनुभविक शोध का योगदान निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है–

(1) आकस्मिक खोज में सहायता देना–शोध समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का निर्माण करने में सहायक है। कई बार ऐसे शोध आकस्मिक या अप्रत्याशित खोज में सहायक होते हैं जिनका शोधकर्ता ने पहले से अनुमान ही नहीं लगाया था। मर्टन के मत में आनुभविक शोध से प्राप्त नए तथ्यों के आधार पर सामाजिक सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सकता है अथवा विद्यमान सिद्धान्त को आगे बढ़ाया जा सकता है।

(2) सैद्धान्तिक पुर्निनर्माण में सहायता देना–शोध समाजशास्त्रीय सिद्धान्त को पुनर्व्यवस्थित करने एवं सैद्धान्तिक पुर्निनर्माण करने में सहायक होता है। शोध के आधार पर ही हम प्रचलित धारणाओं का बार–बार अवलोकन करके उनकी प्रामाणिकता की जाँच करते हैं तथा प्रचलित सिद्धान्तों को एक नए साँचे में ढालने का प्रयास करते हैं।

(3) सैद्धान्तिक रुचि को नवीन मोड़ देने में सहायता देना–शोध सैद्धान्तिक रुचि को नवीन मोड़ देने में सहायता प्रदान करता है अर्थात् आनुभविक शोध में समाजशास्त्रीय सिद्धान्त का मार्गदर्शन करता है। **मर्टन** के मतानुसार शोध कार्य प्रचलित सिद्धान्तों को पुनः नए साँचे में ढालने एवं सैद्धान्तिक रुचि को नया मोड़ देने में अपना योगदान देता है।

(4) अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने में सहायता देना–शोध का समाजशास्त्रीय सिद्धान्त को सबसे प्रमुख योगदान यह है कि इससे समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की अनेक अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने में सहायता मिलती है। अवधारणाओं का स्पष्टीकरण समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए आवश्यक है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि सिद्धान्त एवं शोध दोनों घनिष्ठ रूप से परस्पर सम्बन्धित हैं तथा दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं। इन दोनों को सिक्के के ऐसे दो पहलू माना जा सकता है जिन्हें एक–दूसरे से अलग करना सम्भव नहीं है। एक ओर, सिद्धान्त शोध को प्रेरित करता है तो

दूसरी ओर, शोध से प्राप्त आँकड़े एवं तथ्य सिद्धान्तों के निर्माण में सहायक होते हैं। **सैल्टिज, जहोदा** एवं **अन्य विद्वानों** (Selltiz Jahoda and Others) के मतानुसार, ''सिद्धान्त तथा शोध का सम्बन्ध परस्पर सहयोग का होता है। सिद्धान्त उन क्षेत्रों की ओर ध्यान दिलाते हैं जिनमें शोध उपयोगी होता है। दूसरी ओर शोध से प्राप्त निष्कर्ष सिद्धान्तों का मूल्यांकन कर सकते हैं तथा नए सिद्धान्तों को बनाने एवं पुराने सिद्धान्तों को बदलने हेतु सुझाव दे सकते हैं। सैद्धान्तिक विचारों द्वारा प्रेरित शोध नवीन सैद्धान्तिक परिणाम उत्पन्न करता है जिससे नए शोधों हेतु मार्गदर्शन प्राप्त होता है तथा यह क्रम लगातार चलता रहता है। सैद्धान्तिक व्याख्या के अभाव में शोध कार्य तथा शोध के अभाव में सिद्धान्त बनाना सम्भव नहीं है।''

2.5 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध

प्रत्येक विषय की अपनी एक विषय–वस्तु होती है जिसका अध्ययन करने के लिए उस विषय में विशिष्ट पद्धतियाँ होती हैं। इन्हीं विशिष्ट पद्धतियों के आधार पर एक विषय को दूसरे विषय से पृथक् किया जाता है। समाजशास्त्र में भी विषय–वस्तु का अध्ययन कुछ विशिष्ट पद्धतियों की सहायता से किया जाता है। जो पद्धतियाँ संख्याओं एवं माप को महत्त्व देती हैं उन्हें हम गणनात्मक पद्धतियाँ कहते हैं। इन पद्धतियों में सामाजिक सर्वेक्षण का प्रमुख स्थान है। अवलोकन (सहभागी अवलोकन को छोड़कर), प्रश्नावली, अनुसूची तथा साक्षात्कार गणनात्मक पद्धतियाँ ही मानी जाती हैं। इन पद्धतियों द्वारा सूचना संकलन करने के पश्चात् सारणीयन किया जाता है तथा सांख्यिकीय विष्ले"ाण के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं। गुणात्मक पद्धतियाँ केवल गुणों को महत्त्व देती हैं संख्याओं को नहीं। इनमें अध्ययनरत् इकाइयों का वर्णन मात्र किया जाता है अर्थात् उनका केवल विवरण प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार का शोध वर्तमान स्थिति की व्याख्या तथा विवेचना प्रस्तुत करता है। इसका सम्बन्ध उन स्थितियों, व्यवहारों या सम्बन्धों से है जिनका अस्तित्व वर्तमान में है अथवा उन दृष्टिकोणों या मनोवृत्तियों से है जिनका वर्तमान में प्रचलन है। सहभागी अवलोकन, वैयक्तिक अध्ययन, अन्तर्वस्तु विष्ले"ाण तथा जीवन इतिहास गुणात्मक पद्धतियाँ मानी जाती हैं। इन पद्धतियों के प्रयोग से स्पष्ट है कि शोध गुणात्मक अथवा गणनात्मक किसी भी रूप में हो सकता है।

वस्तुतः शोध का प्रमुख लक्ष्य वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग द्वारा प्रश्नों के उत्तर खोजना है। इसका उद्देश्य अध्ययनरत समस्या के अन्दर छिपी यथार्थता का पता लगाना है या उस सब की खोज करना है जिसकी जानकारी समस्या के बारे में नहीं है। यद्यपि प्रत्येक शोध के अपने विशिष्ट लक्ष्य हो सकते हैं, तथापि इन्हें विद्वानों (यथा **सैल्टिज, जहोदा** एवं **अन्यों** तथा **सी० आर० कोठारी** आदि) ने मुख्य रूप से निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभाजित किया है–

(1) किसी घटना के बारे में जानकारी प्राप्त करना अथवा इसके बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करना (इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध कहते हैं);

(2) किसी व्यक्ति, परिस्थिति अथवा समूह की विशेषताओं का सही चित्रण करना (इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को वर्णनात्मक शोध कहते हैं);

(3) किसी वस्तु के घटित होने की आवृत्ति (Frequency) निर्धारित करना अथवा इसका किसी अन्य वस्तु के साथ सम्बन्ध निर्धारित करना (इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को निदानात्मक शोध कहते हैं) तथा

(4) विभिन्न चरों में कार्य–कारण सम्बन्धों वाली उपकल्पनाओं का परीक्षण करना (इस प्रकार के शोध को उपकल्पना–परीक्षण शोध अथवा प्रायोगिक शोध कहते हैं)।

अन्वेषणात्मक शोध का उद्देश्य अज्ञात तथ्यों की खोज करना अर्थात् तथ्यों के बारे में नवीन अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना है ताकि यथार्थ समस्या का निर्माण किया जा सके अथवा उपकल्पनाएँ बनाई जा

सकें। किसी संरचनात्मक अध्ययन करने से पहले शोधकर्ता द्वारा किसी प्रकरण के बारे में जानकारी प्राप्त करने, अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने, अग्रिम शोध के लिए प्राथमिकताओं का पता लगाने, यथार्थ परिस्थिति में शोध करने की व्यावहारिक सम्भावनाओं का पता लगाने अथवा महत्त्वपूर्ण समस्याओं का पता लगाने इत्यादि उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी अन्वेषणात्मक शोध किया जाता है। अन्वेषणात्मक अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य शोध के लिए समस्या का निर्माण करना अथवा शोध के लिए उपकल्पनाएँ बनाना है। वस्तुत: ये दोनों शोध के प्रमुख चरण माने जाते हैं। **सैल्टिज** तथा **जहोदा** आदि का कहना है कि ''अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना उस अनुभव को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है जो अधिक निश्चित शोध हेतु सम्बद्ध उपकल्पना के निरूपण में सहायक होगा।'' कई बार शोध समस्या के बारे में हमें बहुत कम जानकारी होती है अर्थात् हमें इसके सामाजिक महत्त्व, सैद्धान्तिक पहलुओं, व्यावहारिक स्वरूप तथा इससे सम्बन्धित विश्वसनीय आँकड़ों की उपलब्धता के बारे में कोई ज्ञान नहीं होता। ऐसी स्थिति में भी अन्वेषणात्मक शोध में लचीलापन (Flexibility) पाया जाता है।

वर्णनात्मक एवं निदानात्मक शोध परस्पर सम्बन्धित शोध हैं, क्योंकि प्रथम का उद्देश्य शोध समस्या से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करना है, जबकि द्वितीय (निदानात्मक) का उद्देश्य समस्या का निदान करना है। परन्तु दोनों एक नहीं हैं तथा इनमें स्पष्ट भेद पाया जाता है। वर्णनात्मक शोध का उद्देश्य समस्या के सम्बन्ध में पूर्ण, यथार्थ एवं विस्तृत तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना है। इसके द्वारा वास्तविक तथ्यों का संकलन किया जाता है और इन तथ्यों के आधार पर समस्या का वर्णनात्मक विवरण अथवा चित्रण प्रस्तुत किया जाता है। निदानात्मक शोध का उद्देश्य समस्या का निदान प्रस्तुत करना है। इसलिए यह अधिक संरचित होता है, उपकल्पनाओं द्वारा निर्देशित होता है तथा समस्या के उपचार इत्यादि पर अधिक बल देता है।

प्रायोगिक अथवा परीक्षणात्मक शोध प्रयोगशाला में प्रयोग की तरह दो चरों के परस्पर सम्बन्ध का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। इसमें एक नियन्त्रित (Controlled) समूह बनाया जाता है तथा दूसरा प्रायोगिक (Experimental) समूह। नियन्त्रित समूह को जैसे वह है वैसे ही रहने दिया जाता है, जबकि प्रायोगिक समूह में जिस कारक का प्रभाव देखना है उसका प्रकाशकरण (Exposure) किया जाता है। अध्ययन में वैज्ञानिक विधि के सभी चरण अपनाए जाते हैं। **चैपिन** (Chapin) के अनुसार, ''समाजशास्त्रीय शोध में परीक्षणात्मक प्ररचना की अवधारणा नियन्त्रण की दशाओं के अन्तर्गत निरीक्षण द्वारा मानवीय सम्बन्धों के व्यवस्थित अध्ययन की ओर संकेत करती है।''

सामाजिक विज्ञानों में किया जाने वाले शोध को इसकी प्रकृति एवं अन्वेषण हेतु प्रयुक्त पद्धतियों के आधार पर मुख्य रूप से दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है–गुणात्मक शोध (Qualitative) एवं गणनात्मक शोध (Quantitative)। गुणात्मक शोध से अभिप्राय उस शोध से है जिसका उद्देश्य किसी सामाजिक घटना के गुणों को उजागर करना होता है। यह एक प्रकार से वर्णनात्मक (Descriptive) अध्ययन होता है जिसमें सामाजिक घटना का वर्णन ज्यों का त्यों करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के शोध में मात्राओं अथवा संख्याओं का प्रयोग नहीं किया जाता है। गणनात्मक शोध, जिसे मात्रात्मक शोध भी कहा जाता है, वह शोध है जिसमें मात्राओं अथवा संख्याओं का प्रयोग किया जाता है। दोनों प्रकार के शोधों की अपनी पृथक्–पृथक् प्रविधियाँ हैं। उदाहरणार्थ–सहभागी अवलोकन, साक्षात्कार निर्देशिका, वैयक्तिक अध्ययन, जीवन इतिहास इत्यादि गुणात्मक शोध की प्रमुख प्रविधियाँ हैं, जबकि सामाजिक सर्वेक्षण, अवलोकन, प्रश्नावली, अनुसूची एवं साक्षात्कार आदि गणनात्मक शोध की प्रमुख प्रविधियाँ मानी जाती हैं।

गुणात्मक शोध में वैधता एवं विश्वसनीयता–गुणात्मक शोध की यह माँग रहती है कि संकलित आँकड़े विश्वसनीय एवं वैध हों। विश्वसनीयता का सम्बन्ध पुनरावृत्ति (Repeatability) से है अर्थात् यदि दो शोधकर्ता एक जैसे निष्कर्ष निकालते हैं अथवा एक शोधकर्ता द्वारा निकाले गए निष्कर्ष

दो समयों पर सुसंगत (Consistent) होते हैं, तो ऐसे अध्ययनों को विश्वसनीय कहा जाता है। यदि माप में निदर्शन त्रुटि (Sampling error) पाई जाती है तो उसे अविश्वसनीय माना जाता है। विश्वसनीयता की एक उच्च एवं निम्न सीमा होती है। गुणात्मक अध्ययनों में आँकड़ों की विश्वसनीयता एक गम्भीर समस्या मानी जाती है क्योंकि गुणात्मक प्रकृति के कारण इनकी विश्वसनीयता की परख करना सम्भव नहीं है। चूँकि ऐसे अध्ययनों में कोई वस्तुनिष्ठ पैमाना प्रयोग में नहीं लाया जाता। इसलिए विश्वसनीयता का प्रश्न अधिक उठाया जाता है। गुणात्मक शोध की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारणों में किसी अध्ययनरत समूह की संरचना का बाह्य एवं आन्तरिक कारणों के प्रभावों से निरन्तर परिवर्तित होना, इस संरचना का समय के अन्तराल में अत्यधिक परिवर्तित हो जाना, अध्ययन सम्बन्धी कसौटी के रूप में अन्तर आ जाना आदि प्रमुख हैं।

गुणात्मक अध्ययनों की विश्वसनीयता को मापने की भी निम्नलिखित तीन पद्धतियाँ हैं–

(1) परीक्षा–पुनर्परीक्षा (Test-retest) **पद्धति**–विश्वसनीयता को मापने की इस पद्धति में एक ही माप को अध्ययनरत समूह पर दो समयों पर लागू किया जाता है। यदि दोनों समयों पर निष्कर्ष एक समान होते हैं, तो उस माप को विश्वसनीय मान लिया जाता है।

(2) तुल्यनीय प्रकार (Equivalent form) **पद्धति**–इस पद्धति में मापन हेतु दो एक समान मापकों का निर्माण किया जाता है। यदि दोनों द्वारा एक समान निष्कर्ष प्राप्त होते हैं तो उन्हें विश्वसनीय मान लिया जाता है।

(3) आन्तरिक संगति (Internal consistency) **पद्धति**–यह सर्वाधिक प्रचलित पद्धति है। इसमें माप में सम्मिलित प्रश्नों को स्वेच्छिक रूप में दो समूहों में विभाजित किया जाता है। इन दोनों समूहों में पाया जाने वाला सहसम्बन्ध आन्तरिक संगति तथा माप की विश्वसनीयता को दर्शाता है।

विश्वसनीयता के विपरीत, वैधता का सम्बन्ध सूचना संकलित करने में प्रयुक्त प्रविधि एवं पद्धति की यथार्थता या परिशुद्धता एवं सत्यता से है। इसमें दो बातें महत्त्वपूर्ण मानी जाती हैं–प्रथम यह कि चयनित प्रविधि या पद्धति द्वारा उसी चीज का अध्ययन किया जा रहा है जिसका कि हम करना चाहते हैं या नहीं तथा दूसरे यह अध्ययन सही रूप से किया जा रहा है या नहीं। गुणात्मक शोध में प्रविधि की वैधता को स्थापित करने में निम्नलिखित कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है–

(1) सामाजिक अवरोधों के कारण एक समूह के व्यक्ति प्रायः अपनी स्वाभाविक नापसन्दों को व्यक्त नहीं करते हैं।

(2) सामान्यतया सूचनादाता उचित सम्पर्क के अभाव में सही सूचनाएँ नहीं देते हैं।

(3) शोधकर्ता एवं सूचनादाता की स्थिति में अन्तर के परिणामस्वरूप दोनों में वार्तालाप के स्तर में तारतम्य स्थापित नहीं रह पाता। यदि सूचनादाता में निम्नता की भावना (Inferiority complex) आ जाती है तो वह सूचनाओं को बढ़ा चढ़ाकर देने का प्रयास करता है।

(4) सूचनादाता अल्पसंख्यक समूहों के प्रति प्रायः अपनी स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं को व्यक्त करने में संकोच करते हैं।

गुणात्मक शोधों में बहुधा किसी एक ही प्रविधि द्वारा आँकड़ों का संकलन किया जाता है जिससे आँकड़ों की विश्वसनीयता को प्रमाणित नहीं किया जा सकता है। इसलिए आँकड़ों की विश्वसनीयता बढ़ाने हेतु एक से अधिक प्रविधियों एवं स्रोतों का प्रयोग किया जाना अनिवार्य है। निर्वचन करते समय व्यक्तिनिष्ठता से बचाव भी अध्ययन की विश्वसनीयता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। वैधता हेतु गुणात्मक शोध में उपयुक्त शोध प्रविधि का चयन किया जाना तथा उसका किसी अन्य सम्पूरक प्रविधि द्वारा सत्यापन अत्यन्त आवश्यक है। निर्वचन एवं मुख्य निष्कर्षों के बारे में किसी विशेषज्ञ से विचार–विमर्श भी गुणात्मक शोध को अधिक वैध बना सकता है। गुणात्मक शोध की विश्वसनीयता एवं वैधता के बारे में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं–प्रथम, प्रासंगिक शोध प्रश्नों अथवा समस्या का निर्माण करना तथा द्वितीय,

उन प्रश्नों का उत्तर देने अथवा उस समस्या के समाधान हेतु सर्वाधिक उपयुक्त प्रविधि का चयन करना। यदि इन दोनों में कोई चूक नहीं होती तो गुणात्मक शोध विश्वसनीय एवं वैध हो सकता है।

गणनात्मक (जिसे परिमाणनात्मक भी कहा जाता है) शोध का सम्बन्ध विभिन्न चरों में सम्बन्धों की स्थापना से है। यह चर भार, समय, निष्पादन, उपचार, आधुनिकीकरण इत्यादि कुछ भी हो सकते हैं। इन चरों का सूचनादाताओं के निदर्शन के आधार पर मापन करने का प्रयास किया जाता है। चरों में पाए जाने वाले सम्बन्धों का प्रदर्शन सांख्यिकीय पद्धतियों; जैसे–सहसम्बन्ध, साहचर्य, प्रतिगमन इत्यादि द्वारा किया जाता है। इस प्रकार के अध्ययनों पर वे विद्वान् ज्यादा बल देते हैं जिनकी मान्यता है कि सामाजिक सिद्धान्तों के निर्माण में प्राकृतिक विज्ञानों की पद्धतियाँ उपयोगी हैं तथा समाजशास्त्र में इनका प्रयोग किया जा सकता है। इस श्रेणी के विद्वान् समाज का एक ऐसा विज्ञान बनाने पर बल देते हैं जोकि उन्हीं सिद्धान्तों एवं प्रक्रियाओं पर आधारित होगा जो प्राकृतिक विज्ञानों (जैसे–रसायनशास्त्र एवं जीवविज्ञान) में प्रचलित हैं। व्यक्ति का व्यवहार, द्रव्य के व्यवहार की भाँति, वस्तुनिष्ठ रूप से मापा जा सकता है। जिस प्रकार द्रव्य का व्यवहार भार, तापमान एवं दबाव जैसे मापों द्वारा मापा जा सकता है, ठीक उसी प्रकार से मानव व्यवहार को वस्तुनिष्ठ रूप से मापने की पद्धतियों का विकास करना सम्भव है। ऐसे विद्वान् यह भी स्वीकार करते हैं कि मानव व्यवहार को उसी प्रकार से समझा जा सकता है जिस प्रकार से द्रव्य के व्यवहार को समझा जा सकता है। द्रव्य की भाँति, व्यक्ति भी बाहरी उद्दीपनों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं तथा उनके इस व्यवहार को इसी प्रतिक्रिया के रूप में समझा जा सकता है।

सम्बन्धों के गणनात्मक सम्बन्धी अध्ययन मुख्य रूप से निम्नलिखित दो प्रकार के होते हैं–

(1) वर्णनात्मक अध्ययन–इस प्रकार के अध्ययनों में व्यवहार या परिस्थितियों को परिवर्तित करने हेतु कोई प्रयास नहीं किया जाता है। इन्हें उसी रूप में मापने का प्रयास किया जाता है जिस रूप में वे विद्यमान होती हैं। इस प्रकार के अध्ययनों को प्रेक्षणनात्मक अध्ययन (Observational studies) भी कहा जाता है क्योंकि इसमें अध्ययन–वस्तु का उसमें बिना किसी हस्तक्षेप के अवलोकन किया जाता है।

(2) प्रायोगिक अध्ययन–प्रायोगिक अध्ययनों में दो चरों में सम्बन्ध स्थापित करने हेतु उनका मापन किया जाता है तथा फिर नियन्त्रण एवं हस्तक्षेप कर पुनः मापन किया जाता है ताकि यह ज्ञात हो सके कि नियन्त्रण एवं हस्तक्षेप का परिणाम क्या हुआ। इस प्रकार के अध्ययनों में एक चर को नियन्त्रित चर तथा दूसरे को आश्रित चर कहा जाता है। इन्हें देशान्तरीय (Longitudinal) अथवा पुनरावृत्ति मापन अध्ययन भी कहा जाता है।

गणनात्मक शोध एवं अनुमापन से सम्बन्धित अध्ययनों की प्रमुख मान्यताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) विभिन्न चरों में पाए जाने वाले सम्बन्धों का यथार्थ मापन सम्भव है।

(2) सामाजिक व्यवहार एवं घटनाओं से सम्बन्धित अध्ययनों में भी कारण–प्रभाव (Cause-effect) सम्बन्धों की स्थापना करना सम्भव है।

(3) मानव व्यवहार एवं सामाजिक घटनाओं के व्यवहार एवं द्रव्य के व्यवहार में अनेक समरूपताएँ पाई जाती हैं।

(4) मूर्त सामाजिक घटनाओं के साथ–साथ अनेक अमूर्त विषयों; जैसे–सामाजिक संश्लिष्टता, सामाजिक दूरी, मूल्यों में भिन्नता इत्यादि का परिमाणात्मक अध्ययन सम्भव है तथा इनके माप हेतु पद्धतियाँ उपलब्ध हैं अथवा उनका निर्माण किया जा सकता है।

(5) पैमानों के निर्माण द्वारा घटना के विभिन्न अंगों अथवा पक्षों में पाए जाने वाले तारतम्य को ज्ञात किया जा सकता है।

(6) परिमाणात्मक अध्ययनों में मापन हेतु अपनाए गए पैमानों की विश्वसनीयता की जाँच अनेक पद्धतियों द्वारा की जा सकती है। इन पद्धतियों में परीक्षा–पुनर्परीक्षा (Test-retest) पद्धति, विविध स्वरूप (Multiple form) पद्धति तथा दो भागों में बाँटने (Split-half) की पद्धति प्रमुख हैं।

(7) सामाजिक शोधों में अपनाए जाने वाले मापों की प्रामाणिकता की भी जाँच की जा सकती है। **गुड** एवं **हैट** ने पैमानों की प्रामाणिकता की जाँच करने की निम्नलिखित चार पद्धतियों का उल्लेख किया है–

(अ) तार्किक प्रमाणीकरण (Logical validation)–इस पद्धति के अन्तर्गत यदि पैमाना तर्क एवं सामान्य ज्ञान के अनुकूल प्रतीत होता है तो उसे प्रमाणित माना जा सकता है। यद्यपि यह पद्धति सर्वाधिक प्रयोग में लाई गई है, तथापि **गुड** एवं **हैट** का कहना है कि केवल इसी पद्धति द्वारा पैमाने की प्रामाणिकता की जाँच करना पर्याप्त नहीं है। पैमानों के सन्तोषजनक प्रयोग के लिए तार्किक प्रमाणीकरण के अतिरिक्त अन्य विधियों की भी आवश्यकता होती है।

(ब) पंचों की राय (Jury opinion)–यह पद्धति भी तार्किक प्रमाणीकरण का प्रसार–मात्र है क्योंकि इसमें तर्क की पुष्टि पैमाना लागू किए जाने वाले व्यक्तियों के चुने हुए समूह द्वारा की जाती है। पैमाने द्वारा प्रमाणित परिणामों को विशेषज्ञों या पंचों के सामने रखा जाता है। यदि उनकी राय में परिणाम ठीक है तो पैमाने को प्रमाणित मान लिया जाता है।

(स) परिचित समूह (Known groups)–इस पद्धति में विशेषज्ञों की अपेक्षा पैमाने का प्रयोग उन समूहों पर किया जाता है जिनके विषय में हम पहले से परिचित होते हैं। उदाहरणार्थ–यदि चर्च के बारे में मनोवृत्तियों को मापना है तो पैमाने का प्रयोग पहले चर्च जाने वाले समूह पर किया जाएगा, फिर चर्च न जाने वाले समूह पर किया जाएगा। यदि दोनों परिचित परन्तु विरोधी समूहों से प्राप्त परिणामों की तुलना में एक–दूसरे के विपरीत परिणाम मिलते हैं तो पैमाने को प्रामाणिक माना जा सकता है।

(द) स्वतन्त्र मापदण्ड (Independent criteria)–इसमें पैमाने की प्रामाणिकता की जाँच करने के लिए उसे विभिन्न स्वतन्त्र कारकों पर भी लागू किया जाता है। यदि घटना तथा उससे सम्बन्धित विभिन्न स्वतन्त्र कारकों द्वारा एक समान परिणाम प्राप्त होते हैं तो पैमाने को प्रामाणिक माना जा सकता है।

यद्यपि गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध परस्पर विपरीत मान्यताओं पर आधारित होते हैं, तथापि सामाजिक यथार्थता को समझने हेतु इनका मिश्रित रूप भी प्रयोग में लाया जा सकता है। हो सकता है कि शोध का एक भाग गुणात्मक प्रकृति का हो, जबकि दूसरे भाग में गुणात्मक आँकड़ों की पुष्टि हेतु गणनात्मक शोध का सहारा लिया जाए। जैसे–जैसे शोध में प्रयुक्त पद्धतियों का परिष्कार होता जा रहा है, वैसे–वैसे शोध को अधिक से अधिक तार्किक, विश्वसनीय एवं प्रामाणिक बनाने हेतु गुणात्मक एवं गणनात्मक दोनों प्रकार की पद्धतियों का प्रयोग किया जाने लगा है।

2.6 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में अन्तर

गुणात्मक शोध मुख्य रूप से अन्वेषणात्मक शोध होता है। इसका प्रयोग कारणों, मतों एवं प्रेरणाओं का पता लगाने के लिए किया जाता है। यह समस्या के बारे में अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है अथवा नवीन विचार या उपकल्पना विकसित करने में सहायता प्रदान करता है। इससे गणनात्मक शोध में सहायता प्राप्त होती है। गुणात्मक शोध का प्रयोग चिन्तन एवं मतों में पाई जाने वाली प्रवृत्तियों का पता लगाने तथा समस्या के बारे में गहराई तक पहुँचने हेतु भी किया जाता है। गुणात्मक सामग्री संकलन करने की पद्धतियाँ असंरचित अथवा अर्द्धसंरचित होती हैं। कुछ सामान्य पद्धतियाँ सामूहिक वार्तालाप, व्यक्तिगत साक्षात्कार, वैयक्तिक अध्ययन, जीवन इतिहास, नृजातीय वर्णन तथा सहभागी अवलोकन मानी जाती हैं। इस प्रकार के शोध में निर्दशन का आकार विशेष रूप से लघु होता है तथा

सूचनादाताओं का चयन निर्धारित संख्या के अनुसार किया जाता है। अधिकतर विद्वान् गुणात्मक शोध को असंरचित एवं अन्वेषणात्मक पद्धति मानते हैं जिसकी सहायता से जटिल प्रघटनाओं को समझने का प्रयास किया जाता है। ऐसे शोध का उद्देश्य गुणात्मक शोध हेतु विचार अथवा उपकल्पना निर्मित करना भी हो सकता है।

गुणात्मक शोध के विपरीत गणनात्मक शोध नम्बरों से सम्बन्धित सामग्री के प्रयोग द्वारा समस्या को परिमाणात्मक स्वरूप प्रदान करने का प्रयास करता है ताकि सामग्री को सांख्यिकीय रूप में समझने हेतु रूपान्तरित किया जा सके। इसमें मनोवृत्तियों, मतों, व्यवहार तथा अन्य चरों को परिमाणात्मक दृष्टि से समझने का प्रयास किया जाता है। गणनात्मक शोध में निर्दशन बृहत् आकार का होता है। सामग्री के संकलन हेतु सामाजिक सर्वेक्षण, साक्षात्कार, दूरभाष साक्षात्कार, अनुसूची जैसी पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है।

गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में पाए जाने वाले अन्तर को निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

अन्तर का बिन्दु	गुणात्मक शोध	गणनात्मक शोध
प्रकृति	समग्र (Holistic)	विशेषीकृत (Particularistic)
दृष्टिकोण	व्यक्तिनिष्ठ (Subjective)	वस्तुनिष्ठ (Objective)
शोध का प्रकार	अन्वेषणात्मक (Exploratory)	निर्णयात्मक (Conclusive)
तर्क	आगमनात्मक (Inductive)	निगमनात्मक (Deductive)
निर्दशन	उद्देश्यपूर्ण (Purposive)	दैव (Random)
समग्री	मौखिक (Verbal)	मापन योग्य (Measurable)
अन्वेषण	प्रक्रिया–केन्द्रित (Process-oriented)	परिणाम–केन्द्रित (Result-oriented)
उपकल्पना	निर्मित (Generated)	प्रमाणित (Tested)
विष्ले"ाण के तत्त्व	शब्द, चित्र एवं वस्तुएँ (Words, pictures and objects)	संख्यात्मक सामग्री (Numerical data)
उद्देश्य	अनवरत प्रक्रियाओं में प्रयुक्त विचारों का अन्वेषण एवं खोज (To explore and discover ideas used in the ongoing processes.)	चरों में कार्य–कारण सम्बन्धों का परीक्षण (To examine cause and effect relationship between variables.)
पद्धतियाँ	गहन साक्षात्कार, समूह वार्तालाप जैसी असंरचित पद्धतियाँ (Non-structured techniques like In-depth interviews, group discussions etc.)	सर्वेक्षण, प्रश्नावली, अवलोकन जैसी संरचित पद्धतियाँ (Structured techniques such as surveys, questionnaires and observations.)
परिणाम	प्रारम्भिक समझ विकसित करना (Develops initial understanding)	अन्तिम कार्यवाही हेतु सुझाव देना (Recommends final course of action)

उपर्युक्त तालिका से गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में पाए जाने वाले सभी प्रकार के अन्तर स्पष्ट हो जाते हैं।

2.7 सारांश

सिद्धान्त वैज्ञानिक शोध का एक महत्त्वपूर्ण चरण है। इसे विज्ञान का उपकरण भी माना जाता है क्योंकि इसकी सहायता से संकलित तथ्यों को सुव्यवस्थित करने, वर्गीकृत करने तथा उनमें परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने हेतु अवधारणात्मक प्रारूप अथवा ढाँचा प्राप्त होता है। क्योंकि सिद्धान्तों का निर्माण शोध द्वारा प्रमाणित तथ्यों द्वारा किया जाता है, इसलिए सिद्धान्त एवं शोध परस्पर सम्बन्धित हैं। मर्टन जैसे विद्वानों ने इन दोनों को एक–दूसरे को प्रोत्साहन देने वाले ही नहीं, अपितु एक–दूसरे पर आश्रित भी माना है। समाजशास्त्र में शोध के अनेक प्रकार के स्वरूपों का प्रयोग किया जाता है। आज अधिकांश विद्वान् गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में विभेद करने लगे हैं। गुणात्मक शोध सामाजिक वास्तविकता के गुणों के वर्णन से सम्बन्धित होता है तथा इसमें सांख्यिकीय पद्धतियों का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसके विपरीत गणनात्मक शोध मात्राओं से सम्बन्धित होता है तथा इसमें सांख्यिकीय पद्धतियाँ प्रमुख भूमिका निभाती हैं। इन दो प्रकार के शोधों के आधार पर समाजशास्त्र में आँकड़ों के संकलन हेतु प्रयुक्त पद्धतियों को भी गुणात्मक एवं गणनात्मक श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। गुणात्मक शोध में अधिकतर सहभागी अवलोकन, जीवन इतिहास, वैयक्तिक अध्ययन, वंशावली आदि पद्धतियों का प्रयोग होता है, जबकि गणनात्मक शोध में प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार, असहभागी, अवलोकन जैसी पद्धतियाँ ही आँकड़ों के संकलन हेतु प्रयोग में लायी जाती हैं। आज अनेक विद्वान् यह मानने लगे हैं कि सामाजिक यथार्थता को सामाजिक ढंग से समझने हेतु इन दोनों प्रकार के शोधों के मिश्रित रूप को अपनाया जाना चाहिए।

2.8 शब्दावली

सामाजिक शोध – सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण के वैज्ञानिक प्रयास को सामाजिक शोध कहा जाता है।

सिद्धान्त – एक सिद्धान्त को परस्पर सम्बन्धित प्रस्तावनाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनका आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है।

गुणात्मक शाध – गुणात्मक शोध से अभिप्राय मुख्य रूप से ऐसे अन्वेषणात्मक शोध से है जिसका प्रयोग कारणों, मतों एवं प्रेरणाओं का पता लगाने के लिए किया जाता है।

गणनात्मक शोध – गणनात्मक शोध वह है जो नम्बरों से सम्बन्धित सामग्री के प्रयोग द्वारा समस्या को परिमाणात्मक स्वरूप प्रदान करता है ताकि सामग्री को सांख्यिकीय रूप में समझा जा सके।

2.9 अभ्यास प्रश्न

7. सामाजिक शोध एवं सिद्धान्त की अवधारणाएँ स्पष्ट कीजिए।
8. सिद्धान्त किसे कहते हैं? इसमें तथा शोध में पाए जाने वाले परस्पर सम्बन्धों की विवेचना कीजिए।
9. सामाजिक शोध को परिभाषित कीजिए तथा गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में भेद स्पष्ट कीजिए।
10. गुणात्मक शोध से आप क्या समझते हैं? यह गणनात्मक शोध से किस प्रकार भिन्न है? स्पष्ट कीजिए।

11. गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध पर एक विस्तृत लेख लिखिए।
12. मर्टन के विचारों के सन्दर्भ में शोध एवं सिद्धान्त में पाई जाने वाली पारस्परिकता की व्याख्या कीजिए।

2.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

G. M. Fisher, Quoted in H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New York.

P. V. Young (1966), **Scientific Social Surveys and Research : An Introduction to the Background, Content, Methods, Principles and Analysis of Social Studies**, Prentice-Hall, Englewood Cliffs, N.J.

Bernard S. Phillips (1976), **Social Research : Strategy and Tactics**, The Macmillan Company, New York.

C. A. Moser and G. Kalton (1971), **Survey Methods in Social Investigation**, Heinemann, London.

C. R. Kothari (1996), Research Methodology : Methods and Techniques, Surjeet Publication, New Delhi.

Claire Selltiz, Marie Jahoda, Morton Deutsch and Stuart Cook (1965), **Research Methods in Social Relations**, Holt, Rinehart and Winston, New York.

E. S. Bogardus (1964), **Sociology**, The Macmillan Company, New York.

F. Stuart Chapin (1947), **Experiments in Sociological Research**, Harper and Bros, New York.

H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New York.

Hans L. Zetterberg (1976), Quoted in Bernard S. Phillips, **Social Research : Strategy and Tactics**, The Macmillan Company, New York, p. 57.

Nan Lin (1976), **Foundations of Social Research**, McGraw-Hill Book Company, New York.

Robert K. Merton (1966), ‘‘The Sociologist as Empiricist’’ in Alex Inkeles (ed.), **Readings on Modern Sociology**, Prentice Hall, New York.

Robert K. Merton (1968), **Social Theory and Social Structure**, The Free Press, New York.

Talcott Parsons (1951), **The Social System**, The Free Press, Glencoe, Illinois.

W. J. Goode and P. K. Hatt (1965), **Methods in Social Research**, McGraw-Hill Book Company, New York.

इकाई 3 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता
Objectivity & Subjectivity in Social Research

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ
3.3 वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित समस्याएँ
3.4 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचार
3.5 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता एवं महत्त्व
3.6 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपाय
3.7 सारांश
3.8 शब्दावली
3.9 अभ्यास प्रश्न
3.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं को समझाने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही वस्तुनिष्ठता की समस्याओं, इसकी आवश्यकता तथा इसे बनाए रखने के उपायों को स्पष्ट करना भी इस इकाई का उद्देश्य है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं को समझ पाएँगे;
- वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित समस्याओं की व्याख्या कर पाएँगे;
- वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचारों को समझ पाएँगे;
- सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता एवं महत्त्व को स्पष्टतया समझ पाएँगे; तथा
- सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपायों को समझ पाएँगे।

3.1 प्रस्तावना

समाज"ाास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है। विज्ञान दो तरह के होते है–प्रथम, प्राकृतिक विज्ञान तथा द्वितीय, सामाजिक विज्ञान। प्राकृतिक विज्ञान प्रकृति अथवा प्राकृतिक घटनाओं से सम्बन्धित होते हैं, जबकि सामाजिक विज्ञान समाज के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करते हैं। समाज"ाास्त्र ही एकमात्र सामाजिक विज्ञान नहीं है अपितु अर्थ"ाास्त्र, राजनीति"ाास्त्र, मनोविज्ञान, समाज–कार्य, मानव"ाास्त्र तथा इतिहास इत्यादि भी सामाजिक विज्ञान हैं। अतः समाज"ाास्त्र सामाजिक विज्ञानों में से एक विज्ञान है। सामाजिक विज्ञानों में प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति प्रामाणिकता लाना कठिन है। समाज विज्ञानों के नियम प्राकृतिक विज्ञानों के नियमों की भाँति अटल नहीं होते, वे तो सामाजिक व्यवहार के सम्बन्ध में सम्भावित प्रवृत्ति को प्रकट करते हैं। ऐसी स्थिति के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं; जैसे–सामाजिक प्रघटना का

स्वभाव, ठोस मापदण्डों का विकसित न होना आदि। इन्हीं कारणों में एक प्रमुख समस्या वस्तुनिष्ठता की भी है। किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन एवं अनुसन्धान की सफलता की पूर्वपेक्षित शर्त वस्तुनिष्ठता है। इसके अभाव में शोध के द्वारा प्राप्त निष्कर्षों की वि"वसनीयता एवं प्रामाणिकता सन्दिग्ध हो जाती है। यही कारण है कि समाज"ाास्त्र सहित सभी समाज विज्ञानों में प्रारम्भ से ही इस समस्या पर विचार किया जाता रहा है।

सामाजिक शोध का उद्दे"य किसी घटना का वैज्ञानिक विधि द्वारा अध्ययन करके उसे यथार्थ रूप से समझना है। यह उद्दे"य तभी सम्भव हो सकता है यदि शोधकर्ता घटना के अध्ययन को अपने विचारों से प्रभावित न होने दे। अन्य शब्दों में, घटना के वस्तुनिष्ठ अध्ययन द्वारा ही उसे यथार्थ रूप से समझा जा सकता है। यदि विभिन्न शोधकर्ता एक घटना का अध्ययन कर एक समान निष्कर्ष निकालते हैं, तो हम उस अध्ययन को वस्तुनिष्ठ अध्ययन कह सकते हैं। यदि उनके निष्कर्षों में काफी अन्तर है, तो इसका अर्थ यह है कि शोधकर्ताओं के विचारों ने अध्ययन को प्रभावित किया है, क्योंकि जब घटना एक है तो उसके अध्ययन के बारे में एक समान निष्कर्ष होने चाहिए।

क्या सामाजिक शोध पूर्णतः वस्तुनिष्ठ हो सकता है या नहीं? यह प्रारम्भ से ही सामाजिक विज्ञानों में एक वाद–विवाद एवं मार्मिक चर्चा का विषय रहा है और आज भी इसके बारे में मतैक्य का अभाव पाया जाता है। कुछ विद्वानों (यथा **मैक्स वेबर**) का कहना है कि सामाजिक–सांस्कृतिक घटनाओं की प्रकृति ही ऐसी है कि इनका पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ अध्ययन किया ही नहीं जा सकता, जबकि अनेक अन्य विद्वानों (यथा **इमाइल दुर्खीम**) का विचार है कि समाज"ाास्त्रीय अध्ययनों में वस्तुनिष्ठता रखना सम्भव है। दुर्खीम ने इस बात का दावा ही नहीं किया अपितु धर्म, श्रम–विभाजन एवं आत्महत्या जैसे सामाजिक तथ्यों का वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने में सफलता भी प्राप्त की। परन्तु फिर भी अनेक विद्वान् यह मानते हैं कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति प्राकृतिक घटनाओं की प्रकृति से भिन्न है जिसके कारण इनका पूर्ण वस्तुनिष्ठ अध्ययन सम्भव नहीं है। हाँ, शोधकर्ता अनेक सावधानियों का प्रयोग कर अपने विचारों के प्रभावों अर्थात् व्यक्तिनिष्ठता या व्यक्तिपरकता (Subjectivity) को कम–से–कम करने का प्रयास कर सकता हैं ।

3.2 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

वस्तुनिष्ठता का अभिप्राय घटना का यथार्थ या वास्तविक रूप में अर्थात् उसी रूप में, जिसमें वे हैं, वर्णन करना है। यह एक तरह से वैज्ञानिक भावना है जो शोधकर्ता को उसके पूर्व दृष्टिकोणों से उसके अध्ययन को प्रभावित करने से रोकती है। यदि कोई शोधकर्ता किसी घटना का वर्णन उसी रूप से करता है जिसमें कि वह विद्यमान है, चाहे उसके बारे में शोधकर्ता के विचार कुछ भी क्यों न हों, तो हम इसे वस्तुनिष्ठ अध्ययन कह सकते हैं।

दैनिक जीवन की भाषा में वस्तुनिष्ठ शब्द का आ"ाय पूर्वाग्रह–रहित, तटस्थ या केवल तथ्यों पर आधारित होता है। किसी भी वस्तु के बारे में वस्तुनिष्ठ होने के लिए हमें वस्तु के बारे में अपनी भावनाओं या मनोवृत्तियों को अव"य अनदेखा करना चाहिए। इसीलिए वस्तुनिष्ठता तथ्यों को वैसे ही प्रस्तुत करने में सहायक है जैसे कि वे हैं। जब एक भू–वैज्ञानिक चट्टानों का अध्ययन करता है अथवा एक वनस्पति"ाास्त्री पौधों का अध्ययन करता है तो उनके व्यक्तिगत पूर्वाग्रह या मान्यताएँ उनके अध्ययन को प्रभावित नहीं करती हैं। वे स्वयं उस संसार का हिस्सा नहीं होते जिनका वे अध्ययन करते हैं। इसके विपरीत, समाज"ाास्त्री एवं अन्य समाज वैज्ञानिक उस संसार का अध्ययन करते हैं जिनमें वे स्वयं रहते हैं। इसलिए उनके द्वारा किया जाने वाला अध्ययन 'व्यक्तिनिष्ठ' होता है। उदाहरणार्थ, पारिवारिक सम्बन्धों का अध्ययन करने वाला समाज"ाास्त्री भी स्वयं एक परिवार का सदस्य होता है तथा उसके

अनुभवों का उसके अध्ययन पर प्रभाव पड़ सकता है। हो सकता है कि वह पारिवारिक सम्बन्धों के बारे में अपने कुछ मूल्य अथवा पूर्वाग्रह रखता हो। इसीलिए सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना एक प्रमुख समस्या है। प्रमुख विद्वानों ने इसकी परिभाषाएँ निम्नलिखित प्रकार से दी हैं–

कार (Carr) के अनुसार–"सत्य की वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय है कि दृष्टि विषयक जगत किसी व्यक्ति के प्रयासों, आ"ाओं या भय से स्वतन्त्र एक वास्तविकता है, जिसे हम सहज ज्ञान एवं कल्पना से नहीं बल्कि वास्तविक अवलोकन के द्वारा प्राप्त करते हैं।" **ग्रीन** (Green) के अनुसार–"वस्तुनिष्ठता प्रमाण का निष्पक्षता से परीक्षण करने की इच्छा एवं योग्यता है।" **फेयरचाइल्ड** (Fairchild) "वस्तुनिष्ठता का अर्थ तथ्यों को पक्षपात तथा उद्दे"य के आधार पर नहीं, बल्कि प्रमाण एवं तर्क के आधार पर बिना किसी सुझाव या पूर्व–धारणाओं के, सही पृष्ठभूमि में देखने की योग्यता है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि वस्तुनिष्ठता किसी घटना का निष्पक्ष एवं तटस्थ रूप से अध्ययन करने की भावना एवं क्षमता है जो शोधकर्ता को अध्ययन करते समय उसके अपने वि"वासों, आ"ाओं एवं भय से दूर रखती है। वस्तुनिष्ठता शोध में वैयक्तिक पक्षपात का विरोध करता है। यह शोध के प्रति वह दृष्टिकोण है जिसके अनुसार किसी घटना से सम्बन्धित तथ्यों को समझने हेतु शोधकर्ता अपने पूर्वाग्रहों, मूल्यों, मनोवृत्तियों आदि की अपेक्षा साक्ष्य एवं तर्क के आधार पर निष्पक्ष विष्ले"ाण करने का प्रयास करता है। सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना इन्हें विज्ञान की श्रेणी में जाने के लिए अत्यन्त अनिवार्य है।

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग के विरोधी विद्वान् यह तर्क देते हैं कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति ही ऐसी है कि उन्हें वस्तुनिष्ठ रूप में समझना ज्यादा उचित है। **मैक्स बेवर** जैसे विद्वानों ने इस तथ्य पर बल दिया है कि किसी भी घटना को समझने हेतु उसके अन्तर्निहित अर्थ को समझना अनिवार्य है। इस अर्थ को केवल व्यक्तिनिष्ठ दृष्टि से ही समझा जा सकता है। व्यक्तिनिष्ठता (जिसे आत्मपरकता अथवा व्यक्तिपरकता भी कहा जाता है) वह सिद्धान्त है जो सामाजिक यथार्थता को समझने हेतु उसे मूल्यों से पृथक् करना असम्भव मानता है। कोई भी शोधकर्ता अपने आन्तरिक विचारों एवं मूल्यों को कहीं दूसरी जगह छोड़कर अन्वेषण नहीं कर सकता है। उसके मूल्य, विश्वास एवं मनोवृत्तियाँ सदैव उसके साथ रहती हैं तथा इसी से वह सामाजिक यथार्थता को देखने का प्रयास करता है। अन्य शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जब कोई शोध घटनाओं का अध्ययन शोधकर्ता के दृष्टिकोण या परिप्रेक्ष्य से किया जाता है, तो उसे व्यक्तिनिष्ठ अध्ययन कहा जाता है। प्रत्यक्षवादी विद्वान् ऐसे अध्ययनों का विरोध करते हैं। **कूले** एवं **बेवर** ने 'सहानुभूतिमूलक समझ' तथा मनोविष्ले"ाणवादियों ने 'आत्म–स्पष्टीकरण' की जिस पद्धति का उल्लेख किया है, वह वास्तव में व्यक्तिनिष्ठता से ही सम्बन्धित है। इस पद्धति के समर्थक समाजशास्त्र की वस्तुनिष्ठ प्रकृति को पूर्णतः अस्वीकार करते हैं।

3.3 वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित समस्याएँ

प्रत्येक विज्ञान अपनी विषय–वस्तु का अध्ययन वस्तुनिष्ठ रूप से करने का प्रयास करता है, परन्तु सामाजिक घटनाओं की प्रकृति के कारण सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता रख पाना एक कठिन कार्य है। इसमें आने वाली प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

(1) समस्या का चयन मूल्य–निर्णयों द्वारा प्रभावित–समाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता न रख पाने का सर्वप्रथम कारण शोध समस्या का चयन है जो कि अन्वेषणकर्ता के मूल्यों तथा रुचियों द्वारा प्रभावित होता है। समस्या का चयन सदैव मूल्यों से सम्बन्धित होता है और इसीलिए सामाजिक–सांस्कृतिक घटनाओं का पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ अथवा वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं है।

(2) अध्ययन में तटस्थता असम्भव–सामाजिक शोध में जब हम व्यक्तियों एवं समूहों का अध्ययन करते हैं तो स्वयं एक सामाजिक प्राणी होने के कारण हम अध्ययन से अपने आपको तटस्थ अथवा पृथक् नहीं रख पाते। प्राकृतिक विज्ञानों में ऐसा इसलिए सम्भव हो जाता है क्योंकि उनमें जड़ या निर्जीव वस्तुओं का अध्ययन किया जाता है। स्वयं सामाजिक समूह, वि"ोष जाति एवं सम्प्रदाय का सदस्य होने के कारण शोधकर्ता का पक्षपात या किसी वि"ोष बात की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक ही है। अतः सामाजिक विज्ञानों में निष्कर्षों के शोधकर्ता की मनोवृत्तियों या मूल्यों द्वारा प्रभावित होने की सम्भावना अधिक होती है।

(3) बाह्य हितों द्वारा बाधा–सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित तीसरी बाधा शोधकर्ता के बाह्य हित हैं। जब वह अपने समूह का अध्ययन करता है तो बहुत–सी बातों, जिन्हें वह अनुचित मानता है, की उपेक्षा कर देता है। दूसरी ओर, जब वह किसी दूसरे समूह का अध्ययन करता है तो वह ऐसी बातों की ओर अधिक ध्यान देता है। इससे अध्ययन की वस्तुनिष्ठता प्रभावित होती है।

(4) सामाजिक घटनाओं की प्रकृति–सामाजिक घटनाओं की प्रकृति भी सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठ अध्ययनों में एक बाधा है। चूँकि इनकी प्रकृति गुणात्मक होती है और कई बार शोधकर्ता को समूह के सदस्यों की मनोवृत्तियों, मूल्यों एवं आद"ार्ों आदि का अध्ययन करना पड़ता है, इसीलिए उसके लिए परि"ाुद्ध एवं यथार्थ रूप में घटनाओं का निष्पक्ष अध्ययन करना सम्भव नहीं रह पाता।

(5) संजातिकेन्द्रवाद–"ाोधकर्ता स्वयं एक सामाजिक प्राणी है तथा वह किसी वि"ोष जाति, प्रजाति, वर्ग, लिंग, समूह का सदस्य होने के नाते विभिन्न मानवीय क्रियाओं एवं सामाजिक पहलुओं के बारे में अपने विचार एवं मूल्य रखता है। उसके ये विचार एवं मूल्य उसके अध्ययन को प्रभावित करते हैं। **लुण्डबर्ग** (Lundberg) के अनुसार शोधकर्ता के नैतिक मूल्य का उसके अध्ययन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है।

उपर्युक्त बाधाओं के अतिरिक्त अनेक अन्य ऐसे कारण भी हैं जो सामाजिक विज्ञानों में होने वाले अध्ययनों में पक्षपात या अभिनति (Bias) लाते हैं। अभिनति के ऐसे कुछ प्रमुख स्रोत निम्नांकित हैं–

(1) शोधकर्ता की अपनी मूल्यों से सम्बन्धित अभिनति,

(2) सूचनादाता की झूठ बोलने अथवा सही उत्तर देने में कतराने के कारण होने वाली अभिनति,

(3) सूचनादाता की तथ्यों को बढ़ा–चढ़ाकर कहने अर्थात् डींग मारने की आदत,

(4) सूचनादाता द्वारा शोधकर्ता पर वि"वास न होने के कारण सही उत्तर देने में असमर्थता,

(5) निद"ार्न के चुनाव में अभिनति (बहुधा निद"ार्न का चयन पक्षपातपूर्ण रूप में किया जाता है तथा यदि दैव निद"ार्न का प्रयोग किया गया है तो भी अनेक सूचनादाता सूचना देने हेतु उपलब्ध नहीं हो पाते जिससे निद"ार्न प्रभावित होता है),

(6) सामग्री संकलन करने की दोषपूर्ण प्रविधियाँ (सामान्यतः प्र"नावली एवं अनुसूची इत्यादि प्रविधियों में ऐसे प्र"न सम्मिलित कर लिए जाते हैं जो यथार्थता के बारे में सूचना संकलन करने में सहायक नहीं होते हैं अथवा इन प्रविधियों में पूर्व–परीक्षण किए बिना प्रयोग में लाने से इनकी वस्तुनिष्ठता प्रभावित होती है, तथा

(7) सामग्री के विष्ले"ाणएवं निर्वचन में अभिनति (सामान्यतः विष्ले"ाणएवं निष्कर्ष के स्तर पर भी शोधकर्ता के मूल्य अध्ययन को प्रभावित करते हैं जिससे वह वही निष्कर्ष निकालता है जो उसके मूल्यों के अनुरूप होता है। बहुधा शोधकर्ता के निजी स्वार्थ भी विष्ले"ाणएवं निर्वचन को प्रभावित करते हैं)।

3.4 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचार

मैक्स वेबर के अनुसार प्राकृतिक तथा सामाजिक विज्ञानों में अन्तर अन्वेषणकर्ता के अनुभव सम्बन्धी आ"ायों (Cognitive intentions) का परिणाम है, न कि मानव–क्रिया की विषय–वस्तु के

अध्ययन में वैज्ञानिक तथा सामान्यीकरण विधियों के प्रयोग करने की कठिनाई। अन्वेषण की विधियों से अधिक, वैज्ञानिक की रुचियाँ तथा उद्दे"य महत्त्वपूर्ण होते हैं। दोनों ही तरह के विज्ञानों में अमूर्तता (Abstraction) का सहारा लिया जाता है, अमूर्तता के लिए दोनों ही तरह के विज्ञानों में वास्तविकता के विभिन्न पहलुओं में से कुछ पहलुओं का चयन करना पड़ता है। वेबर के विचारों को निम्नलिखित दो शीर्षकों के अन्तर्गत विभाजित किया जा सकता है–

(अ) समस्या का चयन सदैव मूल्य–निर्णयों द्वारा प्रभावित–कौन–सी वि"ोष समस्या तथा उसकी किस प्रकार की व्याख्या विद्वान् का ध्यान अपनी ओर केन्द्रित करती है, यह अन्वेषणकर्ता के मूल्यों तथा रुचियों पर निर्भर करता है। समस्या का चयन सदैव मूल्यों से सम्बन्धित (Value relevant) है। संस्कृति अथवा समाज का पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ अथवा वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं है क्योंकि इनके अध्ययन का दृष्टिकोण एक–तरफा है जिसका चयन तथा व्याख्या प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष, चेतन अथवा अचेतन रूप से की जाती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक अथवा सामाजिक प्रघटना को बिना इसके महत्त्व को ध्यान में रखे नहीं समझा जा सकता। प्रत्येक सामाजिक प्रघटना अपने आप में वि"िाष्ट होती है तथा कोई भी सांस्कृतिक घटना अपने आपको दोहराती नहीं है। सामाजिक वास्तविकता के बारे में ज्ञान सार्वभौमिक नहीं है क्योंकि यह ज्ञान किसी वि"ोष दृष्टिकोण के अनुसार प्राप्त किया गया है। यह चेतना सम्बन्धी ज्ञान है। इसलिए प्र"न यह पैदा होता है कि क्या सामाजिक प्रघटनाओं का अध्ययन वस्तुनिष्ठ रूप से किया जा सकता है? वस्तुनिष्ठ अध्ययन का अभिप्राय है कि वह अध्ययन चेतना सम्बन्धी नहीं है अर्थात् हमारे अपने विचारों द्वारा प्रभावित नहीं है। वस्तुनिष्ठ अध्ययन निष्पक्ष होता है जिस पर शोधकर्ता का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सामाजिक वास्तविकता का अध्ययन केवल एक–तरफा है क्योंकि वैज्ञानिक केवल अपनी रुचि व मूल्यों के आधार पर समस्या व प्रघटना का चयन ही नहीं करता अपितु इसका अध्ययन भी अपने दृष्टिकोण से करता है अर्थात् केवल उसी पक्ष की ओर अधिक ध्यान देता है जिसे वह महत्त्वपूर्ण मानता है।

वेबर ने इस बात पर बल दिया है कि मूल्य अन्वेषणकर्ता द्वारा समस्या के चयन को प्रभावित करता है क्योंकि समस्या के चयन के लिए कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है तथा इससे सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता का उल्लंघन होता है। यह प्र"न कि कोई प्रस्तावना सही है अथवा गलत है, तार्किक दृष्टि से इससे भिन्न है कि मूल्यों से इसका क्या सम्बन्ध है। मूल्य सम्बन्ध समस्या के चयन को प्रभावित करते हैं, न कि उस समस्या की व्याख्या को। इसलिए वेबर का कहना है कि सामाजिक विज्ञानों में समस्या के चयन के मूल्यों के प्रभाव को नहीं रोका जा सकता परन्तु समस्या का चयन कर लेने के बाद वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है।

(ब) समस्या के चयन के बाद वस्तुनिष्ठ अध्ययन सम्भव–समस्या का चयन कर लेने के बाद (जो कि मूल्यों से प्रभावित होती है) समाज वैज्ञानिक को अपने अथवा अन्य व्यक्तियों के मूल्यों को दूर रखकर सामग्री द्वारा प्रकट रूपरेखा का अनुसरण करना चाहिए। वह अपने विचारों को सामग्री पर थोप नहीं सकता तथा इसलिए जरूरी नहीं है कि निष्कर्ष उसकी अपनी मान्यता अथवा मूल्यों के अनुरूप ही हों। **वेबर** इसे नैतिक निष्पक्षता कहते हैं। उनका कहना है कि, "मूल्य निर्णयों का वैज्ञानिक अध्ययन केवल अपेक्षित साध्यों अथवा आद"ाों को समझाने तथा आनुभविक विष्ले"णमें सहायता ही नहीं करता अपितु उनका आलोचनात्मक मूल्यांकन भी कर सकता है।" यह आलोचना द्वन्द्ववादी प्रकृति की है अर्थात् यह ऐतिहासिक मूल्य–निर्णयों तथा विचारों से सम्बन्धित औपचारिक तार्किक मूल्यांकन है। इसके द्वारा समाज वैज्ञानिक मूल्यों के प्रति जागरूक हो जाता है तथा इनसे अपने अध्ययन को प्रभावित नहीं होने देता।

कोई भी आनुभविक विज्ञान यह नहीं बताता है कि किसी व्यक्ति को क्या करना चाहिए अपितु यह बताता है कि वह क्या कर सकता है। यह सत्य है कि सामाजिक विज्ञानों में व्यक्तिगत

मूल्य–निर्णय हमारे वैज्ञानिक तर्कों को प्रभावित करते हैं परन्तु फिर भी हम समस्या के चयन के प"चात् वस्तुनिष्ठ अध्ययन कर सकते हैं। इस प्रकार, वेबर कहते हैं कि अनुसन्धान की प्रारम्भिक अवस्थाओं; वि"ोषकर समस्या के चयन तक हमारे मूल्य हमारे अध्ययन को प्रभावित करते हैं परन्तु उसके बाद वस्तुनिष्ठता रखी जा सकती है। वास्तव में, प्रारम्भिक अवस्था में सामाजिक विद्वानों का एक–तरफा दृष्टिकोण होने के कारण वस्तुनिष्ठता नहीं रखी जा सकती। वेबर की यह मान्यता थी कि सामाजिक विज्ञान, जिसके विषय में हमारी रुचि है, यथार्थ वास्तविकता से सम्बन्धित आनुभविक विज्ञान है। एक ओर हम व्यक्तिगत प्रघटनाओं में सम्बन्धों तथा उनके सांस्कृतिक महत्त्व का अध्ययन करना चाहते हैं, जबकि दूसरी ओर उनके ऐतिहासिक होने के कारणों का अध्ययन करना चाहते हैं। अध्ययन को वैज्ञानिक बनाने तथा तुलनात्मक अध्ययनों में सहायता करने के लिए उन्होंने आद"ार प्रारूप की अवधारणा का निर्माण किया जो हमें मूर्तता से आमूर्तता की ओर ले जाती है तथा इस अमूर्त अवधारणात्मक निर्माण से हम फिर यथार्थ वास्तविकता को समझने का प्रयास करते हैं। वेबर इस बात को मानते हैं कि सार्वभौमिक नियमों का निर्माण सामाजिक विज्ञानों में नहीं किया जा सकता तथा इनकी यह मान्यता है कि इन नियमों की खोज करना सामाजिक विज्ञानों के लिए महत्त्वपूर्ण भी नहीं है।

3.5 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता एवं महत्त्व

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना अत्यन्त अनिवार्य है क्योंकि यदि ऐसा नहीं किया जाता तो हम कभी यथार्थता का अध्ययन नहीं कर पाएँगे। वस्तुनिष्ठता की आव"यकता निम्नांकित बातों से स्पष्ट की जा सकती है–

(1) वैज्ञानिक पद्धति के सफल प्रयोग हेतु सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना अनिवार्य है,

(2) घटनाओं को यथार्थ एवं वास्तविक रूप में समझने तथा मौलिक तथ्यों के संकलन के लिए वस्तुनिष्ठता अनिवार्य है,

(3) पक्षपातरहित निष्कर्षों की प्राप्ति के लिए वस्तुनिष्ठता आव"यक है। यदि शोधकर्ता के अपने मूल्य एवं विचार अध्ययन के निष्कर्षों को प्रभावित करते हैं तो वे निष्कर्ष भ्रामक हो सकते हैं,

(4) प्रतिनिधि तथ्यों की प्राप्ति के लिए वस्तुनिष्ठता आव"यक है, तथा

(5) तथ्यों एवं सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा एवं सत्यापन के लिए वस्तुनिष्ठता आव"यक है। यदि शोध में वस्तुनिष्ठता नहीं है तो एक ही सामाजिक घटना का विभिन्न विद्वानों द्वारा अध्ययन भिन्न–भिन्न निष्कर्षों की ओर ले जा सकता है जिससे यह समस्या उत्पन्न हो सकती है कि किसे सही माना जाए और किसे गलत। ऐसी स्थिति में तथ्यों एवं सिद्धान्तों का सत्यापन नहीं हो सकता।

3.6 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपाय

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को निम्नांकित उपायों द्वारा बनाए रखा जा सकता है–

(1) आनुभविक अध्ययन–अगर शोधकर्ता स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाकर घटनाओं का उसी रूप में अध्ययन करे जिस रूप में वे विद्यमान हैं तो उसका अध्ययन वस्तुनिष्ठ हो सकता है। उसे घटनाओं को अपने विचारों एवं मूल्यों के सन्दर्भ में न देखकर एक तटस्थ शोधकर्ता के दृष्टिकोण से देखना चाहिए। इसके लिए उसे आनुभविक प्रविधियों का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि गणनात्मक सामग्री संकलित की जा सके। यदि प्र"नावली एवं अनुसूची का प्रयोग किया जा रहा है तो इसका पूर्व–परीक्षण किया जाना आव"यक है ताकि यह सुनि"चत हो सके कि सभी सूचनादाता प्र"नों का अर्थ एक समान रूप से समझेंगे। पूर्व संरचित एवं प्र"न व उत्तर के विभिन्न विकल्प सुव्यवस्थित ढंग से लिखे होने के कारण सामग्री के संकलन में अभिनति की सम्भावना काफी कम हो जाती है।

(2) स्पष्ट शब्दों एवं अवधारणाओं का प्रयोग—भाषा की भिन्नता के कारण शब्दों एवं अवधारणाओं में भी भिन्नता आ जाती है। शोधकर्ता अपने अध्ययन में स्पष्ट रूप से परिभाषित शब्दों एवं अवधारणाओं का प्रयोग करके वस्तुनिष्ठता बनाए रख सकता है क्योंकि ऐसी स्थिति में लोग इनका अर्थ वही समझेंगे जिसमें किसी शोधकर्ता ने इनका प्रयोग किया है। अवधारणाओं को उनके मानक अर्थ में ही प्रयोग करना चाहिए ताकि अन्य लोग उनका अर्थ वही समझें जो शोधकर्ता का है।

(3) दैव निदर्शन का प्रयोग—सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता के भाव एवं अभिनति का एक प्रमुख स्रोत निद”ान का समग्र का प्रतिनिधि नहीं होना है। इसका समाधान दैव निद”ान विधि का प्रयोग करके किया जा सकता है। यह ही निद”ान का केवल एक ऐसा प्रकार है जिसमें प्रतिनिधि इकाइयों का चयन सम्भव हो जाता है और पक्षपात की सम्भावना भी नहीं रहती।

(4) एक से अधिक प्रविधियों का प्रयोग—सामग्री एकत्रित करने के यन्त्र के रूप में, प्रत्येक प्रविधि के अपने कुछ दोष हैं जोकि शोध की वस्तुनिष्ठता को प्रभावित करते हैं। इसका समाधान काफी सीमा तक एक से अधिक प्रविधियों का प्रयोग करके किया जा सकता है क्योंकि इससे एकत्रित सामग्री की प्रामाणिकता की जाँच हो जाएगी।

(5) समूह अनुसन्धान प्रणाली—सामाजिक शोध में अभिनति कम करने एवं वस्तुनिष्ठता बनाए रखने का एक अन्य साधन समूह शोध है जिसमें शोधकर्ताओं की एक टीम सामूहिक रूप से घटनाओं का अवलोकन करती है। इसमें व्यक्तिगत पक्षपात की सम्भावना कम हो जाती है। ऐसे अध्ययन के पीछे मान्यता यह है कि एक शोधकर्ता के विचार एवं मूल्य उसे वि"ाष्ट निष्कर्षों की ओर मोड़ सकते हैं, परन्तु अधिक शोधकर्ता होने के कारण यह सम्भव नहीं है। अन्तःविषयक शोधों (Interdisciplinary research) में विभिन्न विज्ञानों के शोधकर्ता सामूहिक रूप से अध्ययन करते हैं जिससे पक्षपात की सम्भावना न्यूनतम हो जाती है।

(6) यान्त्रिक उपकरणों का प्रयोग—यान्त्रिक उपकरणों के प्रयोग द्वारा भी सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है। टेपरेकार्डर एवं कैमरे का प्रयोग आज अनेक अध्ययनों में इसीलिए किया जाने लगा है क्योंकि इन पर आधारित अध्ययनों में पक्षपात की सम्भावना कम हो जाती है।

सच तो यह है कि वस्तुनिष्ठता की समस्या जितनी विस्तृत और गहन बताई जाती हे, उतनी है नहीं। वस्तुनिष्ठता एक मानसिक गुण अथवा दृष्टिकोण है। यह कुछ सीमा तक व्यक्ति—वि”ोष के रुझान और कुछ सीमा तक उसके प्रि"ाक्षण पर आधारित होता है। शोधकर्ता का प्रि"ाक्षण और क्षेत्रीय अनुभव जितना अधिक बढ़ता जाता है उतना ही वह वस्तुनिष्ठता का गुण अर्जित करता जाता है। वास्तव में, यह अभ्यास, अनुभव और प्रि"ाक्षण का विषय है। समाज विज्ञानों में यह कोई असाध्य समस्या नहीं है। इसका समाधान सम्भव है और अनेक समाज”ाास्त्रियों एवं अन्य समाज वैज्ञानिकों ने वस्तुनिष्ठता के पालन की सम्भावना को साकार कर दिखाया है।

3.7 सारांश

समाजशास्त्र एक विज्ञान है। इस नाते इस विषय में होने वाले शोध में यह आशा की जाती है कि उसमें वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाएगा। जब से समाजशास्त्र विषय का विकास हुआ है, तभी से समाजशास्त्र में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग एक विवादित विषय रहा है। एक ओर ऐसे विद्वान् हैं जिनका मत है कि समाजशास्त्र में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जा सकता है, जबकि दूसरी ओर ऐसे विद्वान् हैं जिनका मत है कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति ही ऐसी है कि उनके अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धति सहायक नहीं हो सकती। सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता के बारे में विवाद इसी से सम्बन्धित है। वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय सामाजिक यथार्थता को तटस्थ एवं तार्किक रूप से समझने का प्रयास है जिसमें शोधकर्ता के मूल्य उसे प्रभावित नहीं करते हैं। इसके विपरीत

व्यक्तिनिष्ठता से अभिप्राय ऐसे शोध से है जो शोधकर्ता के दृष्टिकोण से प्रभावित होता है। यह सही है कि यदि हमें समाजशास्त्र को वैज्ञानिक धरातल पर स्थापित करना है तो शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना आवश्यक है। यद्यपि वस्तुनिष्ठता बनाए रखना एक कठिन कार्य है, तथापि इसे असम्भव नहीं माना जा सकता। यदि शोधकर्ता चाहे तो सामाजिक यथार्थता को वस्तुनिष्ठ रूप में समझ सकता है। अनेक समाजशास्त्रियों के वस्तुनिष्ठ अध्ययनों के आधार पर ही ऐसे सिद्धान्तों का निर्माण किया गया है जिनकी प्रकृति काफी सीमा तक सार्वभौम है।

3.8 शब्दावली

वस्तुनिष्ठता – वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय यथार्थता को तटस्थ एवं तर्क के आधार पर समझने का प्रयास है। ऐसे अध्ययनों में शोधकर्ता के मूल्य अध्ययन को प्रभावित नहीं करते हैं।

व्यक्तिनिष्ठता – व्यक्तिनिष्ठता से अभिप्राय पक्षपातपूर्वक किए गए अध्ययनों से है। जिन शोधों में शोधकर्ता के मूल्य अध्ययनरत समस्या को प्रभावित करते हैं, उस शोध को व्यक्तिनिष्ठ शोध कहा जाता है।

आनुभविक शोध – आनुभविक शोध ऐसा शोध है जो शोधकर्ता को प्राथमिक सामग्री के संकलन हेतु अध्ययन–क्षेत्र में जाने हेतु आवश्यक मानता है। अध्ययन–क्षेत्र में जो सामग्री संकलित की जाती है उसे प्राथमिक सामग्री कहते हैं तथा वह अधिक विश्वसनीय होती है।

वैज्ञानिक पद्धति – वैज्ञानिक पद्धति से अभिप्राय अध्ययन की उस पद्धति से है जिसमें परीक्षण, सत्यापन, वर्गीकरण, पूर्वानुमान आदि पर बल दिया जाता है। विज्ञान की परिभाषा वैज्ञानिक पद्धति के रूप में ही दी जाती है जो विज्ञानों में एक–समान है।

3.9 अभ्यास प्रश्न

13. वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाएँ स्पष्ट कीजिए।
14. वस्तुनिष्ठता किसे कहते हैं? सामाजिक शोध में इसकी आवश्यकता की विवेचना कीजिए।
15. वस्तुनिष्ठता को परिभाषित कीजिए। सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपायों की विवेचना कीजिए।
16. क्या सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है? तर्क दीजिए।
17. सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की समस्या पर एक लेख लिखिए।

3.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

A. W. Green (1964), **Sociology : An Analysis of Life in Modern Society**, *McGraw-Hill* Book Company, New York.

Emile Durkheim (1982), **The Rules of Sociological Method**, The Free Press, New York.

G. A. Lundberg (1947), **Sociology**, Oxford University Press, New York.

H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New York.

Lowell J. Carr (1955), **Analytical Sociology : Social Situations and Social Problems**, Harper and Brothers, New York.

इकाई 4 सामाजिक शोध में नैतिकता
Ethics in Social Research

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 नैतिकता की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ
4.3 सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दे
4.4 शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाले सावधानियाँ
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 अभ्यास प्रश्न
4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों को समझाने का प्रयास किया गया है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- नैतिकता की अवधारणा को समझ पाएँगे;
- सामाजिक शोध में पाए जाने वाले प्रमुख नैतिक मुद्दों की व्याख्या कर पाएँगे; तथा
- सामाजिक शोध में नैतिकता बनाए रखने के उपायों अथवा सावधानियों को स्पष्टतया समझ पाएँगे।

4.1 प्रस्तावना

नैतिक मुद्दों का सम्बन्ध नीतिशास्त्र (Ethics) से है। इसे परमशुद्ध विज्ञान माना जाता है। इसमें मनुष्य के कर्त्तव्यों एवं अकर्त्तव्यों पर विचार किया जाता है। इसे 'चरित्र का विज्ञान' भी कहा जाता है क्योंकि यह उचित और अनुचित में भेद दिखलाता है। नीतिशास्त्र नैतिक निष्कर्षों की सत्यता से सम्बन्धित है। नैतिक निर्णयों में मनुष्य के सामने अनेक विकल्प होते हैं। इन विकल्पों में तर्क के द्वारा स्पष्टीकरण करने की आवश्यकता होती है। इसीलिए यह माना जाता है कि नैतिक निर्णयों पर पहुँचने के लिए तर्कशास्त्र का ज्ञान भी आवश्यक है। वास्तव में, तर्कशास्त्र एवं नीतिशास्त्र दोनों ही दर्शनशास्त्र की प्रमुख शाखाएँ हैं। सभी समूहों, पेशों (Professions) एवं व्यक्तियों को व्यवहार की एक ऐसी सामाजिक, धार्मिक तथा नागरिक संहिता को अपनाना होता है, जो सही (उचित) समझी जाती है। इसी दृष्टि से यह कहा जाता है कि सभी व्यक्तियों अथवा संगठनों को ऐसे विकल्पों का चयन करना होता है जिनका सही (नैतिक) अथवा गलत (अनैतिक) रूप में मूल्यांकन किया जा सके। शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया इसमें कोई अपवाद नहीं है क्योंकि इसके प्रत्येक सोपान (चरण) में नैतिकता या अनैतिक मुद्दे सामने आते हैं। शोधकर्ता से यह आशा की जाती है कि वह केवल नैतिक मुद्दों को ही महत्त्व प्रदान करे तथा जहाँ तक सम्भव हो सके किसी भी अनैतिक निर्णय या कार्य से बचें।

4.2 नैतिकता की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

मानव को सामाजिक प्राणी होने के नाते कुछ सामाजिक मर्यादाओं का पालन करना पड़ता है। समाज की इन मर्यादाओं में सत्य, अहिंसा, परोपकार, विनम्रता एवं सच्चरित्र आदि अनेक गुण सम्मिलित होते हैं। इन गुणों को यदि हम सामूहिक रूप से एक नाम देना चाहे तो ये सब नैतिकता के अन्तर्गत

आ जाते है। नैतिकता एक ऐसा व्यापक शब्द है जिसमें समाज की लगभग सभी मर्यादाओं का पालन हो जाता है। अत: सामाजिक व्यवस्था के लिए नैतिकता का सर्वाधिक महत्त्व है। नैतिकता ज्ञान की वह शाखा है जो नैतिक नियमों या संहिताओं से सम्बन्धित होती है। यही नैतिक नियम व्यक्ति के व्यवहार अथवा किसी क्रिया (जिसमें शोध भी सम्मिलित है) का संचालन करते हैं। इसे हम मानव व्यवहार के नैतिक मूल्यों अथवा व्यवहार को संचालित करने वाले नियमों का दर्शनशास्त्रीय अध्ययन भी कह सकते हैं।

प्रत्येक समाज में मनुष्य द्वारा कुछ ऐसे कार्य किए जाते हैं, जिनकी प्रशंसा होती है और कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जिनके करने पर वह समाज में घृणा का पात्र बन जाता है। हमारे सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कुछ आदर्श और कुछ निषेध होते हैं। इनका निर्धारण व्यक्ति और समाज के हित को ध्यान में रखकर किया जाता है। उदाहरण के लिए–सत्य बोलना चाहिए, बड़ों का आदर करना चाहिए, असहायों की सहायता करनी चाहिए, चोरी नहीं करनी चाहिए, किसी को सताना नहीं चाहिए आदि–आदि। इन आदर्शों और निषेधों का मूल उद्देश्य व्यक्ति के चरित्र और आचरण का इस प्रकार निर्माण करना है, जिससे कि समाज में शान्ति और व्यवस्था की स्थापना उचित ढंग से हो सके। नैतिकता मानव–जीवन का मार्गदर्शन करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नैतिकता (नैतिक आदर्श) या नैतिक संहिता (Moral code) का अनुमोदन (Sanction) किसी बाह्य शक्ति द्वारा नहीं किया जाता, वरन् इसके पीछे समाज की शक्ति का हाथ रहता है, जो समाज में कुरीतियों का दमन करती है। सामान्यतया वे नियम ही नैतिक आदर्श कहलाते हैं, जो हमारे चरित्र व आचरणों से सम्बन्धित होते हैं और जिनके पीछे व्यक्तियों के अन्त:करण व सामाजिक शक्तियों की अभिमति होती है अर्थात् इनके साथ समाज का अनुमोदन जुड़ा होता है। नैतिकता शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा की 'नी' धातु से हुई है जिसका तात्पर्य मार्गदर्शन करना होता है। समाज की मान्यताओं के अनुकूल कार्य करना नैतिक माना जाता है, जबकि उनके विपरीत कार्य करना अनैतिक माना जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि नैतिकता शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के 'Moralis' शब्द से हुई है जिसका अर्थ 'तौर–तरीका' या 'चाल–चलन' (Manner), 'चरित्र' (Character) अथवा 'उचित व्यवहार' (Proper behaviour) है।

नैतिक आदर्शों अथवा कर्त्तव्यों के रूप में नैतिकता को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है–

मैकाइवर एवं **पेज** (MacIver and Page) के अनुसार–''नैतिकता (नैतिक आदर्श) नियमों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा व्यक्ति का अन्तःकरण उसे उचित और अनुचित का बोध कराता है।'' इन विद्वानों के मतानुसार धर्म एवं नैतिकता घनिष्ठ रूप में एक–दूसरे में गुँथे हुए हैं तथा इन दोनों में केवल निर्देशों की सत्ता एवं अनुमोदन के आधार पर ही भेद किया जा सकता है। धर्म नैतिक शिक्षा का उपदेश देता है तथा धर्म द्वारा अनुमोदित नियम नैतिक संहिताएँ कहे जाते हैं। इसीलिए कोई संहिता धार्मिक एवं नैतिक दोनों रूपों में स्वीकृत हो सकती है।

जिसबर्ट (Gisbert) के अनुसार–''नैतिक नियम, नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से सम्बद्ध है तथा जिसका अनुभव अन्तरात्मा द्वारा होता है।'' उन्होंने जटिल मानवीय क्रियाओं में सामाजिक एवं नैतिक मुद्दों को परस्पर घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित माना है। जिसबर्ट ने नीतिशास्त्र एवं समाजशास्त्र में पारस्परिक सहयोग को महत्त्व प्रदान करने की वकालत की है।

डेविस (Davis) ने लिखा है–''नैतिकता कर्त्तव्य की वह आन्तरिक भावना है जिसमें उचित–अनुचित का विचार सन्निहित हो।'' उचित–अनुचित का निर्धारण सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर होता है। इसीलिए प्रत्येक समाज की मूल्य व्यवस्था नैतिकता, धर्म, प्रथाओं, परम्पराओं, विश्वासों जैसे अन्य पहलुओं से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती है।

उपर्युक्त विचारों से स्पष्ट है कि नैतिकता द्वारा हमारे आचरण का मूल्यांकन होता है। जो आचरण नैतिक नियमों के अनुसार होते हैं, उसे नैतिक आचरण कहा जाता है और जो इन नियमों के विरुद्ध होता है उन्हें अनैतिक आचरण कहा जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर नैतिकता की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं–

(1) नैतिक नियम सम्पूर्ण समुदाय द्वारा स्वीकृत होते हैं; अर्थात् नैतिकता की प्रकृति सामुदायिक होती है।

(2) सामान्य रूप से नैतिकता में तर्कों की प्रधानता पायी जाती है; अर्थात् नैतिकता का तार्किकता से गहरा सम्बन्ध होता है।

(3) नैतिकता का सम्बन्ध स्वयं समाज से होता है। जिसे समाज अनुचित मानता है, वही अनैतिक भी माना जाता है।

(4) नैतिकता एक परिवर्तनशील संकल्पना है, क्योंकि समय एवं स्थान के अनुसार इसमें परिवर्तन होता रहता है।

(5) नैतिकता का पालन व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से किया जाता है।

(6) नैतिकता का सम्बन्ध व्यक्तियों के चरित्र से होता है।

(7) नैतिकता का सम्बन्ध समाज में पाये जाने वाले मान्य सामाजिक मूल्यों से भी होता है। इसीलिए यह माना जाता है कि नैतिकता के पीछे समाज की शक्ति निहित होती है।

(8) नैतिकता मुख्य रूप से सत्यता, ईमानदारी और पवित्रता की भावना जैसे मूल्यों पर आधारित होती है।

धर्म और नैतिकता में इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि इनमें बहुधा अन्तर करना भी कठिन हो जाता है। **बेन्जामिन** (Benjamin) तथा **लेविस** (Lewis) के अनुसार धर्म की सहायता के अभाव में नैतिक आदर्श न तो पूर्ण हो सकते हैं और न ही सफल। **हक्सले** (Huxley) और **हरबर्ट स्पेन्सर** (Herbert Spencer) का भी यही विचार है। उनके अनुसार नैतिक आदर्श तब तक अपनी पूर्णता को नहीं प्राप्त कर सकते जब तक कि उन्हें धर्म की विशेष अभिसमितियों द्वारा अलग नहीं कर लिया जाए।

यह सत्य है कि धर्म और नैतिकता एक–दूसरे के परस्पर निकट प्रतीत होते हैं; परन्तु अनेक अवसरों पर धर्म और नैतिकता में परस्पर संघर्ष भी होता आया है और आज भी हो रहा है। धर्म का स्वरूप रूढ़िवादी है, जबकि नैतिकता की प्रकृति प्रगतिशील होती है। जब समाज में परिवर्तन आता है तो नैतिकता में भी परिवर्तन आने लगता है, जिसके परिणामस्वरूप धर्म और नैतिकता में संघर्ष छिड़ जाता है। वैज्ञानिक प्रगति और तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप धर्म की अपेक्षा नैतिकता को अधिक महत्त्व दिया जाने लगा है। अन्य शब्दों में, नैतिकता धर्म को पीछे धकेलती जा रही है। शोषण और दुरुख के विषय में धर्म का विचार है कि यह ईश्वरीय देन है, परन्तु नैतिकता के अनुसार किसी का शोषण करना और उसे दुःख पहुँचाना अनुचित है। हमारे देश में धर्म और नैतिकता के मध्य संघर्ष के अनेक उदाहरण मिलते हैं। विवाह–विच्छेद, सन्तति–निरोध, विधवा–पुनर्विवाह आदि के विरुद्ध धर्म ने अनेक बाधाएँ खड़ी की हुई हैं। एक समय था जबकि स्त्रियों का सती होना हिन्दू धर्म के अनुसार अनिवार्य था, परन्तु नैतिकता की दृष्टि से यह गलत था। इस कारण ही अनेक समाज सुधारकों ने इस धार्मिक कृत्य के विरुद्ध आवाज उठाई। इसी प्रकार अस्पृश्यता को भी धर्म उचित मानता रहा है और उसके बनाए रखने पर बल देता आया है, परन्तु वर्तमान नैतिक दृष्टिकोण इसे पूर्णतया अनुचित ठहरा चुका है।

संक्षेप में, धर्म और नैतिकता के मध्य संघर्ष का मूल कारण धर्म का अन्धविश्वासी और रूढ़ियुक्त होना है। इसके विपरीत, नैतिकता तर्क और विवेक से युक्त है। यह सत्य है कि शिक्षा और सभ्यता के

प्रसार के साथ धर्म ने अपने स्वरूप को पर्याप्त सुधारने का प्रयास किया है, परन्तु अभी भी यह पूर्णतया विवेक पर आधारित नहीं हो पाया है।

4.3 सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दे

सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों का सम्बन्ध शोधकर्ता के नैतिक कर्त्तव्यों से है। अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि इन मुद्दों का सम्बन्ध इस प्रश्न से है कि सामाजिक शोध करते समय शोधकर्ता के लिए क्या उचित है अथवा ऐसी कौन–सी बातें हैं जिनसे उसे बचने की आवश्यकता है। उसे इस बात का ध्यान रखना है कि उसने जिन सूचनादाताओं पर शोध किया है, उनके प्रति उसके कुछ नैतिक कर्त्तव्य हैं। इन नैतिक कर्त्तव्यों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। चूँकि शोध का सम्बन्ध व्यक्तियों से है, अतः इसमें कुछ नैतिक मानकों (Ethical standards) का पालन करना अनिवार्य है ताकि अध्ययन हेतु चयनित व्यक्तियों (सूचनादाताओं) को कोई नुकसान न हो। चिकित्सा विज्ञान सम्बन्धी शोध में यह नुकसान अत्यन्त गम्भीर परिणामों वाला हो सकता है क्योंकि यह किसी सूचनादाता या रोगी की मृत्यु तक में प्रतिफलित हो सकता है। इसीलिए सभी देशों में चिकित्सा विज्ञान के व्यावसायिक संगठन (Professional organizations) चिकित्सकों के व्यवहार हेतु नैतिक नियम निर्धारित करते हैं। चिकित्सक को इन नियमों का पालन न करने पर इस संगठन द्वारा उसकी व्यावसायिक सेवाओं पर प्रतिबन्ध भी लगाया जा सकता है।

अमेरिका जैसे देशों में चिकित्सा विज्ञान के समानन्तर समाजशास्त्र जैसे विषय में भी अमेरिकी समाजशास्त्रीय संघ (American sociological association) द्वारा सामाजिक शोध हेतु आचार संहिता (Code of ethics) निर्धारित की गई है। इस आचार संहिता में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नैतिक दिशा–निर्देश शोध की गोपनीयता और विश्वसनीयता (Privacy and confidentiality) से सम्बन्धित है। शोधकर्ता को अपने सूचनादाताओं के सन्दर्भ में इसे बनाए रखना आवश्यक है। क्षेत्राधारित सर्वेक्षणों में सूचनादाताओं के बारे में गुमनामी (Anonymity) इसी सन्दर्भ में रखी जाती है।

शोधकर्ता द्वारा गोपनीयता एवं विश्वसनीयता कितनी महत्त्वपूर्ण होती है, इसके लिए **मेरियो ब्राजुहा** (Mario Brajuha) नामक शोधकर्ता का उदाहरण दिया जा सकता है। ब्राजुहा सहभागी अवलोकन द्वारा एक रेस्तरां वेटर (Restaurant waiter) के रूप में न्यूयॉर्क के लॉंग उपद्वीप में अपना शोध कर रहा था। दुर्भाग्यवश उस रेस्तरां में आग लग गई। पुलिस को आगजनी एवं लूटपाट का शक हुआ तथा उसने दो गवाहों के कानूनी बचाव हेतु ब्राजुहा से उसके फील्ड नोट्स की मांग की। जब उसने इन्हें देने से मना कर दिया तो पुलिस ने उसे जेल में भेज देने तक की धमकी दी। ब्राजुहा ने तब भी इनकार कर दिया तथा अन्ततः दो वर्ष बाद शिकायतकर्ता की मृत्यु पर यह मामला अदालत द्वारा बन्द कर दिया गया (Brajuha and Hallowell, 1986)।

एक अन्य उदाहरण में **रिक स्कार्स** (Rik Scarce) नामक ग्रेजुएट छात्र, जो कि कट्टरपंथी पर्यावरणविदों का अध्ययन कर रहा था, ने विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला में कट्टरपंथियों द्वारा तोड़–फोड़ के पश्चात् न्यायालय में इनके बारे में संकलित तथ्यों से सम्बन्धित फील्ड नोट्स देने से इनकार कर दिया। स्कार्स को इसके लिए न्यायालय की अवमानना के दोष में छह महीने के लिए जेल में रहना पड़ा (Monaghan, 1993)।

तीसरा उदाहरण समाजशास्त्रियों में अन्यन्त वाद–विवाद का विषय रहा है। **लॉड हमफ्रेज** (Laud Humphreys) ने सार्वजनिक शौचालयों में पुरुष समलैंगिक सेक्स का अध्ययन किया। उसने अपने इस शोध में दो पुरुषों द्वारा सेक्स के कृत्य को करते हुए बाहर से देखा। उसने इन दोनों के लाइसेंस प्लेट पर लिखे नामों के आधार पर उनके घर का पता प्राप्त कर लिया। एक वर्ष पश्चात् उसने छद्मवेश (Disguised) अर्थात् अपने को शोधकर्ता न बताकर उन दोनों का उनके घर पर जाकर साक्षात्कार किया। अनेक समाजशास्त्रियों एवं अन्य पर्यवेक्षकों ने हमफ्रेज की अपने सूचनादाताओं की

गोपनीयता भंग करने के लिए आलोचना की। हमफ्रेज ने यह तर्क दिया कि उसने दोनों के वास्तविक नाम उजागर नहीं किए हैं तथा उनका शौचालय में किया गया यह कृत्य गोपनीय नहीं था क्योंकि यह सार्वजनिक स्थान पर किया गया था (Humphreys, 1975)।

सामाजिक शोध में एक अन्य मुद्दा सहमति (Consent) से सम्बन्धित है। अमेरिका में यह परम्परा है कि शोध हेतु चयनित सूचनादाता को सूचित स्वीकृति हेतु एक फॉर्म पर हस्ताक्षर करने होते हैं। इस फॉर्म पर शोध के उद्देश्य तथा सूचनादाता होने के नाते उसके सम्भावित खतरों का वर्णन होता है। यदि शोधकर्ता नाबालिगों पर अध्ययन कर रहा होता है, तो उसे उनके संरक्षकों से सहमति लेनी अनिवार्य है। यद्यपि सूचित सहमति वास्तविक शोध हेतु एक आवश्यकता है, तथापि इस सहमति से सम्बन्धित अनेक नैतिक मुद्दे हैं। एक बार सहमति पर हस्ताक्षर कर देने के पश्चात् सूचनादाता उत्तर देने हेतु विवश हो जाते हैं तथा न चाहते हुए भी वे इससे इनकार नहीं कर सकते। कई बार सूचनादाताओं को शोध में सम्मिलित होने हेतु पुरस्कार के रूप में 5 से 20 डॉलर भी दिए जाते हैं। यह अनैतिक एवं सूचनादाताओं पर शोध में सहयोग देने हेतु अनुचित दबाव नहीं तो और क्या है? बन्दियों के अनेक अध्ययनों में ऐसे नैतिक मुद्दे सामने आए हैं।

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी शोध को नैतिकता की दृष्टि से न्यायोचित मानना सदैव इतना सरल नहीं है। इसलिए अमेरिका जैसे देशों में महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में ऐसी समितियों का निर्माण किया गया है जो शोध प्ररचनाओं एवं प्रस्तावों का मूल्यांकन कर यह सुनिश्चित करती हैं कि संघीय दिशा निर्देशों (Federal guidelines) का पालन हो रहा है कि नहीं। यह सुनिश्चित करने के बाद ही उस प्ररचना या प्रस्ताव को स्वीकृत किया जाता है। खेद का विषय यह है कि भारत जैसे देश में शोध में नैतिकता बनाए रखने सम्बन्धी न तो राष्ट्रीय स्तर पर और न ही स्थानीय स्तर पर कोई विशेष ध्यान दिया जाता है। इसीलिए भारतीय विश्वविद्यालयों में हो रहे शोध की गुणवत्ता पर समय–समय पर प्रश्नचिह्न लगाए जाते रहे हैं।

नान लिन (Nan Lin) ने प्रतिवेदन लिखते समय शोधकर्ता के जिन दायित्वों का उल्लेख किया है उनमें नैतिक उत्तरदायित्व को प्रमुख स्थान दिया है। उनका कहना है कि शोधकर्ता को प्रतिवेदन तैयार करते समय अपने नैतिक उत्तरदायित्व को ध्यान में रखना चाहिए जिसमें दो बातें प्रमुख हैं–सूचनादाताओं एवं सहयोगियों का संरक्षण तथा वास्तविक एवं पूर्ण सूचना।

मुख्य रूप से सामाजिक शोध में निम्नलिखित मुद्दों को प्रमुख माना जाता है–

(1) सूचित स्वीकृति–शोधकर्ता का सर्वप्रथम यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह सूचनादाताओं को शोध से सम्बन्धित पूरी जानकारी उपलब्ध कराए। उसे सूचनादाता को सूचित करना होता है कि इस शोध के क्या उद्देश्य हैं, उत्तरदाताओं को क्या लाभ हो सकता है तथा सूचना देने में उन्हें किस प्रकार के खतरों का सामना करना पड़ सकता है। अधिकांश विद्वान् इस सूचित स्वीकृति (Informed consent) को नैतिक मुद्दा मानते हैं। यदि सामग्री (आँकड़ों) का संकलन प्रश्नावली से किया जा रहा है, तो सहगामी पत्र में इन सबका उल्लेख होना अत्यन्त अनिवार्य है। यदि सूचनादाता के मन में शोध के बारे में किसी प्रकार का सन्देह होगा तो वह निश्चित रूप से सूचना देने में आनाकानी करेगा अथवा भ्रमित करने वाली सूचना देगा।

(2) विश्वसनीयता–शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है कि किसी भी सूचनादाता द्वारा दी गई व्यक्तिगत सूचना को उसके नाम से सार्वजनिक न करे। शोधकर्ता को इस विश्वसनीयता (Confidentiality) के बारे में अति सचेत रहना चाहिए। सूचनादाता को पूरी तरह से यह विश्वस्त कर दिया जाना चाहिए कि उसके द्वारा दी गई सूचना केवल शोध कार्य हेतु ही प्रयोग में लायी जाएगी तथा इसको किसी अन्य उद्देश्य के लिए सूचनादाता के नाम से प्रयोग में नहीं लाया जाएगा।

(3) गोपनीयता–सामाजिक शोध में एक प्रमुख नैतिक मुद्दा गोपनीयता (Privacy) से सम्बन्धित है। वास्तव में, यह मुद्दा विश्वसनीयता से जुड़ा हुआ है। सूचनादाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं को गोपनीय रखना शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है। इन्हें सार्वजनिक करने में सूचनादाताओं का नुकसान हो सकता है। उदाहरणार्थ–यदि कोई शोधकर्ता समलिंगियों अथवा घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं पर शोध कर रहा है, तो सूचनादाता की पहचान बताना अनैतिकता माना जाएगा। कोई भी समलिंगी यह नहीं चाहेगा कि किसी अन्य को यह पता चले कि वह समलिंगी है। इसी भाँति, कोई भी महिला यह नहीं चाहेगी कि उसके पड़ोसियों अथवा मौहल्ले के अन्य लोगों या रिश्ते–नातेदारों को इसका पता चले। यदि शोधकर्ता वैयक्तिक अध्ययन (Case study) द्वारा अपनी समस्या को स्पष्ट करने का प्रयास कर रहा है, तो उसे समलिंगियों अथवा घरेलू हिंसा से ग्रसित महिलाओं का उल्लेख काल्पनिक नाम से करना होता है। उनके वास्तविक नाम उजागर करना उनकी बदनामी का कारण हो सकते हैं।

(4) शारीरिक या मानसिक कष्ट–शोधकर्ता को सूचनादाताओं को शारीरिक या मानसिक कष्ट (Physical or mental distress) देने से बचना चाहिए। यह उसका नैतिक कर्त्तव्य है कि उसके द्वारा पूछे जाने वाले प्रश्नों से सूचनादाताओं को किसी प्रकार का मानसिक कष्ट न हो। इसीलिए यह कहा जाता है कि साक्षात्कार के समय अथवा साक्षात्कार अनुसूची में सम्मिलित प्रश्नों को पूछते समय शोधकर्ता को बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। उसका यह निरन्तर प्रयास होना चाहिए कि सूचनादाता में किसी प्रकार की हीन भावना विकसित न हो। यह शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है कि वह सूचनादाताओं से स्वयं सम्पर्क करे। कई बार ऐसा भी होता है कि अनेक बार जाने पर सूचनादाता गन्तव्य स्थान पर नहीं मिलता है। शोधकर्ता को सदैव यह सोचना चाहिए कि सूचनादाता उसके अधीन कार्य करने वाले कर्मचारी नहीं हैं। अतः उनसे समय लेकर उनसे मिलने में किसी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए।

(5) प्रायोजित शोध–यदि शोध प्रायोजित (Sponsored) है तो इसका प्रायोजक शोध के निष्कर्षों को अपने हितों की पूर्ति हेतु तोड़–मरोड़कर प्रस्तुत करता है। इसीलिए शोधकर्ता को प्रायोजक से इस सम्बन्ध में अनुबन्ध करना चाहिए तथा यदि सम्भव हो तो सूचनादाताओं को शोध के प्रायोजक का पता नहीं चलना चाहिए। चुनावों के समय परिणाम आने से पहले जो सर्वेक्षण टेलीविजन पर अनेक चैनलों द्वारा दर्शाए जाते हैं, उन पर बहुधा प्रायोजित होने का आरोप लगाया जाता है। जिस दल को वे आगे दिखाते हैं उसके विरोधी दल यह कहने में संकोच नहीं करते कि यह कार्य किसी विशेष राजनीतिक दल ने पैसे देकर करवाया है। 2017 के प्रारम्भ में उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखण्ड में भारतीय जनता पार्टी की जीत के बारे में जितने भी ओपिनियन पोल आए थे, उन पर समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी तथा कांग्रेस ने प्रायोजित होने का आरोप लगाया था। चुनाव के परिणाम आने पर भारतीय जनता पार्टी की जीत का सभी को पता चल गया, चाहे उन्हें सीटें अनुमान से कहीं अधिक मिली थी।

(6) वैज्ञानिक कदाचार एवं धोखा–शोधकर्ता का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह संकलित सामग्री को किसी प्रकार से तोड़–मरोड़कर प्रस्तुत न करे। न तो उसे इस मामले में किसी प्रकार की लापरवाही करनी चाहिए और न ही पक्षपातपूर्ण सामग्री प्रस्तुत करनी चाहिए। इससे बचने हेतु अध्ययन के निष्कर्षों की जाँच हेतु शोध की पुनरावृत्ति एवं सहयोगियों की राय लिया जाना अनिवार्य है। वैज्ञानिक कदाचार एवं धोखा (Scientific misconduct and fraud) एक ऐसी अनैतिकता है जिससे शोधकर्ता को सदैव बचना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो अन्य लोगों द्वारा किए गए शोधों के आधार पर कदाचार एवं धोखे से सम्बन्धित वास्तविकता सामने आ सकती है।

(7) वैज्ञानिक समर्थन–शोधकर्ता को शोध करते समय एवं प्रतिवेदन तैयार करते समय मूल्य–निरपेक्ष होना चाहिए। **मैक्स वेबर** जैसे समाजशास्त्रियों ने अपने पद्धतिशास्त्र में मूल्य–निरपेक्षता को प्रमुख स्थान दिया है। उन्होंने ज्ञान के निर्माण पर बल दिया न कि उसे व्यवहार में लागू करने पर। इसके विपरीत, **कार्ल मार्क्स** का कहना है कि शोधकर्ता को दलितों एवं गरीबों के विजेता (Champion)

के रूप में अपना कार्य करना चाहिए। शोध से इन वंचित वर्गों को किसी प्रकार का नुकसान नहीं होना चाहिए। इसी सन्दर्भ में **एल्विन गोल्डनर** ने रचनात्मक शोध की बात कही है। वस्तुतः आधुनिक युग में वैज्ञानिक समर्थन (Scientific advocacy) का होना किसी भी शोध के लिए अनिवार्य माना जाता है।

(8) अतिसंवेदनशील वर्गों का बचाव–शोधकर्ता को अतिसंवेदनशील वर्गों का ध्यान रखना चाहिए। शोध से सम्बन्धित किसी भी कार्य में उन पर कोई दबाव या जोर–जबरदस्ती नहीं की जानी चाहिए। अतिसंवेदनशील वर्गों (Protecting vulnerable clients) में इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ सकता है। जितने भी अध्ययन मद्यपान तथा मादक द्रव्य व्यसन के प्रयोग पर हुए हैं, उनमें शोधकर्ता का यह प्रयास रहा है कि अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं के हितों को किसी प्रकार का नुकसान न पहुँचे। ऐसे ही युवा वर्ग को अतिसंवेदनशील माना जाता है। इसलिए इस वर्ग से सम्बन्धित किए जाने वाले शोध में सावधानी रखी जानी आवश्यक है। युवा वर्ग में एड्स जैसे रोगों की जानकारी हेतु जब शोध के निष्कर्ष बताए जाते हैं, तो इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि एड्स के कारण उनमें सेक्स के बारे में उत्सुकता पैदा न हो। एड्स के कारणों की जानकारी हेतु भी शब्दों का चयन बड़ी सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

(9) शोध के उद्देश्यों हेतु उपचार को स्थगित रखना–शोध के निष्कर्षों को किसी भी उपचार हेतु प्रयोग में लाने से पहले इस बारे में आश्वस्त होना अनिवार्य है कि निष्कर्ष विश्वसनीय हैं। यदि निष्कर्षों के बारे में थोड़ा–बहुत भी सन्देह है तो इन्हें उपचार हेतु स्थगित रखा जाना चाहिए। चिकित्सा सम्बन्धी विज्ञान में होने वाले शोध में थोड़ा–सा भी सन्देह होने पर शोध के उद्देश्यों हेतु उपचार को स्थगित रखना (Withholding treatment for research purposes) एक परम नैतिक कर्तव्य माना जाता है। चिकित्सा विज्ञान में कोई भी अविश्वसनीय कार्य रोगियों के जीवन के लिए खतरा पैदा कर सकता है।

4.4 शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाले सावधानियाँ

सामाजिक शोध में नैतिकता को बनाए रखना अत्यन्त आवश्यक है। इस दृष्टि से प्रत्येक शोध में निम्नलिखित सावधानियाँ रखी जानी आवश्यक मानी जाती हैं–

(1) ईमानदारी–वैज्ञानिक शोध में ईमानदारी (Honesty) बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए। सामग्री, परिणामों, पद्धतियों, कार्य–प्रणालियों एवं प्रकाशन स्थिति का ईमानदारी से उल्लेख किया जाना चाहिए। सामग्री का जाली एवं असत्य निर्माण नहीं करना चाहिए और न ही इसे मिथ्या अर्थ में प्रस्तुत करना चाहिए। अपने सहयोगियों, शोध प्रायोजकों एवं जनता को धोखा देने से बचना चाहिए।

(2) वस्तुनिष्ठता–शोध में सामग्री के विष्ले"ाण, व्याख्या (निर्वचन), मूल्यांकन, वैयक्तिक निर्णयों सम्बन्धी पक्षपात से बचना चाहिए। आत्म–प्रतारणा (Self-deception) से बचना चाहिए अथवा इसे कम–से–कम रखने का प्रयास करना चाहिए। शोध को प्रभावित करने वाले व्यक्तिगत एवं वित्तीय हितों की स्पष्ट रूप में घोषणा करनी चाहिए। ऐसा करने से शोध में वस्तुनिष्ठता (Objectivity) आती है।

(3) अखण्डता–शोध से सम्बन्धित किए गए अपने वादों एवं अनुबन्धों का पालन करना चाहिए। ईमानदारी के साथ शोध कार्य करना चाहिए तथा विचारों एवं कार्यों की स्थिरता हेतु सदैव प्रयासरत रहना चाहिए। इससे शोध की अखण्डता (Integrity) सुनिश्चित होती है।

(4) सर्तकता–शोध में की जाने वाली लापरवाह त्रुटियों एवं असावधानियों से बचना चाहिए, अपने एवं अपने सहयोगियों के कार्यों का समीक्षात्मक परीक्षण करना चाहिए, सम्पूर्ण शोध प्रक्रिया का ठीक प्रकार से रिकॉर्ड रखना चाहिए अर्थात् सामग्री संकलन, शोध प्ररचना तथा एजेंसियों या जर्नलों से पत्राचार सुरक्षित रखना चाहिए। इससे शोध में सतर्कता (Carefulness) बनी रहती है।

(5) खुलापन–सामग्री, परिणामों, विचारों, यन्त्रों (प्रविधियों), संसाधनों को अन्य लोगों के साथ साझा करके शोध में खुलापन (Openness) बनाए रखना चाहिए। साथ ही शोधकर्ता को अपनी आलोचना एवं नवीन विचारों हेतु तैयार रहना चाहिए।

(6) बौद्धिक सम्पदा का सम्मान–शोधकर्ता को लाइसेंस (पेटेण्ट) एवं सर्वाधिकार (कॉपीराइट) का आदर करना चाहिए। बिना अनुमति के अप्रकाशित सामग्री पद्धतियों अथवा परिणामों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। अन्य विद्वानों की शोध में प्रयुक्त सामग्री को सदैव आदर सहित अभिस्वीकृति दी जानी चाहिए तथा सामग्री को दूसरों के ग्रन्थों से चोरी नहीं करना चाहिए।

(7) गोपनीयता–शोधकर्ता को प्रकाशित कराने अथवा ग्राण्ट प्राप्ति हेतु भेजे गए शोधपत्रों, व्यक्तिगत रिकॉर्ड, व्यापार एवं सैन्य राज (Military secrets) तथा सूचनादाताओं के रिकॉडों की गोपनीयता (Confidentiality) को बनाए रखना चाहिए।

(8) उत्तरदायी प्रकाशन–शोध का प्रकाशन केवल अपने स्वयं के कैरियर को आगे बढ़ाने के साथ–साथ ज्ञान के प्रचार–प्रसार हेतु भी किया जाना चाहिए। शोध को व्यर्थ तथा किसी रूप में बार–बार एक ही बात कहने हेतु प्रकाशित करने से बचना चाहिए। अन्य शब्दों में उत्तरदायी प्रकाशन (Responsible publication) को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

(9) अनुभवी परामर्शदाता–शोध का प्रशिक्षण देने वाले अध्यापकों एवं विशेषज्ञों को छात्रों को शोध की बारीकियाँ समझाते समय अनुभवी परामर्शदाता (Responsible mentoring) के रूप में कार्य करना चाहिए। उनकी भलाई का ध्यान रखना तथा उन्हें सही निर्णय लेने का प्रशिक्षण देना आवश्यक है। साथ ही अपने छात्रों एवं सहयोगियों के प्रति गैर–भेदभाव (Non-discrimination) की भावना होनी चाहिए।

(10) सामाजिक उत्तरदायित्व–शोध द्वारा सामाजिक अच्छाई का प्रचार–प्रसार तथा सामाजिक बुराइयों को समाप्त करने का प्रयास करना चाहिए। शोधकर्ता में अपने विषय तथा समाज के मानकों के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व (Social responsibility) होना आवश्यक है।

ग्रेट ब्रिटेन में आर्थिक एवं सामाजिक शोध परिषद् (Economic and Social Research Council) ने 2015 में शोध नैतिकता के लिए फ्रेमवर्क (Framework for Research Ethics) प्रकाशित किया है। यह परिषद् शोध हेतु एक अग्रणी एवं महत्त्वपूर्ण संस्थान है। इस फ्रेमवर्क में निम्नलिखित छह दिशानिर्देशों को सम्मिलित किया गया है–

(1) शोध का आयोजन, मूल्यांकन एवं प्रारम्भ अखण्डता, गुणवत्ता तथा पारदर्शिता सुनिश्चित करने हेतु होना चाहिए।

(2) शोध में सम्मिलित कर्मचारियों एवं प्रतिभागियों को सामान्यतः शोध के उद्देश्यों, पद्धतियों एवं इसके सम्भावित प्रयोग के बारे में पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। इसमें प्रतिभागिता के खतरों के बारे में भी उन्हें पता होना चाहिए।

(3) शोध प्रतिभागियों द्वारा दी गई सूचनाओं की गोपनीयता तथा प्रतिभागियों की गुमनामी (नाम को गुप्त रखना) को सुनिश्चित रखा जाना चाहिए।

(4) शोध प्रतिभागियों (सूचनादाताओं) को शोध में बिना किसी दबाव एवं लालच के स्वेच्छा से भाग लेना चाहिए।

(5) सदैव शोध प्रतिभागियों के हितों की रक्षा की जानी चाहिए तथा यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उन्हें किसी भी रूप में नुकसान न हो।

(6) शोध की स्वायत्तता सुस्पष्ट होनी चाहिए तथा यदि हितों में किसी प्रकार टकराव है तो वह स्पष्ट होना चाहिए।

इस परिषद् के अनुसार शोध में नैतिकता बनाए रखना शोधकर्ता तथा उसके संस्थान का उत्तरदायित्व है। शोध संस्थान/संगठन को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उपर्युक्त दिशानिर्देशों का पालन हो रहा है या नहीं। दिशानिर्देशों का पालन होने की स्थिति में ही शोध प्ररचना अथवा प्रस्ताव का अनुमोदन किया जाना चाहिए।

भारत में भी अनेक कृषि विश्वविद्यालयों ने शोध की गुणवत्ता एवं नैतिकता को बनाए रखने को शोध समितियों का गठन किया है। इन समितियों के माध्यम से ही सभी शोध एवं शोध पत्र अन्तिम रूप से अनुमोदित होते हैं। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि कृषि विश्वविद्यालयों का गठन अमेरिकी पद्धति पर आधारित है तथा इनमें शिक्षण के साथ–साथ विस्तार एवं शोध को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि सभी विश्वविद्यालयों को शोध की गुणवत्ता एवं नैतिकता हेतु ऐसी शोध समितियों का गठन करना चाहिए।

4.5 सारांश

शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया ऊपर से जितनी सरल दिखाई देती है, वास्तव में यह उतनी ही जटिल है। इसके प्रत्येक सोपान (चरण) में वस्तुनिष्ठता–व्यक्तिनिष्ठता, नैतिकता–अनैतिकता, वैज्ञानिकता–अवैज्ञानिकता, स्वहित–समाज के हित सम्बन्धी अनेक मुद्दों का सामना करना पड़ता है। आधुनिक युग में चिकित्सा विज्ञान में हो रहे शोध की भाँति समाजशास्त्र सहित अन्य सामाजिक विज्ञानों में भी इन मुद्दों की ओर काफी ध्यान दिया जाने लगा है। समाजशास्त्र में शोध में नैतिकता का सम्बन्ध शोध की आचार संहिता को अपनाने से है। शोध में गोपनीयता, विश्वसनीयता, सूचित सहमति आदि को लेकर कुछ निर्णय लेने आवश्यक हैं जिससे शोध के प्रतिभागियों के हितों को किसी प्रकार का नुकसान न हो। अनेक देशों में प्रत्येक विषय में उससे सम्बन्धित व्यावसायिक संगठनों द्वारा शोध में नैतिकता बनाए रखने हेतु दिशानिर्देश प्रतिपादित किए गए हैं। इससे न केवल शोध की गुणवत्ता बनी रहती है अपितु अनैतिकता भी कम–से–कम होती है। आशा है कि पाठ्य–सामग्री के अध्ययन के पश्चात् आप शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाली सावधानियों को समझ गए होंगे।

4.6 शब्दावली

नैतिकता – नैतिकता (नैतिक आदर्श) नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से सम्बद्ध है तथा जिसका अनुभव अन्तरात्मा द्वारा होता है।

सूचित स्वीकृति – सूचनादाताओं को शोध से सम्बन्धित पूरी जानकारी उपलब्ध कराकर उनकी शोध में सहभागिता सुनिश्चित करने को सूचित स्वीकृति कहा जाता है।

विश्वसनीयता – इससे अभिप्राय सूचनादाता को पूरी तरह से यह विश्वस्त करने से है कि उसके द्वारा दी गई सूचना केवल शोध कार्य हेतु ही प्रयोग में लायी जाएगी तथा इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए सूचनादाता के नाम से प्रयोग में नहीं लाया जाएगा।

गोपनीयता – नैतिकता की दृष्टि से इससे अभिप्राय शोधकर्ता द्वारा सूचनादाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं को गोपनीय रखने से है।

4.7 अभ्यास प्रश्न

18. नैतिकता किसे कहते हैं? सामाजिक शोध के प्रमुख नैतिक मुद्दों की विवेचना कीजिए।
19. नैतिकता को परिभाषित कीजिए तथा सामाजिक शोध में गोपनीयता और विश्वसनीयता सम्बन्धी नैतिक मुद्दों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

20. सामाजिक शोध के प्रमुख नैतिक मुद्दों पर एक विस्तृत लेख लिखिए।
21. सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाली प्रमुख सावधानियों का उल्लेख कीजिए।
22. नैतिकता की अवधारणा पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
23. सामाजिक शोध में नैतिकता की क्या आवश्यकता है? इसे बनाए रखने के प्रमुख उपयों की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

J. H. Jones (1981), ***Bad Blood : The Tuskegee Syphilis Experiment***, Free Press, New York.

Kingsley Davis (1949), **Human Society**, The Macmillan Company, New York.

L. Humphreys (1975), ***Teamroom Trade : Impersonal Sex in Public Places***, Aldine, Chicago, IL.

M. Brajuha and L. Hallowell (1986), Legal Intrusion and the Politics of Fieldwork : The Impact of the Brajuha Case, ***Urban Life***, *Vol. 14*, pp. 454–478.

P. Gisbert (1989), **Fundamentals of Sociology**, Orient Longman, Bombay.

P. Monaghan (1993), Sociologist is jailed for refusing to testify about research subject, ***Chronicle of Higher Education***, *Vol. 39*, P. 10.

R. M. MacIver and C. H. Page (1962), **Society : An Introductory Analysis**, Holt, Rinehart and Winston, New York.

इकाई-5 अनुसंधान समस्या का निर्माण
Formulation of Research Problem

इकाई की रूपरेखा

5.0 इकाई के उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 अनुसंधान समस्या का चुनाव एवं प्रतिपादन
5.3 अनुसंधान की प्रकृति
5.4 कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली
5.5 अवधारणाएं
5.6 परिकल्पनाएँ
5.7 चर
5.8 सारांश
5.9 शब्दावली
5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.11 सहायकउपयोगी पाठ्य सामग्री/
5.12 निबंधात्मक प्रश्न

5.0 इकाई का उद्दे"य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- अनुसन्धान या शोध समस्या किसे कहते है यह जान सकेंगे|
- अनुसन्धान या शोध समस्या का चुनाव किस प्रकार किया जाता है का अध्ययन कर सकेंगे |
- अनुसन्धान या शोध समस्या के चुनाव एवं इसके प्रतिपादन में शोध के क्रम की व्याख्या कर सकेंगे |
- अनुसन्धान या शोध समस्या के चरणों के अध्ययन के पश्चात आप शोध समस्या का क्रमवार वर्णन कर सकेंगे |

5.1 प्रस्तावना

किसी भी सामाजिक अनुसन्धान में शोध समस्या के निर्धारण में शोध समस्या का स्पष्ट एवं तर्कसंगत होना नितांत आवश्यक है। शोध समस्या का उचित चयन किसी भी सामाजिक अनुसन्धान की नीव है एवं यहाँ पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि सम्पूर्ण शोध,चरण बद्ध तरीके से एवं सामाजिक शोध के प्रमाणिकता के आधार पर ही सम्पादिक किया जाये तभी यह सामाजिक अनुसन्धान की परिधि में आता है । जब एक बार शोध समस्या का स्पष्ट रूप से निर्धारण हो जाता है तभी उसे स्पष्ट अनुसन्धान की समस्या के रूप में परिभाषित किया जा सकता है । शोध समस्या को एक कथन के रूप में स्पष्ट करने के लिये शोध के चरण को भालिभांति समझना अत्यन आवश्यक है ।

शोध समस्या के चरणों को स्पष्ट रूप से समझने के लिये इसका क्रमबद्ध अध्ययन किया जाना आवश्यक है,क्योंकि सामाजिक अनुसन्धान में शोध समस्या के चयन में वह तार्किकता ,क्रमबद्धता एवं

गुणात्मकता होना अत्यंत आवश्यक है । जिस विषय या शोध समस्या पर आपके द्वारा शोध किया जाना है । अतः शोध समस्या का चुनाव ही शोध की आधारशिला है । शोध समस्या क्या है इसका विवरणात्मक लेखा जोखा ही हमें परिकल्पना निर्माण में मदद करता है यदि समस्या पर गौर किया जाये तो यह प्रश्नवाचक रूप में हमारे सामने आती है कि समस्या का स्वरुप क्या है एवं दो या दो से अधिक चारों के मध्य किस प्रकार का या क्या सम्बन्ध है । समस्या के चुनाव में और इसके प्रतिपादन में जो विवरण प्रस्तुत किया जाना होता उस कार्य हेतु हमें एक सुव्यवस्थित रूपरेखा का निर्माण करना होता है । इस अध्ययय में हम आगे रूपरेखा निर्माण की प्रक्रिया से अवगत होंगे ।

5. 2 अनुसंधान समस्या का चुनाव एवं प्रतिपादन

यहाँ पर हम शोध समस्या के निर्धारण की प्रक्रिया से अवगत होंगे एवं इसके साथ–साथ शोध के चरणों के विषय में भी ज्ञान प्राप्त करेंगे जिसका विवरण निम्नवत है–

ए आइन्स्टीन तथा एन एनफैल्ड के अनुसार,''समस्या का प्रतिवादन प्रायः इसके समाधान से आवश्यक है।"

समस्या के चुनाव के साथ समस्या से सम्बन्धित अवधारणाओं, परिभाषाओं,वाक्य विन्यासों और परिकल्पनाओं का विवरण प्रस्तुत किया जाना आवश्यक है । सामाजिक अनुसन्धान में शीर्षकों के चुनाव का क्षेत्र उतना ही व्यापक है जितना कि सामाजिक व्यवहार का इसलिए अनुसन्धान का विषय तर्कसंगत होना अत्यंत आवश्यक है । एक सामाजिक अनुसन्धानकर्ता को व्यक्तित्व एवं पर्यावरण दोनों का ही ज्ञान होना नितांत आवश्यक है ।

शोध समस्या निर्माण के चरणों का विवरण निम्नवत है –

1- समस्या का कथन

2- समस्या की प्रकृति

3- उपलब्ध साहित्य का पुर्नावलोकन

इस प्रकार से किसी अनुसन्धान हेतु समस्या के चयन में विचारों को एकत्रित करने के अनेक श्रोत हैं । जैसे लिखित उपलब्ध सामग्री ,व्यक्तियों के अनुभव ,व्यक्तिगत बातचीत,तथ्य ,मूल्य एवं सिद्धांत ,शोध ग्रन्थ, शोध विषय से सम्बन्धित विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं को शामिल किया जाता है । इसके साथ ही यह भी ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि जो व्यक्ति या अनुसन्धानकर्ता अनुसन्धान करने जा रहा है उसका व्यक्तित्व एवं वहाँ का पर्यावरण से सम्बन्धित कारक भी अनुसन्धान पर प्रभाव डालते है । क्योंकि अनुसंधानकर्ता के अपने निजी मूल्य विश्वास मनोव्रतियाँ एवं अभिरुचियां होती है और फिर एक अनुसन्धान कार्य बहुत ही धैर्य,परिश्रम,द्रढता की आवशयकता होती है जब अनुसंधानकर्ता द्वारा चुना गया विषय उसके अपनी रूचि का एवं उसके व्यक्तित्व को मेल खाता हुआ होता है तो अधिक उचित होता है इसी को संदर्भित करते हुए वाईटहेड ने स्पष्ट किया है कि –

''गुण सम्बन्धी निर्णय भौतिक विज्ञानों की विषयवस्तु के अंग नहीं है किन्तु वे इसकी उत्पत्ति की प्रेरणा के अंग है'' , अन्वेषण के लिए वैज्ञानिक क्षेत्रों के अंशों का चेतन चुनाव किया जाता है और इस चेतन चुनाव में मूल्यों के निर्णय सम्मिलित हैं।''

इस प्रकार से अनुसन्धान समस्या या अनुसन्धान शीर्षक के चुनाव के दौरान कुछ प्रश्नों के उत्तर खोजना अत्यंत आवश्यक है जैसे –

१. उक्त अनुसन्धान विषय पर क्या पूर्व में भी कोई कार्य किया गया है ,यदि किया गया है तो उसका लिखित दस्तावेज उपलब्ध है क्या ,और क्या शोधकर्ता ने उसका अध्ययन किया है ।

२. उक्त अनुसन्धान की उपयोगिता क्या होगी ।

३. उक्त अनुसन्धान का शीर्षक अनुसन्धान योग्य है या नहीं ।
४. क्या उक्त अनुसन्धान समाज के लिये उपयोगी होगा ।
५. इस कार्य में अनुसन्धान किया गया विषय समाज विरोधी तो नहीं है । क्योंकि ऐसा है तो विरोध का सामना भी किया जा सकता है ।

इस प्रकार से अनुसन्धान के कुछ अंगभूत इस प्रकार से हो सकते है –
१. अनुसन्धान में कौन लोग सम्मलित होंगे एवं इसका विस्तार क्षेत्र क्या होगा ।
२. अनुसन्धान के उद्देश्य क्या है ?
३. अनुसन्धान के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु साधन क्या उपलब्ध है ।
४. वह पर्यावरण जिससे अनुसन्धान सम्बन्धित है (प्रत्यक्ष एवं अपत्यक्ष रूप से सम्मलित लोग)

5.3अनुसंधान की प्रकृति

इस प्रकार से उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए यह जांचना आवश्यक है कि अनुसन्धान की प्रकृति क्या है, अर्थात आपके द्वारा किया जाने वाला अनुसन्धान व्यावहारिक होगा ,विशुद्ध होगा अथवा यह क्रिया शोध पर आधारित होगा । इसमें आपकी प्राथमिकताएं क्या होंगी एवं क्या यह समस्या का स्पष्ट प्रस्तुतीकरण करने में सक्षम होगा और समस्या की खोज में मददगार साबित होगा अथवा नहीं यहाँ यह भी ध्यान रखने योग्य है कि इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु स्पष्ट ,तर्कसंगत एवं सम्पूर्ण सुचना को प्रश्नावली या अनुसूची में समाहित किया जाना अत्यंत आवश्यक है । शोध समस्या के उचित प्रतिपादन हेतु क्रमबद्ध अध्ययन में क्रमशःप्रथमता आपके द्वारा चुने गये विषय या शीर्षक में समस्या का स्पष्ट प्रत्यक्षीकरण होना आवश्यक है अर्थात समस्या का उचित रूप में और स्पष्ट ढंग से स्पष्टीकरण होना चाहिए । इसके साथ समस्या की प्रकृति समस्या क्षेत्र का परिसीमन (परिसीमन उतना ही हो जितना कार्य शोध कर्ता द्वारा सफलतापूर्वक सम्हाला जा सके)समस्या से सम्बन्धित मान्यताओं एवं उप्कल्पनाओं का स्पष्ट एवं विस्तृत वर्णन होना चाहिए । समस्या के बाद में उससे सम्बन्धित सभी पहलुओं का स्पष्ट चित्रण किया जाना चाहिए ।

जहोडा एवं अन्य द्वारा स्पष्ट शब्दों में यह लिखा गया है कि –
"प्रतिपादन प्रक्रिया के दौरान अनुसंधान कार्यरीति में बाद में आने वाले चरणों की आशा किए जाने की आवश्यकता है ताकि यह आश्वासन प्रदान किया जा सके कि समस्या का प्रतिपादन ऐसे ढंग से किया गया है । जिसके साथ कार्य उपलब्ध प्रविधियों के साथ किया जा सकता हे। यह आशा वैज्ञानिक तथा प्रायोगिक चरणों से सम्बन्धित है। सर्व प्रमुख बात यह है कि समाज वैज्ञानिक को अपने मस्तिष्क में यह बात सदैव रखनी चाहिए कि प्रदिपादन कभी भी समाप्त न होने वाली प्रक्रिया है जो पूछतांछ के सभी चरणों में व्याप्त होती है।"

शोध समस्या के प्रतिपादन से पूर्व शोध कर्ता को कुछ प्रश्न अपने आप में स्पष्ट जरुर करना चाहिए जैसे–शोध समस्या के विषय में उसकी जानकारी कितनी है एवं इन जानकारियों के श्रोत क्या हैं । उपलब्ध जानकारी की पृष्ठभूमि क्या है । इसकी सम्पूर्ण जानकारी होना जरुरी है । धन,समय एवं प्रयासों की जानकारी के साथ स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए । उक्त तथ्यों के मार्गदर्शन के श्रोत क्या है । उपकल्पनाओं के प्रयोग हेतु अवधारणायें,चारों एवं प्रायोगिक द्रष्टिकोणों की उपयुक्त एवं स्पष्ट परिभाषा प्रस्तुत की जानी चाहिए ।

5.4 कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली

कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली के प्रयोग की अनिवार्यता होनी चाहिए । अनुसन्धान की समस्या उपकल्पना के रूप में हो या अन्वेश्नातामक अथवा विवरणात्मक रूप में पर उसकी वैज्ञानिक शब्दावली का वर्णन किया जाना आवश्यक है । इसके साथ ही कार्यकारी परिभाषा जो आपके कार्य को पूर्ण करने में स्पष्टता प्रदान की जायेगी का वर्णन किया जाना चाहिए । क्योंकि प्रत्येक विज्ञान अपने शब्दों एवं अवधारणाओं को विकास के परिणामों से अवगत करने हेतु ही इसका विकास कर्ता है

एफ डब्ल्यू वेस्टावे ने लिखा हैः–

"शब्द कोष की स्थूल कार्यकारी परिभाषाएं केवल शब्दों के अर्थ पर कुछ प्रकाश डालती है किन्तु जब शब्दों का वास्तविक प्रयोग बलपूर्ण कथनों में किया जाता है तो इनकी अनिश्चितता संदेह को उत्पन्न करती है।"

5.5 अवधारणाएं

अवधारणा को साधारण रूप से इस प्रकार समझ सकते है कि यह समान्यता भाववाचक अभिव्यक्ति है जिसमे अवधारणाएँ प्रमुख रूप से तथ्यों द्वारा व्यक्त की जाने वाली घटनाओं का संकेतिकरण होता है । लैबोविज तथा हेजडार्न के अनुसार ''एक अवधारणा ऐसा शब्द अथवा संकेत है जो अन्यथा विभिन्न प्रकार की घटनाओं में समानता का प्रतिनिधित्व करता हे। उदाहरणार्थ, यद्यपि मनुष्य अपने अनेक वैयक्तिक लक्षणों में भिन्न होते हैं किन्तु सभी को कुछ जैविक विशेषताओं में समानता के आधार पर स्तनधारी की श्रेणी मे वर्गीकृत किया जा सकता है।'' अवधारणायें वैज्ञानिक उपयोग के साथ मानवीय क्रिया संचार हेतु भी आवश्यक है।

5.6 परिकल्पना/ उपकल्पना

परिकल्पना अथवा उपकल्पना को दो या दो से अधिक चारों के बीच अनुमानित संबंधों के तथ्यों के स्पष्टीकरण के रूप में समझ सकते है। अनुसंधानकर्ता द्वारा जब किसी समस्या अथवा विषय का चयन किया जाता है तो वह एक कार्यकारी परिभाषा का निर्माण करता है जिसको वह एक आस्थाई आधार के रूप में प्रयोग करता है ,जिसको एक आधे स्तंभ मानकर वह कार्य को आगे बढाता है । यह परिकल्पना बाद में जाँच के पश्चात स्पष्ट होती है कि यह सही थी अथवा गलत द्यायह शोध के आरंभ में एक प्रस्तावित जाँच होती है जिसको परिक्षण के पश्चात स्पष्ट किया जाता है ।इसका आधार संदर्भित विषय से संबंधिय शोधकर्ता का ज्ञान होता है जो उपकल्पना का आधार स्तंभ होता है। इस सन्दर्भ ये इसकी अर्थात परिकल्पना की जाँच किया जाना आवश्यक होता है एवं शोधकर्ता द्वरा बनायीं गई। उपकल्पना उसके द्वारा चुने गये अध्ययन के विषय से सम्संबंधित होनी चाहिय द्यपरिकल्पना तर्कपूर्ण होनी चाहिए एवं मितव्ययी होनी चाहिए द्यपरिकल्पना आपके द्वारा प्रयोग किये जा रहे सिद्धांतों एवं तथ्यो से मेल खाती होनी चाहिए तभी आपका शोध विषय के तरफ उन्मुख होगी क्योंकि उदाहरण के तौर पर यदि आप सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत शोध कर रहे है तो निश्चित रूप से उसी से सम्बन्धित सिद्धांतों का प्रयोग करेंगे और उसी से सम्बन्धित समस्या के हल की उर उन्मुख होगें अतः यह ध्यान दिया जाना चाहिए की उपकल्पना विषय से इतर नहीं निर्मित की जानी चाहिए । एक परिकल्पना को अवधारणात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए ,एवं यह वस्तुनिष्ट होनी चाहिए । परिकल्पनाओं के निर्माण में जैसा कि पहले ही कहा गया है की उस विषय से सम्बन्धित ज्ञान ही आधार है उसी को ध्यान में रखते हुए परिकल्पना निर्माण हेतु कुछ सहायक तथ्यों का वर्णन किया जा रहा है इसमें शोधकर्ता के व्यक्तिगत अनुभव , सम्बन्धित विषय में पूर्व में किये

गये शोध के परिणाम,शोध प्रपत्र ,पुस्तकों ,विषय विशेषज्ञ के अनुभव एवं मत इत्यादि का सहारा लिया जाता है ।

5.7 चर

चर को साधारण शब्दों में एक अवधारणा के परिमाण के पहलू के रूप में समझा जा सकता है । जो एक इकाई अथवा एक समय में एक से अधित इकाईयों के विभिन्न समयों में एक से अधिक मान ग्रहण करता हैद्य पुरुष और महिला के जैविक विभिन्नता एवं भार में अंतर इत्यादि ,एक के गुण – दोष दूसरे से भिन्न है । चर दो प्रकार के होते है स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर । आश्रित चर वह है जिसके विषय में भविष्यवाणी की जाती है वही स्वतंत्र चर वह है जो भविष्यवाणी करता हैद्य ये परिवर्तनशील एवं सक्रिय चर कहलाते है । वे चर जिनकी परिभाषा की जा सके वे निर्धारित चर कहलाते है । एक बार प्रयोग में लाए जाने वाले चरों की परिभाषा हो जाने के पश्चात यह निर्णय लिया जाता है कि चरों को स्थिर रखते हुए या परिवर्तित करते हुए कार्य किया जाना है तो यह परिवर्तन किस सीमा तक किया जायेगा द्वयहाँ यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि अनुसन्धान की उपकल्पना एवं शोध अध्ययन के उद्देश्य एवं उस परिस्थिति पर निर्भर करता है जिसपर समस्या का प्रतिपादन किया जाता है द्वउदाहरण के तौर पर यह कहा जा सकता है कि समस्या जितनी विशिष्ट एवं अपरिवर्तनशील परिस्थिति के लिये खोजी जानी है तो चरों को एक विशिष्ट मूल्य पर स्थिर रखा जायेगा और समस्या जितनी ही सामान्य होगी उतने अधिक चरों में और उतनी ही अधिक सीमा में परिवर्तन करने पड़ेंगे ।

इस प्रकार से शोध समस्या के निर्धारण हेतु उपरोक्त स्तरों से होकर गुजरना होता है तब एक शोध समस्या का निर्माण होता है जिसपर पुनः शोध किया जाना संभव होता है ।
शोध प्रक्रिया के चरणों का अध्ययन करने हेतु यहाँ पर इसके चरणों का संछिप्त विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है ।

१. शोध समस्या का निर्माण / समस्या का कथन
२. उपलब्ध साहित्य का पुनरावलोकन
३. उपकल्पना अथवा परिकल्पना का निर्माण
४. अध्ययन के उद्देश्य
५. शोध अध्ययन की प्ररचना
६. शोध अध्ययन की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र
७. अध्ययन का समग्र एवं निदर्श
८. निदर्शन की विधि
९. आंकड़ों के संग्रह की विधि
१०. आंकड़ों के संग्रह के प्राथमिक एवं द्वितीयक श्रोत
११. प्राप्त आंकड़ों का विष्ले"ाण
१२. परिकल्पना की जाँच
१३. सामान्यीकरण एवं व्याख्या करना
१४. प्रतिवेदन तैयार करना
१५. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 सारांश

किसी भी सामाजिक शोध से तात्पर्य यह होता है कि पुनः अनुसन्धान के माध्यम से शोध करके उन तथ्यों को उजागर करना जिनको आपने अपनी शोध समस्या के लिये चुना है । समाजिक शोध को साधारण अर्थों में इस प्रकार से समझ सकते है कि मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है वह अपने आस पास के वातावरण को समझने हेतु तो तरीकों का प्रयोग कर्ता है या तो वह नियंत्रित पूछताछ कर्ता है या आनियांत्रित रूप से तथ्यों का संकलन कर जानकारी प्राप्त करता है,जब वह अनियंत्रित रूप से पूछताछ कर जानकारी इकठ्ठा करता है तो इसे सामान्य ज्ञान की श्रेणी में रखते है परन्तु जब वह पूछताछ एक विशेष दिशा में अनुसन्धान की पद्धति का प्रयोग करते हुई की जाये तो इसे अनुसन्धान की श्रेणी में रखते है क्योंकि इसमें सब कुछ अनुसन्धान की पद्धति के अनुरूप होता है और इससे प्राप्त ज्ञान सामाजिक अनुसन्धान द्वारा प्राप्त शोध के सार के रूप में परिलक्षित होता है । सामाजिक शोध को करने के लिये जो प्रथम बात सामने आती है वह है शोध समस्या का चयन इस पर ही समस्त शोध का केंद्र बिदु टिका होता है अतः शोध समस्या के चयन में कुछ निर्धारित मानदंडों के आधार पर शोध समस्या का प्रतिपादन किया जाता है । इस अध्याय में आपने यह जाना कि शोध समस्या का निर्धारण किस प्रकार होता है और इसमें किस प्रकार के प्रयास द्वारा अनुसंधान की शोध समस्या का निर्माण संभव होता है ।

5.9 शब्दावली

- शोध–ज्ञान की खोज में प्रमाणीकृत कार्यरीति
- अवधारणा –दृविभिन्न प्रकार की घटनाओं में समानता का प्रतिनिधित्व
- उपकल्पना– दृकार्यकरण संबंधों का पूर्वानुमान
- चर– अवधारणा के परिमाण का पहलू
- स्वतंत्र चर–भविष्यवाणी करने में सामर्थ्य
- आश्रित चर – जिसके विषय में भविष्यवाणी की जाती है

5.10 अभ्यास प्रश्न(लघु प्रश्न)

१. सामाजिक अनुसन्धान से आप क्या समझते है ?
२. शोध समस्या क्या है ?
३. चर से आप क्या समझतें है ?
४. चर कितने प्रकार के होते है ?
५. परिकल्पना अथवा उपकल्पना से आप क्या समझतें है ?

5. 11सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. गुडे एवं हाट १९५२ मेथेड्स ऑफ सोशल रिसर्च मैकग्रा हिल कम्पनी न्यूयार्क-|
२. सरंताकोश एस -सोशल रिसर्च, मैकमिलन -लन्दन -१९९८ |
३. यंग ,पी० वी० -साइंटिफिक सोसिअल सर्वेज एंड रिसर्च इंडियन रिप्रिंटर,फोर्थ प्रिंटिंग प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली १९७७ |
४. सिंह ,सुरेन्द्र -सामाजिक शोध ,उत्तर प्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी लखनऊ |

5.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

१. कोठारी की० आर० -रिसर्च मेथोडोलॉजी,मेथोड्स एंड टेक्निक्स २००४ |
२. बी सिक्नर ,दि आपरेशनल एनालिसिस आफ साइकोलोजिकल टर्म्स |

5.13 निबंधात्मक प्रश्न

१. शोध समस्या के निर्धारण के आयामों का वर्णन कीजिए |
२. सामाजिक शोध के चरणों का वर्णन कीजिये |

इकाई -6

वर्णात्मक ,अन्वेषणात्मक, प्रयोगात्मक एवं निदानात्मक शोध प्ररचना

Descriptive, Explanatory, Experimental & Diagnostic Research Design

इकाई की रूपरेखा

6.0 इकाई के उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 शोध प्ररचना का अर्थ एवं प्रकार एवं प्रमुख अंगभूत
6.3 वर्णात्मक शोध प्ररचना
6.4 अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना
6.5 प्रयोगात्मक शोध प्ररचना
6.6 निदानात्मक शोध प्ररचना
6.7 सारांश
6.8 शब्दावली
6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.11 निबंधात्मक प्रश्न

6.0 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :-

- सामाजिक अनुसन्धान में शोध प्ररचना की अवधारणा को समझ सकेंगे |
- शोध प्ररचना के प्रकारों का अध्ययन कर सकेंगे |
- शोध प्ररचना की उपयोगिता को समझ सकेंगे |
- शोध की प्रकृति के अनुसार शोध प्ररचना का चुनाव करना सीख सकेंगे |

6.1 प्रस्तावना

अनुसन्धान या शोध की प्ररचना को एक ऐसी योजना के रूप में समझ सकते हैं कि इसके अंतर्गत हम पहले से ही समस्या के प्रतिपादन अथवा चुनाव से लेकर अनुसंधान प्रतिवेदन के अंतिम चरण तक के विषय में भलिभांति सोच समझ विचार कर तथा सभी उपलब्ध विकल्पों एवं साधनों को ध्यान में रख कर के इस प्रकार से निर्णय लिये जाते है कि न्यूनतम समय , प्रयासों,लागत एवं व्यय से अनुसन्धान के उद्देश्यों की प्राप्ति प्रभावपूर्णता ढंग से अधिकतम प्राप्त की जा सके | इस प्रकार से किसी शोध की प्ररचना यह तय करती है कि उक्त शोध को आप क्या दिशा देना चाहते है | आप शोध द्वारा समस्या के कारणों की व्याख्या करना चाहते है ,उसका विवरण तैयार करना चाहते है या फिर कोई नया प्रयोग

करना चाहते है अथवा समस्या के निष्पादन को निदान के रूप में प्रस्तुत करना चाहते है |इस अध्याय में हम सामाजिक शोध हेतु प्रयोग की जा रही शोध प्ररचनाओं का अध्ययन करेंगे |

6.2 शोध प्ररचना का अर्थ एवं प्रकार एवं प्रमुख अंगभूत

अनुसन्धान को क्रमबद्ध एवं प्रभावपूर्ण ढंग से न्यूनतम प्रयासों ,समय एवं लगत के साथ संचालित करने हेतु प्ररचना का निर्माण आवश्यक है |यधपि किसी भी ढंग के प्रयोग द्वारा अनिश्चितता को पूर्णरूप से समाप्त नहीं किया जा सकता है |किन्तु क्रमबद्ध रूप से वैज्ञानिक ढंग का प्रयोग करते हुए अनिश्चितता के उन तत्वों को कम किया जा सकता है |जो सुचना की कमी के परिणामस्वरुप उत्पन्न होते है|अनुसन्धान के लिये प्रस्तावित् प्रश्नों के लिये विकल्पीय उत्तरों की उपयुक्तता के विषय में निर्णय लेने के लिये आवश्यक परिणामों को संयोग पर् आधारित ढंग का प्रयोग करते हुए न प्राप्त करते हुए क्रमबद्ध रूप से यथासंभव अधिक से अधिक नियन्त्रित ढंग का प्रयोग करते हुए प्राप्त किया जाता है |वास्तव में समस्या प्रतिपादन के अंतर्गत हम सूचना के उन प्रकारों का विशिष्ट विवरण प्रस्तुत करते है जो यह हमें आश्वाशन देते है ,कि प्रस्तावित प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने के लिये इच्छित एवं अवशयक प्रमाण उपलब्ध हो जायेगे जबकि अनुसन्धान प्ररचना का निर्माण करते हुए हम आवश्यक एवं इच्छित प्रमाणों के संग्रह में त्रुटियों से यथा संभव बचना तथा प्रयासों ,समय एवं लगत को कम करना चाहते है |

सामाजिक अनुसन्धान के क्षेत्र में प्रमुख लेखकों द्वारा की गई प्ररचना की परिभाषाएं प्रस्तुत हैं :-

- आर० एल० एकाफ० के अनुसार ,'प्ररचित करना नियोजित करना है ,अर्थात प्ररचना उस परिस्थिति के उत्पन्न होने से पूर्व निर्णय लेने की प्रक्रिया है जिसमें निर्णय को लागु किया जाता है |यह एक आशान्वित परिस्थिति को नियंत्रण में लेन की और निर्देशित ,जानबूझकर की गई आशा की प्रक्रिया है |"
- क्लेयर सैलिज तथा अन्य के अनुसार,"एक अनुसन्धान की प्ररचना आंकड़ों के संग्रह एवं **fo'ys"k.k** की शर्तों की ऐसी व्यवस्था है जो अनुसन्धान के उद्देश्यों की संगतता को कर्यरीतियों में बचत के साथ सम्मिलित करने का उद्देश्य रखती है |"
- सैनफोर्ड लैवोविज एंड रोबर्ट हेजडार्न के अनुसार,''एक अनुसन्धान प्ररचना उस तार्किक ढंग को प्रतुत करती है जिसमें व्यक्तियों एवं अन्य इकाईयों की तुलना एवं **fo'ys"k.k** किया जाता है ,यह आंकड़ों के विवेचन का आधार है |प्ररचना का उद्देश्य ऐसी तुलना का आश्वाशन दिलाना है जो विकल्पीय विवेचना से प्रभावित न हो |''

  सारांश में ,अनुसन्धान प्ररचना वहीं तक विधितंत्रीय ढंग से प्रारचित होती है जिस सीमा तक यह नियोजित होता है तथा अनुसन्धान सम्बन्धी निर्णय लेने के ढंग के

मूल्यांकन का अवसर प्रदान करती है ,तथा इस ढंग को मूल्यांकन किये जाने योग्य बनाती है |

अनुसन्धान प्ररचना के दो मौलिक उद्देश्य होते है :

- ❖ अनुसन्धान प्रश्नों के उत्तर प्रदान करना |
- ❖ प्रसारण को नियन्त्रित करना |

अनुसन्धान प्ररचना के प्रमुख अंगभूत है :-

१. समस्या का प्रतिपादन करना |
२. वर्तमान अनुसन्धान कार्य को समस्या से स्पष्ट रूप से सम्बन्धित करना |
३. वर्तमान अनुसन्धान कार्य की सीमाओं को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना |
४. अनुसन्धान के विभिन्न क्षेत्रों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करना |
५. अनुसन्धान परिणामों के प्रयोग के विषय में निर्णय लेना |
६. पर्यवेक्षण , विवरण अथवा परिमापन के लिये उपयोक्त चरों का चुनाव करना तथा उनकी स्पष्ट परिभाषा करना |
७. अध्ययन के क्षेत्र तथा समग्र का उचित चुनाव एवं उनकी परिभाषा प्रस्तुत करना |
८. अध्ययन के प्रकार तथा इसके विषय क्षेत्र के विषय में विस्तृत निर्णय लेना |
९. अध्ययन के लिये उपयुक्त ढंगों एवं प्रविधियों का चुनाव करना |
१०. परिकल्पनाओं को परिचालात्मक स्वरुप प्रदान करते हुए इस प्रकार व्यक्त करना कि इनका उचित परिक्षण किया जा सके |
११. अध्ययन के दस्तावेजी श्रोतों के रूप में उपलब्ध साहित्य का सिंहावलोकन करना |
१२. संगृहीत आंकड़ों के संपादन की विस्तृत व्यवस्था का उल्लेख करना |
१३. आंकड़ों को प्रयोग बनाने हेतु की समुचित व्यवस्था का विकास करना |
१४. पूर्व परिक्षण एवं पाइलेट अध्ययनों का प्रावधान करना |
१५. उत्तरदाताओं के चुनाव एवं प्रशिक्षण के ढंगों एवं कार्यरितियों का उल्लेख करते हुए उन्हें कार्य संतोष का अनुभव करना तथा अनुसन्धान संस्था के साथ सामंजस्य की स्थिति में रखने के लिये कार्य की शर्तों एवं परिस्थितियों को अधिक से अधिक प्रेरणादायक बनाना |

6.3 वर्णात्मक शोध प्ररचना

वर्णनात्मक अनुसंघान का उददेष्य किसी अध्ययन विषयक के बारे में यथार्थ तथा तथ्य एकत्रित करके उन्हें एक विवरण के रूप में प्रस्तुत करना होता है | सामाजिक जीवन के अध्यन से सम्बन्धित अनेक विषय इस तरह होते है जिनका अतीत में कोई गहन अध्ययन प्राप्त नही होता हे ऐसी दषा में यह आवश्यक होता है कि अध्ययन से सम्भंदित समूह समुदाए अथवा विषय के बारे में अधिक से अधिक सूचनाए एकत्रिक करके उन्हें जनसामान्य

के समक्ष प्रस्तुत की जाए ऐसे अध्ययनो के लिये जो अनुसंघान किया जाता है | उसे वर्णनात्मक अनुसंघान कहते है | इस प्रकार के अनुसंघान में किसी पूर्व निर्धारित सामाजिक घटना, सामाजिक परिस्तिथि अथवा सामाजिक समस्या के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रिक करके उनका तार्किक **fo'ys"k.k** किया जाता है, एवं निष्कर्ष निकाले जाते है | तथ्यों को एकत्रित करने के लिये, प्रश्नावली, साक्षात्कार अथवा अवलोकन आदि किसी भी प्रविधि का प्रयोग किया जा सकता है | ऐसे अनुसंघान को स्पष्ट करने के लिये जनगणना उपक्रम का उदहारण लिया जा सकता है | जनगणना में भारत के विभिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न विशेषताओं से युक्त समूहों का संख्यात्मक तथा, आंशिक तौर पर, गुणात्मक विवरण दिया जाता है |

6.3.1वर्णनात्मक अनुसंघान के चरण

1. अध्ययन विषय का चुनाव
2. अनुसंघान के उद्देश्य का निर्धारण
3. तथ्य संकलन की प्रविधियों का निर्धारण
4. निर्दशन का चुनाव
5. तथ्यों का संकलन
6. तथ्यों का **fo'ys"k.k**
7. प्रतिवेदन को प्रस्तुत करना

6.4 अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना

सामाजिक अनुसन्धान के अंतर्गत हम सामान्य नियमों का अन्वेषण करते है | इसके अंतर्गत हम दी गई परिस्थिति की विशेषताओं को व्यक्त करने का प्रयास करते है | इसमें समस्या के विभिन्न कारणों के आशय से सम्बन्धित खोज की जाती है| इस प्रकार के अध्ययन सिर्फ एक विशिष्ट आशय या ढंगों का ही प्रयाग नहीं किया जाता है अपितु इसके अंतर्गत किसी भी ढंग का प्रयोग किया जा सकता है ; जिसमे सर्वेक्षण के उद्देश्यों का प्रतिपादन ,आंकड़ों के संग्रह के लिये उपयुक्त ढंगों के विकास ,प्रतिदर्श के चुनाव ,आंकड़ों के संग्रह एवं संसाधन ,परिणामों के विष्ले"ाण एवं विवेचन और परिणामों के प्रतिवेदन की कार्यरीतियों को भी प्रयोग में लाया जाता है |

इसके अंतर्गत क्रमबद्ध अन्वेषण अथवा प्रतिपादनात्मक अध्ययन किया जाता है |इस प्रकार की प्ररचना का उद्देश्य विशिष्ट क्षेत्र में ऐसे प्रश्नों ,अवधारणाओं एवं परिकल्पनाओं का पता लगाया जाता है जिसका अभी तक विकास नहीं हो पाया है |इस प्रकार के अध्ययन अन्य अध्ययनों को आधार प्रदान करने के सिद्धांतों का विकास करतें है तथा इन्हें अनुभव सर्वेक्षण कहना उपयुक्त है |इसके अंतर्गत अकेले समग्रों के सूक्ष्म सांखिकीय अध्ययन अथवा

एक दिये हुए परिमंडल के अंतर्गत परिकल्पनाओं के विकास के लिये विभिन्न समग्रों की तुलना सम्मिलित है |

इस प्रकार के क्षेत्र अध्ययनों तीन प्रमुख उद्देश्य होते है :-

- ❖ क्षेत्र –परिस्थितियों के अंतर्गत महत्वपूर्ण चरों का पता लगाना |
- ❖ चरों के सम्बन्ध का पता लगाना |
- ❖ आगे चलकर कठोर परिकल्पनाओं के परिक्षण के लिये समुचित आधार तैयार करना |

6.5 प्रयोगात्मक शोध प्ररचना

यह प्ररचना परिकल्पनाओं के परिक्षण से सम्बन्धित है तथा नियंत्रण का तत्व आवश्यक रूप से इसके अंतर्गत पाया जाता है | समाज विज्ञान अनुसन्धान में प्रयोग करना एक क्रिया है| यह वह क्रिया है जिसे हम अनुसन्धान के लिये की गई पूंछ – ताछं कहते है | इस प्रकार से प्रयोग ऐसी परिस्तिथि में की गई पूंछ – ताछं है जिसमें सम्मिलित वस्तुओं एवं घटनाओं को अनुसंधानकर्ता वांछित ढंग से परिवर्तित कर सकता है | समाज विज्ञान अनुसन्धान में प्रयोग करना निश्चित ही पूंछ–ताछं है परतु यहाँ पर यह ध्यान रखने योग्य आवश्यक है कि समाज विज्ञान अनुसन्धान में प्रत्येक पूंछ – ताछं प्रयोग की श्रेणी में नहीं रखी जा सकती है | इस प्रकार से कहा जा सकता है कि सामाजिक अनुसन्धान में पूंछ–ताछं एक नियन्त्रित रूप में की गई खोज है जिसका प्रयोग हम अनुसन्धान की पूर्ति हेतु करते है | नियंत्रण के अंतर्गत एवं हेर फेर एवं परिवर्तन ही प्रयोग कहलाता है |

मेरी जहओदा तथा अन्य के मतानुसार,"अपने सबसे अधिक स्थूल अर्थ में एक प्रयोग को प्रमाण के संग्रह के संगठन के एक ऐसे ढंग में समझा जा सकता है जिससे परिकल्पना की सत्यता के विषय में परिणाम निकलने की अनुमति हो सके |"

एक प्रयोगशाला प्रयोग की आवशयकता यह है कि इसके अंतर्गत नियन्त्रित परिस्थितियों में एक चर् में परिवर्तित करते हुए इन परिवर्तनों के प्रभाव का पर्यवेक्षण आश्रित चर् पर किया जाता है |प्रयोगात्मक परिवर्तन के सम्बन्ध में सदैव ही यह ध्यान रखने योग्य है कि परिवर्तन यथासंभव एस प्रकार किया जाएँ कि उत्तरदाताओं को कृत्रिमता का कम से कम आभास हो |यथासंभव उत्तरदाताओं को प्रयोग के हानिकारक प्रभावों से बचने तथा उन्हें सहयोग प्रदान करने के लिये प्रेरित करने हेतु प्रयास किया जाना चाहिए |

प्रयोगात्मक समूह में अनुसंधानकर्ता परिकल्पना को 'भिन्नता के सिद्धांत' की दृष्टि से देखता है |'भिन्नता के सिद्धांत' का आवश्यक तत्व यह है कि किसी भी कारक को किसी अन्य घटना के कारण के रूप में तब तक नहीं स्वीकार किया जा सकता है जब तक कि यह सिद्ध न हो जाये कि जहाँ कहीं भी यह करक घटित होता है वहीँ यह घटना भी घटित होती है | नियन्त्रित समूह के अंतर्गत परिकल्पना की जाँच 'भिन्नता के सिद्धांत' के आधार पर की जाती है|

6.6 निदानात्मक शोध प्ररचना

इस प्रकार के अध्ययनों में प्रायः विवरण प्रतुत करने अथवा निदान करने का प्रयास किया जाता है सामाजिक अनुसन्धान के अंतर्गत हम सामान्य नियमों का अन्वेषण करने के साथ विशिष्ट परिस्थितियों का निदान खोजते है | इसमें हम दी गई परिस्थितियों की विशेषताओं को व्यक्त करने का प्रयास करतें है| निदानात्मक अध्ययन कारणात्मक संबंधों को व्यक्त करने एवं समाजिक क्रिया के लिये विभिन्न आशयों का पता लगाने से सम्बन्धित है| इस प्रकार के अध्ययन एक विशिष्ट ढंग अथवा ढंगों के प्रयोग से ही सम्बन्ध नहीं रखते बल्कि इनके अंतर्गत किसी भी ढंग का प्रयोग किया जा सकता है| यह आम तौर पर् निम्न बिंदुओं पर् कार्य करतें है :-

- ❖ सर्वेक्षण के उद्देश्यों के प्रतिपादन में |
- ❖ आंकड़ों के संग्रह के लिये उपयुक्त ढंगों के विकास में |
- ❖ प्रतिदर्श के चुनाव में |
- ❖ आंकड़ों के संग्रह एवं संसाधन में |
- ❖ परिणामों के विष्ले"णएवं विवेचन में |
- ❖ परिणामों के प्रतिवेदन की कार्यरीतियों के प्रयोग में|

6.7 शब्दावली

१.वर्णात्मक अनुसंधान : वर्णात्मक सामाजिक अनुसंधान में घटना के सम्बन्ध में प्रमाणिक तथ्य एकत्रित करके उनका क्रमबद्ध एवं तार्किक वर्णन करना है।

२.परीक्षणात्मक अनुसंधान : ऐसा अनुसंधान जिसमें नियंत्रित दशाओं के अन्तर्गत मानवीय सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

३.अन्वेषणात्मक अनुसंधान : किसी घटना के सम्बन्ध में प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने हेतु किया गया

४.अनुसंधान : जिससे कि मुख्य अनुसंधान की रूपरेखा एवं उपकल्पना का निर्माण किया जा सके।

५.क्रियात्मक अनुसंधान : समाज की मौजूदा दशाओं को परिवर्तित करने के उद्देश्य से किया गया अनुसंधान चाहे गन्दी बस्ती हो या प्रजातीय तनाव

६.निदानात्मक अनुसन्धान : सामान्य नियमों का अन्वेषण करने के साथ विशिष्ट परिस्थितियों का निदान खोजने की प्रक्रिया

6.8 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

१.सामाजिक अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों की चर्चा उदाहरण सहित कीजिये।

२.विशुद्ध एवं व्यावहारिक सामाजिक अनुसंधान की विशेषताओं को समझाइये।

३.अन्वेषणात्मक और वर्णनात्मक सामाजिक अनुसंधान को उदाहरण सहित समझाइये।

४. निदानात्मक अनुसन्धान को परिभाषित कीजिये

५. व्याख्यात्मक अनुसन्धान से क्या समझते है

६. प्रयोगात्मक अनुसन्धान प्ररचना की विशेषताएं बताएं

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. यंग ,पी० वी० –साइंटिफिक सोसिअल सर्वेज एंड रिसर्च इंडियन रिप्रिंटर,फोर्थ प्रिंटिंग
२. सी.ए. मोजर सर्वे मैथड्स इन सोशल इन्वेस्टीगेशन।
३. आर० एल० एकाफ एदि डिजाईन ऑफ सोशल रिसर्च
४.मेरी जहोदा तथा अन्य एरिसर्च मेथडस् इन सोशल रेलेशंस
५. गुडे एवं हाट-मेथेड्स ऑफ सोशल रिसर्च मैकग्रा हिल कम्पनी न्यूयार्क १९५२ |
६. सरंताकोश एस –सोशल रिसर्च, मैकमिलन -लन्दन -१९९८ |
७.प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली १९७७ |
८.सिंह ,सुरेन्द्र -सामाजिक शोध ,उत्तर प्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी लखनऊ |

6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

१. कोठारी की० आर० –रिसर्च मेथोडोलॉजी,मेथोड्स एंड टेक्निक्स २००४ |
२. बी सिक्नर ,दि आपरेशनल एनालिसिस आफ साइकोलोजिकल टर्म्स |

इकाई– 7 तुलनात्मक विश्लेषण या पद्धति
Comparative Analysis in Social Research

7.0 इकाई का उद्दे"य
7.1 प्रस्तावना
7.2 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाषा
7.2.1 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग
7.2.2 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि
7.2.3 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की उपयोग से पूर्व आव"यकतायें
7.2.4 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का महत्व
7.2.5 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में कठिनाइयॉ
7.3 सारां"ा
7.4 शब्दावली
7.5 अभ्यास प्र"नों के उत्तर
7.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
7.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
7.8 निबंधात्मक प्र"न

7.0 इकाई का उद्दे"य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप–

1. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाषा की जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
2. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के प्रयोग के बारे में प्रका"ा डाल सकेगें।
3. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि के बारे में लिख सकेगें।
4. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग से पूर्व आव"यकताओं का वर्णन कर सकेगें।
5. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के महत्व की व्याख्या कर सकेगें।
6. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में आने वाली कठिनाइओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई आप लोगों को तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के बारे में ज्ञान प्रदान करेगी। वास्तव में समाज में घटित होने वाली घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करना व विश्लेषण करना बहुत ही आव"यक होता है, जिसके आधार पर ठोस निष्कर्ष निकालना आसान हो जाता है। यह इकाई भी तुलनात्मक पद्धति के आधार पर सामाजिक घटनाओं का विश्लेषण करने के महत्वपूर्ण तरीके के बारे में आपको ज्ञान प्रदान करेगी। वास्तव में सामाजिक घटनाओं के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए आज जिन पद्धतियों या

विश्लेषणों को अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है, उनमें तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाण का एक प्रमुख स्थान है। यह पद्धति इस आधारभूत मान्यता पर आधारित है कि कोई भी सामाजिक घटना स्वयं में पूर्ण या निरपेक्ष नहीं होती बल्कि प्रत्येक सामाजिक घटना अपनी प्रकृति से तुलनात्मक होती है। इसका अर्थ यह है कि दो विभिन्न इकाइयों या घटनाओं की परस्पर तुलना करके ही उनकी वास्तविक प्रकृति को ज्ञात किया जा सकता है। यही कारण है कि आज कोई भी सामाजिक विज्ञान ऐसा नहीं है जिसमें किसी न किसी सीमा तक तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के द्वारा सामाजिक घटनाओं का अध्ययन न किया जाता हो। वास्तविकता यह है कि हम रोजमर्रा के जीवन में भी विभिन्न सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके ही एक सामान्य निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करते हैं। जब हम कहते हैं कि वर्तमान युग में हमारे सामाजिक मूल्य बदल रहे हैं, अपराधों की संख्या में वृद्धि हो रही है, तो ऐसा कहते समय हमारा ध्यान वर्तमान सामाजिक द"ाओं की अतीत से तुलना करके एक सामान्य निष्कर्ष प्रदान करने का होता है। इसके अलावा दैनिक जीवन में की जाने वाली तुलना एक सामान्य दृष्टिकोण पर आधारित होती है जबकि वैज्ञानिक अध्ययन के एक साधन के रूप में तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणकी प्रकृति अत्यधिक व्यवस्थित है।

7.2 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाशा

जब हम विभिन्न सामाजिक घटनाओं के बीच पायी जाने वाली समानताओं या असमानताओं की तुलना करके क्रमबद्ध और व्यवस्थित रूप से कोई सामान्य निष्कर्ष प्रदान करते हैं तो अध्ययन की इस पद्धति को तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण कहते हैं। इसके बाद भी यह ध्यान रखना आव"यक है कि कुछ सामाजिक घटनाओं को तुलनात्मक रूप से प्रस्तुत कर देना ही तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण नहीं है। यह ऐसी पद्धति है जो विभिन्न सामाजिक तथ्यों की तुलना करने के साथ ही उनकी व्याख्या और विष्ले"ाणभी करती है। इसी आधार पर **गिन्सबर्ग** ने लिखा है, '' तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणका तात्पर्य केवल कुछ सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करना ही नहीं होता बल्कि तुलना के माध्यम से उसकी व्याख्या करनी होती है।'' इसका अर्थ यह है कि यह पद्धति आधारभूत रूप से तुलनात्मक विधि के द्वारा घटनाओं की व्याख्या में रूचि लेती है। **गिन्सबर्ग** ने आगे लिखा है कि ''शुरूआती दौर में तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का उपयोग विकासवादी समाज"ाास्त्रियों द्वारा करने के कारण यह समझाा जाता था कि यह पद्धति विकासवादी उपागम से ही जुड़ी हुई है लेकिन वास्तव में इसकी कार्यविधि विकासवाद से काफी भिन्न है।''

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण अध्ययन की वह पद्धति है जिसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक सामाजिक तथ्यों, इकाइयों या समुदायों को अध्ययन का आधार मानते हुए उनकी एक दूसरे से तुलना की जाती है एवं तुलना के दौरान पायी गयी समान अथवा असमान वि"ोषताओं के आधार पर सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति प्रयोगात्मक पद्धति का ही विकल्प है। सामाजिक घटनाओं को किसी प्रयोग या परीक्षण के लिए पूरी तरह नियंत्रित नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में हमारे सामने केवल यही विकल्प रह जाता है कि हम दो सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके एक सामान्य प्रवृति को ज्ञात करने का प्रयत्न करें। इस आधार पर यह स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणअध्ययन का वह तरीका है जिसमें एक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विष्ले"ाणऔर व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की परिभाषा विभिन्न विद्वानों ने समय–समय पर प्रस्तुत की है जिनक उल्लेख अग्रलिखित किया जा रहा है जिससे इस पद्धति को समझने में आसानी होगी–

रैडक्लिफ ब्राउन के अनुसार– तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण वह है जिसके द्वारा हम वि"ाष्ट से सामान्य तक पहुँचते हैं व जिसमें हम उन वि"ोषताओं को जान पाये जो सब मानव संस्थानों में विभिन्न रूपों में पाये जाते हैं। इसके अन्तर्गत हम निम्नलिखित का अध्ययन करते हैं–

1. विभिन्न वर्गों मे पाये जाने वाले रीति–रीवाजों का तुलनात्मक अध्ययन।
2. समाज के अन्तर्गत होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन।
3. वि"ाष्ट सामाजिक घटनाओं का अध्ययन।

जी0डी0 सिमेल द्वारा– तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण उस विधि को कहते है जिसमें भिन्न समाजों या एक ही समाज के भिन्न–भिन्न समूहों की तुलना करके यह पता लगाया जा सके कि इनमें समानता है या नहीं, तथा यदि है तो क्यों है?

हर्सको विट्ज के अनुसार– ''तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत व्यक्तियों के बीच पाये जाने वाले स्वरूपों की तुलना मानवीय संस्थाओं तथा वि"वासों के विकासपूर्ण क्रम को स्थापित किया जाता है।''

7.2.1 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग समाज"ाास्त्र और मानव"ाास्त्र के अनेक विद्वानों ने किया है। सामाजिक और सांस्कृतिक मानव"ाास्त्रों ने सामाजिक और सांस्कृतिक उद्विकास को जानने के लिये इसका प्रयोग किया है। प्रारम्भिक मानव"ाास्त्री, जिन्होंने इसका प्रयोग किया है वे हैं, मोर्गन, वैकोफिन, टेगार्ट, हेनरीमेन, टाइलर, फ्रेजर, लेवी आदी के नाम उल्लेखनीय है। विकासवादी समाज वैज्ञानिकों ने ऐतिहासिक और तुलनात्मक पद्धति का साथ–साथ प्रयोग किया है। कुछ समाज वैज्ञानिकों के कार्य अग्रलिखित हैं–

हरवर्ट स्पैन्सर–इन्होंने समाज व सावयव की तुलना की और दोनों के बीच कई समानताओं का उल्लेख किया। इसी आधार पर आपने समाज को एक सावयव कहा। उन्होंने विभिन्न समाजों की परस्पर तुलना की। दुर्खीम ने अपनी पुस्तक ''द रूल्स ऑफ सो"ायोलाजिकल मेथड'' में इस पद्धति का प्रयोग किया तथा उन्होंने यूरोप के विभिन्न दे"ाों में आत्महत्या की दर व कारणों का तुलनात्मक अध्ययन किया तथा आत्महत्या का सामाजिक सिद्धान्त प्रस्तुत किया।

मैक्स वेवर–आपने पुँजीवाद और प्रोटेस्टेट धर्म के सह–सम्बन्धों को द"ााने के लिये दुनिया के छः महान धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया और बताया कि केवल प्रोटेस्टेट धर्म में ही कुछ ऐसे आर्थिक विचार है जिन्होंने आधुनिक पुँजीवाद को जन्म दिया।

रेडक्लिफ ब्राउन–ब्राउन ने तुलनात्मक पद्धति को अपनाकर समाज व सावयव की तुलना की है, वे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि, समाज सावयतव की भ्रांति है, दोनों का विकास कुछ नि"चत स्तरों से सरलता से जटिलता की ओर हुआ है। समाज व सावयव के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा ही इन्होंने कुछ आधारभूत वि"ोषताओं का अध्ययन किया है। ब्राउन कहते हैं कि तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक विकास की प्रक्रिया को समझा जाता है। समाज गत्यात्मकता के नियमों को तुलनात्मक विधि द्वारा ही स्पष्ट **रुप** से ज्ञात किया जा सकता है व समाज में होने वाले परिवर्तनों का भी पता इस विधि के द्वारा चल सकता है। तुलनात्मक विधि द्वारा व्यक्ति, तथ्यों को स्पष्ट ही नहीं करते अपितु उस तथ्य

की परिस्थितियों को भी स्पष्ट कर सकते हैं। इनका मानना है कि जो सामान्य प्रस्तावना है उसी के आधार पर हम मानव समाज की सामान्य वि"ोषताओं के तुलनात्मक स्वरूप को स्पष्ट कर सकते हैं, सामान्य से वि"ोष तथा वि"ोष से सामान्य की ओर ले जाने वाली इस प्रक्रिया को इस पद्धति में प्रयोग नहीं किया जाता। इस पद्धति द्वारा सामाजिक अनुसंधानकर्ता तुलना करके अपने अनवेषण की परख कर अवधारणाओं की पुष्टि कर सकता है। परिवर्तन"ाील समाज में विभिन्न प्रक्रियाओं का अध्ययन करने में यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।ब्राउन का मानना है कि सामाजिक विज्ञानों में तुलनात्मक पद्धति के माध्यम से हम किसी आदि–मानवीय समाज के विषय मे कोई जानकारी चाहते हैं तो असफलता ही हाथ लगेगी क्योंकि तुलना इस आधुनिक समाज से मानव समाज की, की जायेगी। इसके लिये हमें ऐतिहासिक पद्धति को काम में लेना पड़ेगा।

7.2.2 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि

तुलनात्मक पद्धति के द्वारा जब सामाजिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है तो एक वि"ोष कार्य–विधि को व्यवहार में लाना पड़ता है, इसक अन्तर्गत–

1. सर्वप्रथम, अध्ययन से सम्बंधित विषय अथवा इकाइयों का अवलोकन करक यह जानने का प्रयास किया जाता है कि अध्ययन के अन्तर्गत आने वाली अधिक महत्वपूर्ण सामाजिक इकाइयॉ कौन–कौन सी हैं।
2. दूसरे स्तर पर, उनसे सम्बंधित सामाजिक तथ्यों का संग्रह करना आरम्भ किया जाता है। ये तथ्य प्राथमिक रूप से एकत्रित किए जा सकते हैं और द्वैतीयक स्रोतों के माध्यम से भी।
3. तथ्यों के संकलन के बाद समान सामाजिक तथ्यों को एक–एक वर्ग में रखकर उनका इस प्रकार वर्गीकरण कर लिया जाता है जिससे प्रत्येक वर्ग में एक–दूसरे से भिन्न प्रकृति वाले सामाजिक तथ्य संकलित हो जाएं।
4. चौथे स्तर पर, विभिन्न सामाजिक वर्गों की समानताओं और असमानताओं की तुलना करके उनके सह–सम्बंध या पृथक्कता का मूल्यांकन करने का प्रयत्न किया जाता है। यह तुलना जितनी अधिक सावधानीपूर्वक की जाती है, तुलनात्मक पद्धति द्वारा उतने ही अधिक वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना संभव हो जाता है।
5. पांचवे स्तर पर, विभिन्न सामाजिक इकाइयों की समानताओं या असमानताओं के संबंधित उन कारकों को ज्ञात करने का प्रयत्न किया जाता है जो एक वि"ोष स्थिति में किसी घटना को एक वि"ोष ढंग से प्रभावित करते हैं। इस स्थिति के समुचित विष्ले"ाणसे ही तुलनात्मक विवेचना को अधिक वैज्ञानिक बनाया जा सकता है।
6. अन्य पद्धतियों के समान तुलनात्मक पद्धति का अन्तिम चरण भी सामाजिक तथ्यों का सामान्यीकरण करना है, यह सामान्यीकरण मूलरूप से तुलना के आधार पर ही किया जाता है।

   तुलनात्मक पद्धति की इस कार्य–विधि का उपयोग सर्वप्रथम प्रारम्भिक मानव"ाास्त्रियो ने दो विभिन्न स्थानों की सांस्कृतिक वि"ोषताओं या एक ही संस्कृति की विभिन्न वि"ोषताओं का अध्ययन तुलनात्मक आधार पर करने के लिये किया था। इसके कुछ समय बाद ही हरबर्ट स्पेंसर ने सामाजिक जीवन का अध्ययन करने के लिये तुलनात्मक पद्धति को सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार के रूप में स्वीकार किया। स्पेन्सर ने समाज और जीवन रचना के बीच तुलना करके यह स्पष्ट किया कि इन दोनों के बीच अनेक समानतायें विद्यमान हैं कि यदि समाज को एक सावयव कहो जाए तो गलत नहीं होगा। इसी समय से सामाजिक घटनाओं के अध्ययन मे तुलनात्मक पद्धति को अत्यधिक महत्वपूर्ण समझा जाने लगा और बाद में अनेक समाज वैज्ञानिकों ने व्यवस्थित आधार पर इस पद्धति के उपयोग से सम्बंधित नयीं प्रविधियों को विकसित किया। इस समय समाज"ाास्त्र के जनक ऑगस्त कॉम्ट ने विभिन्न युगों में मानव के

बौद्धिक विकास की एक–दूसरे से तुलना करते हुए ''तीन स्तरों का नियम'' प्रतिपादित किया तथा यह स्पष्ट किया कि सामाजिक तथ्यों का वैज्ञानिक अध्ययन केवल अवलोकन, प्रयोग और तुलना के द्वारा ही किया जा सकता है। तुलनात्मक पद्धति के उपयोग का सर्वप्रथम उदाहरण दुर्खीम द्वारा किया गया ''आत्महत्या का सिद्धान्त'' है। दुर्खीम ने विभिन्न सामाजिक समूहों में आत्महत्या की दर का तुलनात्मक अध्ययन करके यह स्पष्ट किया कि सामाजिक द"ाएँ ही आत्महत्या का प्रमुख कारण होती है।मैक्स वेबर ने आर्थिक संस्थाओं के विकास पर धार्मिक आचारों के प्रभाव को स्पष्ट करने के लिये न केवल तुलनात्मक प्रद्धति का वृहद रू" से उपयोग किया बल्कि इस पद्धति की सफलता के लिये एक नि"चित कार्य विधि को भी स्पष्ट किया। मैक्स वेबर ने यह भी बताया कि सामाजिक घटनाओं के बीच पाये जाने वाले कार्य कारण सम्बन्ध को तब तक स्पष्ट नहीं किया जा सकता जब तक विभिन्न सामाजिक घटनाओं को समानता के आधार पर कुछ सैधांतिक श्रेंणियों में विभाजित न कर लिया जाए। इस प्रकार जब हम तर्कसंगत आधार पर कुछ वास्तविक सामाजिक घटनाओं, व्यक्तियों या इकाइयों को इस प्रकार चुन लेते हैं जो अपने–अपने सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हों तो इनके द्वारा एक ऐसे प्रारूप का निर्माण होता है जिसे हम आद"ा प्रारूप कह सकते हैं। इन विभिन्न आद"ा प्रारूपों के बीच तुलना करने से हमें वह आधार प्राप्त हो जाता है जिसकी सहायता से एक सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किया जा सकता है। इस प्रकार आद"ा प्रारूपों का चयन करना तुलनात्मक पद्धति के सफल उपयोग के लिए सबसे अधिक आव"यक है। वर्तमान समय में सामाजिक घटनाओं के अध्ययन के लिए तुलनात्मक पद्धति का उपयोग इतना अधिक होने लगा है कि प्रत्येक शोध में किसी न किसी स्तर पर इसका उपयोग अव"य देखने को मिलता है। छोटे स्तर पर की गई तुलनाओं के द्वारा परिकल्पना की सत्यता की जांच करने के लिये भी तुलनात्मक पद्धति को वि"ोष रूप से उपयोगी समझा जाता है। उदाहरण के तौर पर यदि हम देखे तो नगरीय जीवन तथा विवाह–विच्छेद की प्रकृति, परिवार का आकार तथा सामाजिक गति"ाीलता, शैक्षणिक उपलब्धियॉ तथा विभिन्न सामाजिक वर्ग आदि तुलना के वे प्रमुख विषय हैं जिनसे सम्बन्धित अनुभव सिद्ध निष्कर्ष देना इस पद्धति के द्वारा सम्भव हो गया है। इसी आधार पर वैज्ञानिक फ्रीमैन ने यह दावा किया है कि ''अध्ययन के लिये तुलनात्मक पद्धति की अभिकल्पना हमारे युग की महानतम बौद्धिक उपलब्धि है।''

बोध प्र"न–1 टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का नि"ाान लगाइए।

	सही	गलत
1. तुलनात्मक पद्धति एक प्रविधि है।	☐	☐
2. तुलनात्मक पद्धति विभिन्न वर्गों मे पाये जाने वाले रीति–रीवाजों का तुलनात्मक अध्ययन करती है।	☐	☐
3. तुलनात्मक पद्धति की कार्य विधि विश्लेषणात्मक है।	☐	☐
4. ब्राउन ने तुलनात्मक पद्धति को अपनाकर समाज व सावयव की तुलना नहीं की है।	☐	☐
5. तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणका प्रयोग समाज"ाास्त्र और मानव"ाास्त्र के अनेक विद्वानों ने किया है।	☐	☐
6. आद"ा प्रारूपों का चयन करना तुलनात्मक पद्धति के सफल उपयोग के लिए सबसे अधिक आव"यक है।	☐	☐

अभ्यास प्र"न–1

तुलनात्मक पद्धति के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

बोध प्र"न–2

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि के बारे में लिखिये और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर नि"ाान लगाइयें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

7.2.3 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की उपयोग से पूर्व आव"यकतायें

तुलनात्मक पद्धति का वैज्ञानिक तरीके से उपयोग तभी किया जा सकता है कि जब शोधकर्ता इसके उपयोग से सम्बंधित कुछ पूर्व–आव"यकताओं को पूरा करता हो। इन पूर्व आव"यकताओं को संक्षेप में अग्रलिखित रूप से समझा जा सकता है–

1. **अध्ययन** विषय **का समुचित ज्ञानः** तुलनात्मक पद्धति के आधार पर वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिये यह आव"यक है कि शोधकर्ता को अपने अध्ययन–विषय का पर्याप्त ज्ञान हो। विषय का पर्याप्त ज्ञान होने से ही शोधकर्ता विभिन्न पक्षों से सम्बंधित तथ्यों का समुचित रूप से संकलन करके उनकी तुलनात्मक व्याख्या करने में सफल हो सकता है।
2. **सूक्ष्म अवलोकन की क्षमताः** सूक्ष्म अवलोकन के बिना न तो शोध से संबंधित विभिन्न सामाजिक घटनाओं और तथ्यों का गहराई में जाकर अध्ययन किया जा सकता है और न ही उन सामाजिक वर्गों का निर्माण किया जा सकता है जिनकी तुलना में महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त हो सकते हैं।
3. **विश्लेषण की क्षमताः** विष्ले"णकी क्षमता से ही विभिन्न सामाजिक तथ्यों के निहित अर्थों को स्पष्ट करना सम्भव होता है। यह अर्थ जितना अधिक स्पष्ट और संगत या सापेक्ष होता है, सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करना भी उतना ही अधिक सरल हो जाता है। विष्ले"णकी क्षमता ही वह आधार है जिसकी सहायता से प्रत्येक सामाजिक घटना की पृष्टभूमि या परिस्थितियों को समुचित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है।
4. **तार्किक व्याख्या की कु"ालताः** सामाजिक तथ्यों तथा घटनाओं की प्रकृति इस प्रकार की होती है कि उन सभी का प्रत्यक्ष अवलोकन करना संभव नहीं होता। अने तथ्यों की व्याख्या के लिये शोधकर्ता मे तार्किक कु"ालता का होना आव"यक है। तार्किक कु"ालता की सहायता से ही यह ज्ञात किया जा सकता है कि कौन से सामाजिक तथ्य आव"यक हैं और कौन से अनाव"यक। इसके साथ ही साथ विभिन्न तथ्याके के सह सम्बन्ध को ढूंढकर उनकी अर्थपूर्ण व्याख्या करना भी तार्किक कु"ालता पर निर्भर करता है।
5. **प्रतिवेदन में वस्तुनिश्ठताः** तुलनात्मक पद्धति के प्रयोग का उद्दे"य सामाजिक तथ्यों को तुलनात्मक आधार पर विष्ले"णकरना ही नहीं होता बल्कि तुलना करके एक वस्तुनिष्ठ प्रतिवेदन भी प्रस्तुत करना होता है। तथ्यों तुलना तब तक अर्थहीन है जब तक उसके आधार पर निकाले गये निष्कर्षों को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत न कर दिया जाये।

7.2.4 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का महत्व

उन्नीसवीं शताब्दी तक तुलनात्मक पद्धति का प्रयोगा विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच तुलना करने तक ही सीमित था लेकिन आज इस पद्धति की व्यापक व्यावहारिक उपयोग को ध्यान में रखा जाय तो इसका आज कल बहुत उपयोग हो रहा है। सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति के महत्व या इसकी उपयोगिता को अग्रलिखित बिनदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है–

1. **परिकल्पना की परीक्षा में सहायकः** किसी भी सामाजिक शोध की वैज्ञानिकता प्रमाणित करने के लिए आव"यक है कि अध्ययन विषय से संबंधित परिकल्पना की पूरी जॉच कर ली जाये। समाज"ाास्त्री रेडक्लिफ ब्राउन ने परिकल्पना की परीक्षा के एक साधन के रूप में तुलनात्मक पद्धति को सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना है। इसका कारण यह है कि विभिन्न समाजों, संस्थाओं, समूहों या अन्य तथ्यों का तुलनात्मक विवेचन करके अध्ययन से सम्बंधित परिकल्पना की परीक्षा सरलता के की जा सकती है।
2. **प्रयोगात्मक पद्धति की पूरकः** सामाजिक घटनाओं की प्रकृति इतनी जटिल है कि उनके बीच कार्य–कारण के सम्बंध को ज्ञात करना अक्सर बहुत कठिन हो जाता है। भौतिक विज्ञानों में कार्य–कारण के सम्बन्ध को जानना इसलिए सरल है क्योंकि प्रयोगात्मक विधि द्वारा किसी भी तथ्य के आन्तरिक रूप को समझा जा सकता है। इसके विपरीत सामाजिक अध्ययनों में प्रत्यक्ष प्रयोग की कोई सम्भावना नहीं होती। ऐसी स्थिति में वैज्ञानिक दुर्खीम

का कथन है कि हम केवल 'अप्रत्यक्ष प्रयोग की विधि' के रूप में तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक घटनाओं के कार्य–कारण सम्बन्ध को समझ सकते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि तुलनात्मक पद्धति पूर्णतया प्रयोगात्मक पद्धति के समान है लेकिन विभिन्न घटनाओं के बीच व्यवस्थित तुलना करने से यह अव"य जाना जा सकता है कि कौन–कौन से सामाजिक तथ्य किन दूसरे तत्वों से अधिक सम्बंधित हैं और उनकी पुनरावृत्ति का क्रम क्या है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति के महत्व की अवहेलना नहीं की जा सकती है।

3. **सांख्यिकीय विश्लेषण में सहायकः** तुलनात्मक पद्धति एक ऐसी पद्धति है जिसकी सहायता से सामाजिक घटनाओं का सांख्यिकीय विष्ले"ाण करना भी सम्भव हो सकता है। इसके अन्तर्गत जब हम विभिन्न गुणात्मक तथ्यों की आवृति को समझने में सफल हो जाते हैं तो सरलता से उन तथ्यों की प्रकृति को प्रति"ात या अनुपात के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है। इस आधार पर अनेक विद्वान परिमाणात्मक अध्ययनों के लिए तुलनात्मक पद्धति को अत्यधिक महत्वपूर्ण मानते हैं।

4. **परिवर्तन की दि"ाा का ज्ञानः** वर्तमान परिवर्तन"ाील समाजों में तुलनात्मक पद्धति की सहायता से यह सरलतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है कि विभिन्न सामाजिक घटनायें किस रूप में परिवर्तित हो रही हैं तथा तुलनात्मक रूप से विभिन्न्न तथ्यों के बीच परिवर्तन की दर या सीमा क्या है? वर्तमान में, परिवर्तन स्चयं में एक तुलनात्मक अवधारणा है। हम एक तथ्य में उम्पन्न होने वाले परिवर्तन को दूसरे तथ्य की तुलना में ही समझ सकते हैं। इसी के बारे मे समाज वैज्ञानिक राउन्ट्री और बाउले ने काफी समय के अन्तर से एक ही समुदाय की वि"ोषताओं का तुलनात्मक आधार पर अध्ययन करके यह स्पष्ट कर दिया कि केवल तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति और दि"ाा का सही ज्ञान किया जा सकता है।

5. **छोटे अध्ययनां में सहायकः** आज शोध की नयी प्रविधियों के विकास होने के साथ ही यह अनुभव किया जाने लगा है कि कुछ वि"ोष समाजों में छोटे स्तर पर किये जाने वाले अध्ययनों में इस पद्धति का व्यापक रूप से उपयोग किया जा सकता है। वास्तव में छोटे क्षेत्र या छोटे स्तर पर जो अध्ययन किये जाते हैं उनमें अध्ययन विषय से संबंधित विभिन्न इकाइयों का तुलनात्मक विष्ले"ाणकिये बिना कोई भी उपयोगी निष्कर्ष नहीं दिये जा सकते। यही कारण है कि विभिन्न उद्योगों, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों, सरल समाजों तथा ि"ाक्षा व्यवस्था आदि पर समाज"ाास्त्रीय शोध करने के लिये तुलनात्मक पद्धति का वि"ोष उपयोग है।

7.2.5 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में कठिनाइयॉ

सामाजिक अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति महत्वपूर्ण अव"य है लेकिन इस पद्धति के उपयोग मे अनेक कठिनाइयॉ हैं जिनका निवारण करके ही इसे एक उपयोगी पद्धति बनाया जा सकता है। इस पद्धति की सीमा को स्पष्ट करके समाज"ाास्त्री रेडक्लिफ ब्राउन ने लिखा है ''तुलनात्मक पद्धति अकेले ही आपको कुछ नहीं दे सकती। भूमि से तब तक कुछ पैदा नहीं हो सकता जब तक आप पहले उसमें बीज नहीं बोयेंगे। इस प्रकार तुलनात्मक पद्धति भी परिकल्पना के परिक्षण का एक तरीका मात्र है।'' इसका अर्थ यह है कि एक ओर तुलनात्मक पद्धति स्वयं कुछ सीमाओं से युक्त है और दूसरी ओर इसके उपयोग में भी अनेक कठिनाइयॉ हैं। इन कठिनाइयों को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है–

1. **परिकल्पना का अभावः** वैज्ञानिक बोटोमोर का कथन है कि '' तुलनात्मक पद्धति के उपयोग मे आने वाली एक प्रमुख कठिनाई यह है कि इसके अन्तर्गत या तो परिकल्पनाओं का अभाव होता है या किसी परिकल्पना का निर्माण करना आव"यक नहीं समझा जाता है।'' किसी भी वैज्ञानिक शोध के लिए परिकल्पना का निर्माण करना अत्यधिक आव"यक होता है। क्योंकि परिकल्पना ही शोध को वास्तविक दि"ाा प्रदान करती है। यदि अध्ययन में परिकल्पना का अभाव होता है तो अक्सर महत्वपर्ण अध्ययन भी दा"ार्निक बनकर रह जाते हैं। उदाहरण स्वरूप ऑगस्त काम्ट ने अपने 'तीन स्तरों के नियम' को स्पष्ट करने के लिये तुलनात्मक पद्धति का उपयोग अव"य किया लेकिन इसमें एक वैज्ञानिक परिकल्पना का अभाव होने के कारण यह सम्पूर्ण व्याख्या 'मानवता के विकास का द"ार्न' बनकर रह गई।

2. **इकाइयों के निर्धारण में कठिनाईः** तुलनात्मक पद्धति के उपयोग के लिये अध्ययन के संबंधित कुछ ऐसी इकाइयों का चयन करना आव"यक होता है जिनके बीच तुलना करके उपयोगी निष्कर्ष दिये जा सकें। इस कार्य के लिये एक ओर ऐसी इकाइयों का चयन करना पड़ता है जो एक दूसरे से पूर्णतया असमान न हों तथा साथ ही उनकी समुचित विवेचना भी की जा सके। इस कार्य में सबसे बड़ी कठिनाई यह आती है कि शोध के अनतर्गत जिन बहुत–सी इकाइयों अथवा तथ्यों का समावे"ा होता है उनमें से तुलना के लिये उपयुक्त इकाइयों का चयन करना बहुत कठिन हो जाता है। सामाजिक तथ्य इतने विविध एवं परिवर्तन"ाील होते हैं कि कभी–कभी जो इकाइयॉ शुरू में बहुत महत्वपूर्ण दिखाई देती हैं, कुछ समय बाद तुलना के दृष्टिकोण से उनका कोई महत्व प्रतीत नहीं होता। इस प्रकार तुलना के लिये चुनी गई इकाइयों का चयन दोषपूर्ण हो जाने की सम्भावना हमे"ाा बनी रहती है।

3. **इकाइयों की तुलना में कठिनाइयॉः** समाज"ाास्त्री मैलिनोवास्की ने कहा है कि '' विभिन्न इकाइयों की तुलना करना और उन्हें समुचित रूप से परिभाषित करना भी एक कठिन कार्य है। एक ओर यह अत्यधिक कठिन है कि दो समाजों के सभी पक्षों की एक दूसरे से तुलना की जा सके और दूसरी ओर विभिन्न समाजों से सम्बंधित किन्हीं दो संस्थाओं या इकाइयों के बीच तुलना करना भी एक कठिन कार्य होता है। सभी इकाइयों का स्वरूप एक दूसरे से काफी भिन्न होता है तथा उनके बाह्य और आन्तरिक स्वरूप में भी एक स्पष्ट भिन्नता विद्यमान होती है। जो संस्थायें ऊपर से विल्कुल समान प्रतीत होती हैं, विभिन्न समाजों में उनका आन्तरिक रूप एक दूसरे के बिल्कुल भिन्न हो सकता है। यदि हम किसी संस्था या इकाई को उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि से अलग करके देखने लगें तो ऐसी व्याख्या पूर्णतया भ्रामक हो जाती है।''

4. **विश्लेषण की समस्याः** तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत जिन सामाजिक संस्थाओं, तथ्यों या इकाइयों को लेकर तुलना की जाती है उन्हें साधारणतया उस सम्पूर्ण समाज से अलग करके देखा जाता है जिसमें कि उस संस्था या इकाई की एक नि"चित भूमिका होती है। इसके फलस्वरूप उनके वास्तविक स्वरूप को समझ सकना बहुत कठिन हो जाता है। तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत किसी संस्था या इकाई की सामाजिक पृष्ठभूमि को समुचित महत्व न मिलने के कारण अक्सर सम्पूर्ण विष्ले"ाणके दोषपूर्ण और अवैज्ञानिक बन जाने की सम्भावना हो जाती है।

उपर्युक्त कठिनाइयों के बाद यह सत्य है कि प्रयोगात्मक पद्धति के एक विकल्प के रूप में तुलनात्मक पद्धति अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। यदि एक सीमित क्षेत्र में इस पद्धति का प्रयोग किया जाए तो इसकी सहायता से अनेक उपयोगी निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

7.3 सारां"ा

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग तुलनात्मक पद्धति के बारे में वृहद जानकारी प्राप्त कर चुके होगें। अब आप तुलनात्मक पद्धति के अर्थ एवं परिभाषाओं के बारे में ज्ञान अर्जित कर लिया होगा। वास्तव में तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाण अध्ययन की वह पद्धति है जिसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक सामाजिक तथ्यों, इकाइयों या समुदायों को अध्ययन का आधार मानते हुए उनकी एक दूसरे से तुलना की जाती है एवं तुलना के दौरान पायी गयी समान अथवा असमान वि"ोषताओं के आधार पर सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति प्रयोगात्मक पद्धति का ही विकल्प है। सामाजिक घटनाओं को किसी प्रयोग या परीक्षण के लिए पूरी तरह नियंत्रित नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में हमारे सामने केवल यही विकल्प रह जाता है कि हम दो सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके एक सामान्य प्रवृति को ज्ञात करने का प्रयत्न करें। इस आधार पर यह स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणअध्ययन का वह तरीका है जिसमें एक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विष्ले"ाणऔर व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।

इस इकाई के आधार पर आप लोग तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणका प्रयोग भलि भांति कर सकेगें एवं तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणके उपयोग की विधि की प्रकिया पर प्रका"ा डाल सकेगें। यह इकाई आपको इस योग्य बनाती है जिससे आप तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणकी उपयोग से पूर्व आव"यकताओं को जान सकेगें। आ"ाा ही नहीं वरन् पूर्ण वि"वास है कि प्रस्तुत इकाई आप के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी जिससे आप लोग तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग आसानी से कर सकेगें।

7.4 शब्दावली

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण – तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाण अध्ययन का वह तरीका है जिसमें एक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विष्ले"ाण और व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।

ऐतिहासिक पद्धति– यह वह विधि है जिसक द्वारा वर्तमान काल में घटित होने वाली घटनाओं को अतीत में घटित घटनाओं के क्रमिक विकास की एक कड़ी के रूप में देखकर उनका अध्ययन किया जाता है।

7.5 अभ्यास प्र"नों के उत्तर

बोध प्र"न 1 का उत्तर–

1. सही
2. सही
3. सही
4. गलत
5. सही
6. सही

7.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गिन्सबर्ग, द प्रोब्लेम्स एण्ड मेथड्स ऑफ सोि"ायोलाजी इन रीजन्स एण्ड अनरिजन्स इन सोसाइटी।
2. कोटेड इन बाटमोरे सोि"ायोलाजी, पेज नं0 55।
3. फ्री मैन, इ0 ए0, कम्परेटिव पालिटिक्स।
4. रेडक्लिफ ब्राउन, ए नेचुरल साइंस ऑफ सोसाइटी।
5. मैलिनोवस्की, कल्चर, इन दी इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सो"ाल साइंसेज।
6. गोयल, डॉ0 सुनील एवं गोयल, संगीता, 'प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान, आर0 बी0 एस0 ए0 पब्लि"ार्स, जयपुर, वर्ष 2005, पेज सं0 54–61।

7.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. सोि"ायोलाजी रिटेन बाई बाटमोरे।
2. कम्परेटिव पालिटिक्स रिटेन बाई फ्री मैन।
3. नेचुरल साइंस ऑफ सोसाइटी रिटेन बाई रेडक्लिफ ब्राउन।

7.8 निबंधात्मक प्र"न

1. तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाण के अर्थ एवं परिभाषा के बारे में प्रका"ा डालिये।
2. तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाण के प्रयोग के बारे में लिखिये।
3. तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाण के उपयोग की विधि की व्याख्या कीजिएं
4. तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाण की उपयोग से पूर्व आव"यकताओं की विवेचना कीजिये।
5. तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाण के महत्व पर प्रका"ा डालिये।
6. तुलनात्मक पद्धति या विष्ले"ाणके उपयोग में कठिनाइओं के बारे में लिखिये।

इकाई– 8 टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया एवं अन्तर्वस्तु विश्लेषण
Textual Analysis,Media & Content Analysis

8.0 इकाई का उद्दे"य
8.1 प्रस्तावना

8.2 टेक्चुअल विश्लेषण,

8.3 मीडिया विश्लेषण

8.4 अन्तर्वस्तु विष्ले"णकी परिभाषा

8.4.1 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की वि"ोषताएँ
8.4.2 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उद्दे"य
8.4.3 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग
8.4.4 बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागम
8.4.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकार
8.4.6 अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण के आधार
8.4.7 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में प्रमुख सोपान
8.4.8 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण
8.4.9 विश्लेषण की रूपरेखा का उपयोग
8.4.10 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याएँ

8.5 सारां"ा

8.6 शब्दावली

8.7 अभ्यास प्र"नों के उत्तर

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

8.10 निबंधात्मक प्र"न

8.0 इकाई का उद्दे"य

इस इकाई का उद्दे"य टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया विश्लेषण एवं अर्न्तवस्तु विश्लेषण की अवधारणा तथा उपयोगों को स्पष्ट करना है जिसमें अर्न्तवस्तु विश्लेषण के प्रकारों के बारे में भी बताने का प्रयास किया गया है।

इस इकाई पढ़ने के बाद आप –

- टेक्चुअल विश्लेषण के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- मीडिया विश्लेषण पर प्रका"ा डाल सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की वि"ोषताओं के बारे में लिख सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उद्दे"यों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण का उपयोग अपने शोध में कैसे करे के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागमों के बारे में लिख सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकारों के बारे में जान सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण का वर्णन कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में प्रमुख सोपानों के बारे में बृहद जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण कैसे किया जाता है के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- विश्लेषण की रूपरेखा का उपयोग कैसे किया जाता है के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याओं को जान सकेगें।

8.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों आपने पूर्व की इकाई में तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के बारे में जानकारी प्राप्त की तथा जाना की किस प्रकार से तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसी क्रम में प्रस्तुत इकाई आपके सामने प्रस्तुत है जिसके माध्यम से आप लोग टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया विश्लेषण एवं अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणके बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। वास्तव में सामाजिक घटनाओं की प्रकृति भौतिक घटनाओं की प्रकृति से सर्वथा भिन्न होती है। भौतिक घटनाएं प्रायः स्वभावतः मात्रात्मक तथा मूर्त होती है। इसके प्रतिकूल सामाजिक घटनाएं स्वभावतः गुणात्मक तथा अमूर्त होती है। गुणात्मक घटनाएं अपेक्षाकृत अस्पष्ट तथा जटिल होती है। कुछ समय पहले यह मान लिया गया था कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति गुणात्मक होने के कारण उन्हें मात्रात्मक रूप में व्यक्त करना अथवा परिमापन सम्भव नहीं है। अतः सामाजिक अनुसंधान में उपलब्ध सामग्री का मात्रात्मक प्रद"ान नहीं किया जा सकता। परन्तु आधुनिक काल में यह स्वीकार कर लिया गया है कि सामाजिक गुणात्मक सामग्री का प्रस्तुतीकरण मात्रात्मक रूप में किया जा सकता है।

जब सामाजिक अनुसंधानकर्ता प्राकृतिक सामाजिक घटनाओं के अभिलेखों अथवा एक अनुसंधान परियोजना से गुणात्मक सामग्री के समूह को प्राप्त करता है, वह अन्तर्वस्तु को उपयुक्त श्रेणियों में वर्गीकृत करना चाहेगा ताकि वह इसका एक व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप में वर्णन कर सके। श्रेणियों में वर्गीकरण की इस प्रक्रिया को सामान्यतः ''अन्तर्वस्तु विश्लेषण '' अथवा ''सांकेतीकरण'' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। पहला पारिभाषिक शब्द अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणका प्रयोग प्रायः स्वाभाविक रूप से अभिलेखित की गई गुणात्मक सामग्री के सन्दर्भ में किया जाता है। पिछला (सांकेतीकरण) सामान्यतः

अनुसंधान द्वारा उत्पन्न सामग्री के विष्ले"ाणके सन्दर्भ में प्रयुक्त किया जाता है। सांकेतीकरण का प्रयोग वि"ोष रूप से उस प्रक्रिया को सम्बोधित करने के लिए किया जाता है जिसके द्वारा साक्षात्कारों के उत्तरों को श्रेणीबद्ध किया जाता है। इसके प्रतिकूल ''सुव्यवस्थित अन्तर्वस्तु विश्लेषण, अन्तर्वस्तु के कारणात्मक वर्णनों का अधिक परिष्कार करने का प्रयास करता है, जिससे कि पाठकों अथवा श्रोताओं से सम्बन्धित उत्तेजनाओं की प्रकृत्ति तथा सापेक्षिक शक्ति को वैषयिक रूप में प्रदर्"ात किया जा सके।''

यह सत्य है कि आधुनिक अन्तर्वस्तु विश्लेषण अनुसंधान उद्दे"यों के लिए सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु के उपयोग में नूतन वि"ोषताओं को सम्मिलित किया गया है। जैसे सामग्री के मात्रात्मिककरण या परिणामन हेतु विस्तृत प्रविधियों का विकास। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रयोग पर वि"ोष बल देने वालों में एच0डी0 लसवेल तथा उनके सहयोगियों के नाम वि"ोष रूप से उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने इसक प्रयोग जनमत व प्रचार सम्बन्धी सहयोगियों के नाम वि"ोष रूप से उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने इसका प्रयोग जनमत व प्रचार सम्बन्धी अध्ययनों में किया था। क्लेयर सेलटिज, मेरी जहोदा तथा उनके सहयोगियों के अनुसार विष्ले"ाणकी प्रक्रिया कुछ नि"चत नियंत्रकों से होकर गुजरती है जिससे कि अभिसामयिक (परम्परागत) पुनरावलोकन अथवा सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु की समीक्षा की तुलना में इसे व्यवस्थित तथा वैषयिक रूप में प्रस्तुत किया जाता है, वे निम्नलिखित हैं –

1. विश्लेषण की श्रेणियाँ, जो अन्तर्वस्तु को वर्गीकृत करती हैं, को स्पष्टतः परिभाषित किया जाता है ताकि अन्य लोग उसी अन्तर्वस्तु पर निष्कर्षो को सत्यापित कर सकें।
2. वि"लेषक को इसमें यह स्वतंत्रता नहीं रहती कि वह जो चाहे अन्तर्वस्तु में से चुन ले, अथवा उसे जो रोचक लगे उसे ही प्रतिवेदित कर दे। वास्तव में उसे अपने निर्दे"ान में समस्त संगतपूर्ण सामग्री का पद्धति अनुसार वर्गीकृत करना होता है।
3. विभिन्न महत्वपूर्ण विचारों को परिमापन प्रदान करने के लिए मात्रात्मक प्रणाली को प्रयोग में लाना होता है। उदाहरणस्वरूप यदि हम अखवारों के सम्पादकियों का एक व्यवस्थित निद"ान लें तथा उनकी सापेक्ष संख्या की गिनती करें जो किसी विदे"ाी राष्ट्र के बारे में अनुकूल, प्रतिकूल तथा तटस्थ मनोवृत्तियों को व्यक्त करें तो यह मात्रात्मिककरण का एक सरल स्वरूप है जो व्यावहारिक एवं वि"वसनीय है।

प्रस्तुत इकाई में मात्रात्मक एवं गुणात्मक तथ्यों को ध्यान में रखते हुए टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया विष्ले"ाणएवं अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणके बारे में जानकारी प्रदान की गयी है जिसके बारे में ज्ञान प्राप्त कर इनका सही उपयोग आप लोग अनुसंधान विष्ले"ाणमें कर सकेगें।

8.3 टेक्चुअल विश्लेषण

आज के युग में जहॉ एक तरफ विभिन्न प्रकार के अनुसंधानों में विभिन्न प्रकार के एकत्रित तथ्यों के विष्ले"ाणहेतु विभिन्न प्रकार के विश्लेषण प्रविधियों का प्रयोग किया जा रहा है वहीं पर टेक्चुअल विष्ले"ाणका भी प्रयोग वहुतायत मात्रा में देखने को मिल रहा है। वास्तव में टेक्चुअल विश्लेषण वह प्रविधि है जिसके माध्यम से किसी भी लेखक द्वारा लिखे गये टेक्स्ट का वास्तविक अर्थ निरूपण उसके द्वारा लिखे गये भाषा में ही करने का प्रयास किया जाता है।

बहुत से अनुसंधानकर्ता समाज विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान का कार्य कर रहे हैं जो वास्तव में विभिन्न प्रकार के भाषा एवं भाषायी सामग्री पर एक मत नहीं हैं। वे अपने–अपने विषयों के आधार पर टेक्स्ट, संवाद एवं शोध साक्षात्कार का विश्लेषण करते हैं। अतः इन सभी प्रकार के सामाजिक विज्ञानों के तथ्यों के विष्ले"ाणमें कोई विरोधाभाष न हो, इसके लिये यदी हम टेक्चुअल विश्लेषण का प्रयोग करें तो विश्लेषण आसान व तथ्यानुकूल होगा। वास्तव में टेक्चुअल विश्लेषण के आधार पर हम यह पता लगा सकते हैं कि उत्तरदाता अपनी भाषा में क्या कहना चाहता है या किस समस्या के बारे में बताना

चाहता है। देखा जाय तो टेक्चुअल विश्लेषण किसी व्यक्ति के द्वारा लिखे या दिये गये वक्तव्यों का वास्तविक अर्थ निरूपण है। यदि किसी व्यक्ति के द्वारा कहे या लिखे गये भाषा का वास्तविक अर्थ प्राप्त हो जाये व उसका विश्लेषण सही शब्दों में हो जाये तो अनुसंधान का अनुमापन किया जा सकता है।

टेक्चुअल विश्लेषण को हम आज के समय के परिप्रेक्ष्य में देखे तो हमें ज्ञात होगा कि यह विश्लेषण भाषा, हाव–भाव, प्रतीकों एवं परिस्थितियों का वास्तविक निरूपण करने पर जोर देता है। ऐसा इसलिये क्योंकि व्यक्ति जब किसी प्र"न का उत्तर देता है तो उस समय उसके चेहरे की प्रतिक्रिया उसके द्वारा दिये गये उत्तर की प्रतिपुष्टि कर देती है। कभी–कभी हम कोई दृ"य देखते हैं तो उसके साथ किसी प्रकार की भाषा नहीं लिखी रहती है फिर भी हम उस दृ"य का वास्तविक अर्थ निकालने का प्रयास करते हैं एवं उसका अपने भाषा में वर्णन भी करने में समर्थ होते हैं। उदाहरण स्वरूप मान लिया जाय कि किसी बार में कोई नौजवान पुरूष प्रवे"ा करना चाहता है और वह गेट पर खड़े दरवान से अन्दर जाने के लिये कहता है और दरवान नौजवान से उसकी उम्र के बारे में पुछता है जिसके उत्तर में नौजवान कहता है कि उसकी उम्र 22 साल है। जब दरवान नौजवान की उम्र के बारे मे। आस्वस्त हो जाता है जाता है तो नौजवान को बार में जाने की अनुमति दे देता है। वास्तव में इस उदाहरण से स्पष्ट है कि बार में जाने के लिये दरवान ने नौजवान से उम्र क्यों पुछा? तो हम यहॉ पर टेक्चुअल विष्ले"ाणके आधार पर देखते हैं कि दरवान ने नौजवान से उम्र इसलिये पूछा क्योंकि बार में वही लोग प्रवे"ा कर सकते हैं जो वयस्क हो और जिनकी आयु 22 वर्ष से उपर की हो। अतः टेक्चुअल विष्ले"ाणहमें वास्तविक परिस्थितियों के बारे में जानने के लिये बाध्य करती है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि टेक्चुअल विश्लेषण वह विश्लेषण है जिसके माध्यम से हम वास्तविक परिस्थियों के बारे ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वह परिस्थितियॉ प्रतीकों, भाव–भंगिमाओं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में हों।

8.4 मीडिया विश्लेषण

गैर वित्तिय सहायता प्राप्त संगठन एवं अन्य संस्थानों को अपनी स्थिति को समाज में परखने के लिये मीडिया विष्ले"ाणकी आव"यकता होती है। चूँकि ये संस्थायें समाज से सीधे संमपर्क में रहती हैं तो समाज से संबंधित विभिन्न प्रकार के मुद्दों पर इनको राय देनी पड़ती है। अतः किसी भी मुद्दे को किस प्रकार से रखना है तथा उसको समाज के सामने किस प्रकार प्रस्तुत करना है जिससे ज्यादा से ज्यादा मीडिया कवरेज प्राप्त हो के लिये ये संस्थायें मीडिया विश्लेषण के माध्यम का सहारा लेती हैं। वास्तव में मीडिया विष्ले"ाणवह विष्ले"ाणहै जिसके माध्यम से कोई भी अनुसंधानकर्ता यह पता लगाने में पारंगत हो सकता है कि किस प्रकार के प्र"नों से मीडिया कवरेज ज्यादा प्राप्त होगी तथा किस प्रकार के संदे"ाों का समाज से जुड़े मुद्दों पर अधिक प्रसं"ाा प्राप्त होगी। मीडिया विष्ले"ाणके द्वारा यह भी पता लगाया जा सकता है कि वर्तमान में जो मीडिया कवरेज प्राप्त हो रही है वह कितनी है तथा इसको किस प्रकार और बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार की मीडिया विश्लेषण को किसी एक प्रकार के समाचार बुलेटिन या समाचार प्रत्रों में प्रकाि"ात खबर के पृष्टांकन एवं खबर की वि"ोषता से पता लगाया जा सकता है जो एक समयाबद्ध समय में ही होनी चाहिए। इस प्रकार का विश्लेषण किसी मुद्दे से संबंधित मीडिया कवरेज को विभिन्न भागों में बांटकर उसकी स्थिति का अध्ययन करता है तथा विभिन्न प्रकार के संचार व्यवहार के अवसरों की खोज करता है जिसके आधार पर विभिन्न प्रकार के संस्थान अपनी कमियों को दूर कर पुनः नयी रणनीतियों का निर्माण करते हैं जिसके आधार पर मुद्दों को हल करने में आसानी हो सके तथा संगठनों के संदे"ाों को जनमानस तक पहुचाने में आसानी हो सके।

जब कोई संचार करने वाली संस्था या मीडिया वि"लेषक किसी भी मुद्दे पर वृहद् विश्लेषण करना चाहता है तो उसे चाहिए कि वह अग्रलिखित बिन्दुओं को अपने ध्यान में रखे। अगर वह इन बिन्दुओं को ध्यान में रखेगा तो नि"चत ही एक अच्छा मीडिया विष्ले"णकर सकेगा।

एक मीडिया विश्लेषण अग्रलिखित प्र"नों का उत्तर दे सकती है–

1. सार्वजनिक मुद्दे को मीडिया में प्रस्तुत किस प्रकार किया जाय? (विभिन्न प्रकार के कहानी के तत्वों को बार–बार दोहराकर, विभिन्न प्रकार के सामान्य विश्लेषण का प्रयोग करके, एक समान लोगों का बार–बार नाम लेकर इत्यादि)।
2. एक वि"ाष्ट शीर्षक पर कौन सा व्यक्ति प्रमुख वक्ता होगा और किस पद नाम से उसको सम्बोधित किया जायेगा। क्या वे नीति निर्माता, ऐकेडेमिक वि"ोषज्ञ होंगें इत्यादि?
3. प्रायः विभिन्न प्रकार के वक्ता किस प्रकार सम्बोधित करेंगे तथा किन संदर्भों में ।
4. किन शीर्षकों को बहस का मुद्दा बनाया जायेगा तथा किन मुद्दों को छोडा जायेगा?
5. किन क्षेत्रों को लिया जायेगा तथा किन क्षेत्रों को छोडा जायेगा? तथा कौन–कौन से मुद्दों कौन–कौन सी संस्थाये देखेगी?
6. क्या उन मुद्दो हेतु कोई समय सीमा निर्धारित की जायेगी?
7. क्या जो शीर्षक बहस के लिये चुने गये हैं? वे समाचार के प्रथम पृष्ट पर प्रका"ित होंगे या किसी और पृष्ट पर?
8. कौन से संवाददाता या संस्था इन मुद्दों पर लिखेंगे?
9. किस प्रकार के संदे"ा का प्रयोग किया जायेगा?

एक समसामयिक मीडिया विश्लेषण का त्वरित उदाहरण अमेरिका में कार्य करने वाले श्रमिकों पर किया गया। जिसका उद्दे"य श्रमिकों की कम आय का विष्ले"ाण करना था। इस उदाहरण का अग्रलिखित लिंक पर खोजा जा सकता है। (Between A Rock and a Hard Place: An Analysis of Low-Wages Workers in the Media).

अभ्यास प्र"न–**1**

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

टेक्चुअल विश्लेषण के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

बोध प्र"न–**1**

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

मीडिया विश्लेषण के उपयोग की विधि के बारे में लिखिये और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर नि"ाान लगाइयें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा

अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणकी प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं –

बरनाई बेरेलसन के अनुसार 'अंतर्वस्तु विश्लेषण सम्प्रेषण के प्रकट अंतर्वस्तु के वैषयिक, व्यवस्थित तथा गुणात्मक वर्णन के लिए अनुसंधान की प्रविधि है।''

ए. कपलान के भाब्दों में ''अन्तर्वस्तु विश्लेषण एक दी हुई बातों के अर्थो की व्यवस्थित तथा मात्रात्मक रूप में व्याख्या करने का प्रयास करता है।''

एल. एल. जेनिस के अनुसार ''अन्तर्वस्तु विश्लेषण को संकेत वाहकों के वर्गीकरण हेतु प्रविधि के रूप में उल्लिखित करके परिभाषित किया जा सकता है .... जो मात्र निर्णय पर निर्भर करता है।''

विलियम जे. गुडे तथा पाल के. हाट के अनुसार ''जब गुणात्मक सांकेतीकरण की विभिन्न सम्प्रेषण साधनों, जेसे पत्रिका, समाचार–पत्र, रेडियो प्रोग्राम अथवा इसी तरह की सामग्रियों की अन्तर्वस्तु के सन्दर्भ में प्रयुक्त किया जाता है, यह अन्तर्वस्तु विश्लेषण कहलाता है।''

पी. वी. यंग के अनुसार ''अन्तर्वस्तु विश्लेषण साक्षात्कारों, प्र''नावलियों, अनुसूचियों तथा अन्य भाषा विषयक अभिव्यक्तियों, लिखित अथवा मौखिक द्वारा प्राप्त अनुसंधान दत्त की अन्तर्वस्तु के व्यवस्थित, वैषयिक तथा मात्रात्मक वर्णन हेतु अनुसंधान की एक प्रविधि है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं में बेरेलसन द्वारा प्रस्तुत की गई परिभाषा सामाजिक अनुसंधान के लेखकों द्वारा सर्वोत्कृष्ट एवं प्रामाणिक मानी जाती है। डार्विन पी. कार्टराइट के अनुसार – ''यदि उदारतापूर्वक इसकी व्याख्या की जाय तो यह एक सन्तोषजनक परिभाषा है।''

8.5.1 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की वि''ाशताएँ

उपर्युक्त विवरणों एवं परिभाषाओं के आधार पर अन्तर्वस्तु विश्लेषण की निम्नलिखित वि''ाषताएँ उल्लेखित की जा सकती है –

1. अन्तर्वस्तु विश्लेषण अनुसंधान की एक प्रविधि है।
2. इसके अन्तर्गत अनुसंधान की गुणात्मक सामग्री को विभिन्न उचित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है।
3. इसके आधार पर गुणात्मक सामग्री का वैषयिक अध्ययन सम्भव होता है।
4. इसके अन्तर्गत सामग्री का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है।
5. इसके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिणित करके परिमापन योग्य बनाया जाता है।
6. इसके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री का वैज्ञानिक ढंग से विष्ले''ाणतथा निर्वचन किया जाता है।

8.5.2 अन्तर्वस्तु विश्ले''ाण के उद्दे''य

अन्तर्वस्तु विष्ले''ाणका प्रधान उद्दे''य गुणात्मक सामग्री को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करना है। डार्विन पी. कार्टराइट के अनुसार ''अन्तर्वस्तु का उद्दे''य अपरिष्कृत घटना को ऐसे दत्तों में परिवर्तित करना है जो वैज्ञानिक ढंग में आव''यक रूप से प्रस्तुत की जा सके ताकि ज्ञान के निकाय की रचना की जा सके।'' डारविन पी. कार्टराइट के ही अनुसार – ''अधिकां''ातः अन्तर्वस्तु विश्लेषण का संचालन इस प्रकार करना चाहिए ताकि (1) पुनरोत्पादन योग्य अथवा वैषयिक दत्तों की उत्पत्ति सम्भव हो सके जो (2) परिमापन तथा मात्रात्मक क्रिया के प्रति संवेदन''ाील हों, (3) कुछ व्यवस्थित सिद्धांत के लिए महत्वपूर्ण हों तथा (4) जो विश्लेषण सामग्री के वि''ाष्ट समूह के परे सामान्यकृत की जा सके।'' तथापि विवेचनागत अध्ययन की सुमगता हेतु अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रमुख उद्दे''यों को निम्नलिखित बिन्दुओं में प्रस्तुत करके प्रद''ात किया जा सकता है।

1. **गुणात्मक अध्ययनों को मात्रात्मक रूप में परिवर्तित करना** – सामाजिक घटनाओं की प्रकृति मूलतः गुणात्मक होती है परन्तु गुणात्मक तथ्यों को जब तक मात्रात्मक रूप में प्रद''ात नहीं किया जाता तब तक न तो उसका वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सकता है और न ही सांख्यिकीय पद्धतियों के द्वारा निर्वचन किया जा सकता है, अतः अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के द्वारा गुणात्मक सामग्री को ऐसी सामग्री में परिवर्तित किया जाता है जिससे उसको वर्गीकृत

एवं श्रेणीबद्ध करके सारणियों में रखकर प्रस्तुत करने योग्य हो जाता है तथा उनका वैज्ञानिक व सांख्यिकीय विश्लेषण आसानी से हो जाता है।

2. **गुणात्मक अध्ययनों को वैशयिक बनाना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण उद्दे"य गुणात्मक अध्ययनों को वैषयिक बनाना है। कहना न होगा कि वैषयिकता के अभाव में अनुसंधान की वि"वसनीयता तथा प्रामाणिकता लुप्त हो जाती है।

3. **गुणात्मक तथ्यों को परिमापन के योग्य बनाना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का तृतीय महत्वपूर्ण उद्दे"य गुणात्मक तथ्यों को इस योग्य बनाना है, जिससे कि उनका परिमापन सरलता से किया जा सके।

4. **सम्प्रेशण के साधनों के अध्ययन को सुगम बनाना** – आजकल सम्प्रेषण के साधन पर्याप्त विकसित हो गये हैं। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के द्वारा सम्प्रेषण के साधनों के प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है। साथ ही इस प्रविधि के द्वारा सम्प्रेषण के विभिन्न साधनों के प्रभाव का भी तुलनात्मक अध्ययन सम्भव है।

5. **प्रचार के साधनों का विस्तार करना** – वास्तव में इस प्रविधि की सहायता से प्रचार के अच्छे साधनों का विकास किया जा सकता है। प्रचार के साधनों के प्रभाव को जानने के लिए भी अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि अत्यन्त सहायक होती है।

6. **वैज्ञानिक विश्लेषण तथा निर्वचन को सरल बनाना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण उद्दे"य गुणात्मक तथ्यों का वैज्ञानिक विष्ले"णतथा निर्वचन सरलता से करना है।

7. **व्यवस्थित सिद्धांत का निर्माण करना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का सप्तम महत्वपूर्ण उद्दे"य व्यवस्थित सिद्धांत का निर्माण करना है।

8. **तथ्यों का सामान्यकरण करना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक मुख्य उद्दे"य तथ्यों का सामान्यकरण करना भी है। इस प्रविधि के द्वारा तथ्यों को इस रूप में प्रस्तुत किया जाता है कि उन्हें सामान्यकरण के कार्य में लाया जा सके तथा उनके आधार पर अध्ययन के क्षेत्र से परे अन्य समूहों के विषय में भी सामान्यकरण किया जा सके।

बोध प्र"न–2

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का नि"ाान लगाइए।

	सही	गलत
7. अन्तर्वस्तु विष्ले"णअनुसंधान की एक प्रविधि है।	☐	☐
8. अन्तर्वस्तु विष्ले"णके अन्तर्गत अनुसंधान की गुणात्मक सामग्री को विभिन्न उचित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है।	☐	☐
9. अन्तर्वस्तु विष्ले"णके आधार पर गुणात्मक सामग्री का वैषयिक अध्ययन सम्भव होता है।	☐	☐
10. अन्तर्वस्तु विष्ले"णके अन्तर्गत सामग्री का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है।	☐	☐
11. अन्तर्वस्तु विष्ले"णके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिणित करके परिमापन योग्य बनाया जाता है।	☐	☐
	☐	☐

12. अन्तर्वस्तु विष्ले"णके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री का वैज्ञानिक ढंग से विष्ले"णतथा निर्वचन किया जाता है।

अभ्यास प्र"न–2

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा एवं उद्दे"यों के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.5.3 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग

अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अनेकानेक उपयोगों का एक विस्तृत विवरण स्वयं बेरेलसन ने प्रस्तुत किया है। बेरेलसन ने शाब्दिक सामग्री के अन्तर्वस्तु विश्लेषण के 16 उपयोगों की एक सूची प्रस्तुत की है। यद्यपि इसके विभिन्न वैकल्पिक तरीके हैं, जिसमें क्षेत्रीय कार्य को वर्गीकृत किया जा सकता है। परन्तु बेरेलसन द्वारा प्रस्तुत की गई सूची पूर्णतया सन्तोषजनक है। हम यहाँ प्रयोगों व उपयोगों का वर्णन पारिभाषित शब्दावली के मानकीकरण के हित में प्रस्तुत कर रहे हैं। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के सन्दर्भ ग्रन्थों के प्रका"ानों के सम्बन्ध में विस्तृत अध्ययन के लिए वाचक बेरेलसन की पुस्तक का अनु"ालन करने के लिए प्रोत्साहित किये जा सकते हैं।

बेरेलसन द्वारा प्रतीकात्मक सामग्री के विश्लेषण के तीन विस्तृत उपागमों के नामों का उल्लेख किया गया है। प्रथमतः अनुसंधानकर्ता प्राथमिक रूप से स्वयं अन्तर्वस्तु में अभिरूचि लेता है। द्वितीयतः अन्तर्वस्तु के उत्पादकों अथवा इसके कारणों की वि"ोषताओं में अभिरूचि का अन्तर्वस्तु की प्रकृति से वैध अनुमानों को बनाने का प्रयत्न करता है। तृतीयतः वह अन्तर्वस्तु की व्याख्या इस प्रकार करता है ताकि इसके श्रोतागण इसके परिणामों की प्रकृति के बारे में कुछ उद्घाटित कर सकें। कोई एकल अध्ययन के अन्तर्गत इन उपागमों में से एक से अधिक उपागमों का वरण किया जा सकता है, अथवा नहीं भी किया जा सकता है। बेरेलसन ने तीन विस्तृत उपागमों के अन्तर्गत अनेक उप–उपागमों का भी उल्लेख किया है। विवेचनागत अध्ययन की सुगमता हेतु इसको निम्नांकित चार्ट द्वारा प्रदर्"ित किया जा सकता है।

यद्यपि अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि का उपयोग प्राथमिक रूप से जनसंचार साधनों के सम्बन्ध में ही किया गया है। यह अन्य सामग्री के सन्दर्भ में भी समान रूप से प्रयोज्य है। उदाहरणार्थ, वैषयिक

प्रलेखों, असंरचित साक्षात्कारों, प्रक्षेपण परीक्षणों, रोगी चिकित्सक अन्तर्क्रियाओं के अभिलेखों इत्यादि के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु विश्लेषण का प्रयोग किया जाता है।

8.5.4 बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागम

1. **अन्तर्वस्तु** विश्लेषण **की वि"ोशताएँ**

   i) सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु में पाई जाने वाली प्रवृत्तियों का वर्णन करना।

   ii) विद्वता के विकास का पता लगाना।

   iii) सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय भिन्नताओं को स्पष्ट करना।

   iv) सम्प्रेषण के माध्यमों अथवा स्तरों की तुलना करना।

   v) सम्प्रेषण मानदण्डों का निर्माण करना तथा प्रयोग में लाना।

   vi) प्रविधिक अनुसंधान क्रियाओं में सहायता प्रदान करना।

   vii) प्रचार की प्रविधियों को स्पष्ट करना।

   viii) सम्प्रेषण सामग्री की पठनीयता का परिमापन करना।

   ix) शैली सम्बन्धी वि"ोषताओं का अन्वेषण करना।

2. **अन्तर्वस्तु के उत्पादक अथवा कारण**

   i) सम्प्रेषकों के अभिप्रायों तथा अन्य वि"ोषताओं का ज्ञान करना।

   ii) व्यक्तियों तथा समूहों की मनोवैज्ञानिक स्थिति का निर्धारण करना।

   iii) प्रचार के अस्तित्व का (प्राथमिक रूप से वैधानिक उद्दे"यों के लिए) पता लगाना।

   iv) राजनीतिक तथा सैनिक समाचार प्राप्त करना।

3. **अन्तर्वस्तु के श्रोतागण अथवा परिणाम**

   i) जनसंख्या समूहों की अभिवृत्तियों, अभिरूचियों तथा मूल्यों (सांस्कृतिक प्रतिमानों) को परिवर्तित करना।

   ii) ध्यान के केन्द्र बिन्दु को स्पष्ट करना।

   iii) सम्प्रेषण के अभिवृत्यात्मक तथा व्यवहारात्मक प्रत्युत्तरों का वर्णन करना।

8.5.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकार

प्रसिद्ध मनोविज्ञानवेत्ता डी. सी. मैकक्लेलैण्ड ने अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणके विभिन्न रूपों का उल्लेख किया है, जो निम्नलिखित हैं –

1. **अन्तर्क्रिया–प्रक्रिया विश्लेषण** – अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणके इस प्रकार के अन्तर्गत सामाजिक अन्तर्क्रिया के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु को वर्गीकृत एवं श्रेणीबद्ध किया जाता है। इसके अन्तर्गत लघु–समूहों के अनुसंधानों का विश्लेषण किया जाता है।
2. **मूल्य विश्लेषण** – इसके अन्तर्गत अन्तर्वस्तु का वर्गीकरण तथा सम्प्रत्ययीकरण, व्यवहार इकाइयों में उल्लेखित विभिन्न मूल्यों के अनुसार करने का प्रयास किया जाता है।

3. **प्रयोजन अनुक्रम विश्लेषण** – इसके अन्तर्गत जब विषयी अभिप्रेरित स्थितियों के प्रभाव के आधीन होते हें, तो दत्त में जो परिवर्तन घटित होते हैं, को प्राप्तांक प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।

4. **प्रतीकात्मक विश्लेषण** – वि"ोषकर मनोवै"लेषिक सामग्री ''प्रकट अन्तर्वस्तु के पीछे अप्रकट अर्थ'' के विष्ले"ाणहेतु इस प्रविधि का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार के अतिरिक्त कुछ अन्य समाज वैज्ञानिक अन्य प्रकार के सामाजिक विश्लेषण की चर्चा प्रस्तुत करते हैं।

बोध प्र"न–3

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

अर्न्तवस्तु विष्ले"ाणके उपयोगों को बिन्दुवत लिखिये और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर नि"ाान लगाइयें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

अभ्यास–3

अर्न्तवस्तु विश्लेषण के प्रकारों के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

8.5.6 अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण के आधार

अन्तर्वस्तु विश्लेषणवर्गीकरण के निम्नलिखित आधार होते हैं –

1. **दो वर्गीय विभाजन** – इसके अन्तर्गत किसी परिवर्त्य की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति।
2. **स्तरीय विभाजन** – यह वर्गीकरण किसी कम की श्रैणी अथवा उसके स्तर को बताता है, जैसे – उच्च, मध्यम तथा निम्न स्तर। इसके अन्तर्गत तीन अथवा तीन से अधिक स्तर भी हो सकते हैं।
3. **परिदर्त्यी वर्गीकरण** – इस वर्गीकरण के अन्तर्गत वर्गान्तर में परिवर्त्य विभाजित होते हैं। इसमें शून्य भी हो सकता है तथा नहीं भी। यह परिवर्त्य की प्रकृति पर निर्भर करता है।

8.5.7 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में प्रमुख सोपान

एक दी गई परियोजना के लिए सन्तोषजनक अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में डार्विन पी. कार्टराइट ने छः प्रमुख सोपानों का उल्लेख किया है जो निम्नलिखित हैं –

1. **आवश्यक दत्तों का विशिष्ट विवरण देना** – एक विश्लेषण की रूपरेखा की रचना करने के संदर्भ में यह आवश्यक है कि जो दत्त अनुसंधानकर्ता के सम्पूर्ण अनुसंधान अभिकल्प के लिए अपेक्षित है उसको विशेष रूप से अपने मस्तिष्क में धारण किये रहना चाहिये तथा उसका विशिष्ट विवरण प्रस्तुत करना चाहिये।

   सम्पूर्ण अनुसंधान के लिए आवश्यक दत्तों का विशिष्ट रूप से विवरण दिया जाना चाहिए। ऐसे पूर्ण निर्धारित दत्त विश्लेषणको एक निश्चित दिशा प्रदान करते हैं तथा आवश्यक तथ्यों के संकलन में सहायता प्रदान करते हैं।

2. **सारणीकरण हेतु योजनाओं का निर्माण करना** – विश्लेषण रूपरेखा की रचना करने के पूर्व सांकेतिक दत्तों के सारणीकरण के लिए स्पष्ट आयोजन कर लेने से बाद में आने वाली कठिनाइयों को परिहार किया जा सकता है। यह निश्चित कर लेने से कि सांकेतिक दत्तों का यांत्रिक प्रक्रियाकरण के लिए कार्ड़ो पर छिद्रित किया जाना है, विश्लेषण प्रक्रिया में सहायता प्राप्त होती है। सारणीकरण हेतु ऐसी योजनाओं के निर्माण से सारणीकरण की क्रिया अत्यन्त सरल हो जाती है। साथ ही साथ वर्गीकरण में भी सहायता प्राप्त होती है।
3. **रूपरेखा का ढाँचा तैयार करना** – इस सोपान स्तर पर परिवर्त्यो की सूची तैयार करना अत्यन्त उपयोगी होगा जिसके आधार पर अन्तर्वस्तु का सांकेतीकरण किया जाता है। यदि

अनुसंधान में साक्षात्कारों का विश्लेषण करना है तो इन परिवत्यों का प्रयोग न केवल उत्तरदाताओं के मनोवैज्ञानिक संगठन के बारे में प्र"नों के उत्तरों की विभिन्न वि"ोषताओं को वर्गीकृत करने में किया जाएगा, प्रत्युत ऐसे तथ्यों, जैसे उसकी आयु, वैवाहिक परिस्थिति तथा जन–सांख्यिकीय अथवा व्यवहारात्मक वि"ोषताओं के वर्गीकरण में भी किया जा सकता है।

4. **परिवर्त्य की श्रेणियों को भरतना** – श्रेणियों की अनेक व्यवस्थाएं हैं, जिनका प्रयोग किसी दिए गए परिवर्त्य के संदर्भ में किया जा सकता है। इनका चयन अध्ययन के उद्दे"य तथा किये जाने वाले परिमापों के प्रकार पर निर्भर करता है। जिस प्रकार की व्यवस्था का चयन किया जाय, विष्ले"णको लेजार्सफिल्ड तथा बारटन के इस वक्तव्य ''तार्किक शुद्धता की अपेक्षा'' की पूर्ति करनी चाहिए। प्रत्येक परिवर्त्य के अनुरूप ही श्रेणियों का निर्माण किया जाता है। श्रेणियों की संख्या इतनी पर्याप्त होनी चाहिए ताकि तथ्यों को उनमें सुगमतापूर्वक रखा जा सके। प्रत्येक परिर्वत्य को पृथक श्रेणी में रखा जाना चाहिए।

5. **सामग्री को इकाईबद्ध करने के लिए कार्य प्रणाली की स्थापना करना** – अन्तर्वस्तु विष्ले"णके अन्तर्गत तीन प्रकार की इकाइयों – (1) अभिलेख इकाई, (2) संदर्भ इकाई तथा परिगणन इकाई को सम्मिलित किया जाता है। अन्तर्वस्तु विष्ले"णकी रूपरेखा के निर्माण में इस सोपान के अन्तर्गत अध्ययन में प्रयोग की जाने वाली इकाइयों की कार्यकारी परिभाषा प्रस्तुत करनी चाहिए ताकि विविध सांकेतिक समान सामग्री का प्रयोग समान ढंग से करने में सक्षम तथा समर्थ हो सकें।

6. **विश्लेषण रूपरेखा की परीक्षा लेना तथा कार्य–प्रणाली को इकाईबद्ध करना** – विष्ले"णरूपरेखा तथा इकाईबद्ध कार्यप्रणाली को विकसित कर लेने के उपरान्त, उन्हें प्रारम्भिक रूप में अन्तर्वस्तु के संदर्भ में प्रयुक्त करना चाहिए ताकि यह स्पष्ट रूप से ज्ञात किया जा सके कि किस प्रकार के सं"ाोधनों की आव"यकता है। ऐसा करने से विष्ले"णकार्य व्यवस्थित हो जाता है।

8.5.8 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण

बेरेल्सन के अनुसार अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों को सम्मिलित करना चाहिए –

(क) क्या कहा गया है ?

1. विषय–वस्तु : सम्प्रेषण किस विषय में है ?
2. निर्दे"ान : विषय के प्रति किया गया बर्ताव अनुकूल अथवा प्रतिकूल है ?
3. मानदण्ड : वह आधार या पृष्ठभूमि क्या है जिस पर निर्दे"ान का वर्गीकरण किया गया है ?
4. मूल्य : कौनसे उद्दे"य स्पष्ट अथवा अस्पष्ट रूप से सामने आए है ?
5. ढंग : उद्दे"यों की प्राप्ति के लिए किन ढंगों अथवा कार्यो का प्रयोग किया गया है ?
6. लक्षण : व्यक्तियों की कौनसी वि"ोषताएँ स्पष्ट की गई हैं ?
7. कर्त्ता : क्रिया को कौन आरम्भ करता है ?
8. अधिकार : किसके नाम में कथन जारी किये जाते हैं ?
9. उत्पत्ति : सम्प्रेषण की उत्पत्ति का क्या स्थान है ?
10. लक्ष्य : सम्प्रेषण किसक प्रति वि"ाष्ट रूप से निर्दे"ात है ?

इसे किस प्रकार कहा गया है ?

1. सम्प्रेषण का स्वरूप : यह कथा, समाचार, टेलीविजन इत्यादि क्या है ?
2. कथन का स्वरूप : विष्ले"ाणकी इकाई का व्याकरणात्मक अथवा वाक्यीय स्वरूप क्या है ?
3. तीव्रता : सम्प्रेषण में कितनी शक्ति अथवा उत्तेजनात्मक मूल्य पाया जाता है ?
4. युक्ति : सम्प्रेषण की सैद्धान्तिक अथवा प्रचारात्मक प्रकृति क्या है ?
5. प्रत्येक परिवर्त्य की श्रेणियों को भरा जाना चाहिए।
6. सामग्री को इकाईबद्ध करने की कार्य रीति की स्थापना की जानी चाहिए।
7. विश्लेषण : रूपरेखा एवं इकाईबद्ध करने की कार्यरीति को प्रयोग में लाया जाना चाहिए।

8.5.9 विश्लेषण की रूपरेखा का उपयोग

यदि अन्तर्वस्तु वि"लेषक उपर्युक्त बताये गये सोपानों का निपुणता से प्रयोग करता है, तब उसे उसके अनुसंधान उद्दे"यों, अन्तर्वस्तु को उपयुक्त, कार्यकु"ाल सारणीयन तथा सांख्यिकीय व्यवहार के उपयुक्त एक विष्ले"ाणरूपरेखा बनाने की आव"यकता होती है। वास्तव में इस स्तर पर निम्नलिखित सोपानों से होकर गुजरने का प्रयास करना चाहिए –

1. सांकेतकों का चयन
2. सांकेतकों का प्र"ाक्षण
3. सांकेतीकरण की क्रियाविधि

इन तथ्यों का उल्लेख हमने अध्याय 'दत्त प्रक्रियाकरण' में किया है। अतः यहाँ इनकी पुनरावृत्ति करना अनुपयुक्त प्रतीत होता ळें

8.5.10 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याएँ

अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के अन्तर्गत यद्यपि सामाजिक घटना के गुणात्मक तथ्यों को वैज्ञानिक तथ्यों में रूपान्तरित करने का अथक प्रयास किया जाता है, तथापि इस कार्य को सम्पादित करने में कुछ व्यावहारिक समस्याएँ अवरोध उत्पन्न करती है जो निम्नलिखित है –

1. **वैशयिकता की समस्या** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत गुणात्मक दत्त सामग्री को वैषयिक दत्तों में परिवर्तित करने का प्रयास किया जाता है। परन्तु समस्या यह है कि यह दत्त वैषयिक हैं अथवा नहीं, इसकी जाँच किस आधार पर की जाय। वास्तव में सामग्री के परिवर्तन करने के कुछ मौलिक सिद्धांत होने चाहिएए जिसके आधार पर अन्य व्यक्ति भी इसकी जाँच कर सके। उदाहरणस्वरूप, माना कि एक अनुसंधानकर्ता ने एक राजनीतिक नेता द्वारा दिये गये व्याख्यान को दत्त सामग्री के रूप में संकलित किया है जो किसी प्रतिष्ठित समाचार–पत्र में प्रका"ात हो चुका है अथवा निद"ान साक्षात्कार में उत्तरदाताओं द्वारा दिये गये प्रत्युत्तरों को संकलित किया गया है। इस विवरणात्मक सामग्री को किस प्रकार वि"लेषित किया जाय कि अन्य अनुसंधानकर्ता भी इसको स्वतन्त्रता से सत्यापित कर सकें। इस समस्या के चार पहलू स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं–

   (क) विश्ले"ाणकी रूपरेखा के अन्तर्गत प्रयोग किए जाने वाले परिवर्त्य – वैषयिकता के लिए यह आव"यक है कि स्पष्ट रूप से उन परिवर्त्य का वि"ाष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाय जिनके सम्बन्ध में उपलब्ध सामग्री का वर्णन किया जाना है। लेकिन कभी–कभी किसी संक्षिप्त विवरण के बारे में परिवत्यों का वि"ाष्ट विवरण जो अनुसंधानकर्ता प्रस्तुत करते हैं उनमें

अनुरूपता नहीं रहती है, अथवा किसी वि"ाष्ट विवरण के बारे में परिवत्यों का विवरण प्रस्तुत करना कठिन हो जाता है।

(ख) प्रत्येक परिवर्त्य के लिए श्रेणियों – परिवर्त्य के अनुरूप श्रेणियों का निर्माण करना आव"यक होता है, परन्तु कभी–कभी इस सम्बन्ध में कठिनाई आ जाती है। अतः ऐसी स्थिति में प्रत्येक परिवर्त्यों की प्रथम श्रेणी में रखने में असुविधा प्रतीत होती है, परन्तु पुनरोत्पादन योग्य अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणके लिए यह आव"यक है कि प्रत्येक परिवर्त्य के लिए प्रयोग की जाने वाली श्रेणियों का वि"ाष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाय।

(ग) प्रत्येक श्रेणी हेतु परिचालनात्मक परिभाशा – विभिन्न वि"लेषकों द्वारा किए गये विष्ले"ाणमें सहमति प्राप्त करने के लिए उन नियमों का स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए जो यह निर्दे"ा देते हैं कि सामग्री में किन लक्षणों के पाये जाने पर इसे एक वि"ाष्ट श्रेणी में स्थान प्रदान किया जाय। इन नियमों से सम्बन्धित वक्तव्यों को ही श्रेणी की परिचालनात्मक परिभाषा के नाम से सम्बोधित करते हैं।

परिचालनात्मक परिभाषाओं का निर्माण करते समय सर्वप्रथम प्रयोग में लायी जाने वाली विष्ले"ाणकी इकाइयों का नामांकन आव"यक होता है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं हो पाता है।

(घ) अनुभवात्मक अन्तर्वस्तु से विश्ले"ाणरूपरेखा का अनुकूलन – अत्यधिक तार्किक रूप से निर्मित तथा सैद्धांतिक रूप से सौन्दर्यात्मक विष्ले"ाणकी योजना भी वैषयिक परिणाम प्रदान नहीं कर सकती जब तक कि वह वि"लेषित की जाने वाली सामग्री के लिए उपयुक्त न हो। अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणके अन्तर्गत अनुभवात्मक अन्तर्वस्तु से विष्ले"ाणरूपरेखा का अनुकूलन होना एक महत्वपूर्ण समस्या है।

2. **परिमापन की समस्या** – अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिवर्तित करने का प्रयास किया जाता है। परन्तु परिमाणन करते समय कई प्रकार की कठिनाइयाँ आती है जिनमें मुख्य ये हैं–

(क) परिगणन की इकाइयाँ – प्रथम महत्वपूर्ण समस्या इकाइयों के निर्धारण की है। वास्तव में परिमाणन के लिए इकाई का निर्धारण सम्पूर्ण अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणके उद्दे"यों के आधार पर किया जाना चाहिए परन्तु ऐसा करना एक कठिन कार्य होता है।

(ख) श्रेणीकरण की व्यवस्था – परिमाणन के सन्दर्भ में द्वितीय समस्या श्रेणीकरण की व्यवस्था है। वास्तव में परिमाणन न केवल परिगणन की इकाइयों पर ही निर्भर करता है प्रत्युत श्रेणियों के अन्तर्गत क्रमबद्ध सम्बन्धों की उपस्थिति पर भी निर्भर करता है। परन्तु श्रेणीकरण की व्यवस्था करना सहज नहीं है, जैसा कि साधारणतः सोचा जाता है।

(ग) मात्रात्मक सम्बन्धों को निर्धारित करने के लिए प्रमुख कारण – परिमाणन के सन्दर्भ में अनुसंधानकर्ता को प्रतीकात्मक गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिवर्तित करते समय विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक प्रस्तावों का अनुगमन करना पड़ता है, जैसे उसका मुख्य उद्दे"य कार्यकारण सम्बन्धों को ज्ञात करना होता है। परन्तु गुणात्मक सामग्री का कार्य कारण सम्बन्ध ज्ञात करने में अनेक कठिनाइयाँ आती है।

3. **सार्थकता की समस्या** – अनुसंधान में अन्तर्वस्तु विष्ले"ाणकी प्रमुखता के सन्दर्भ में एक गंभीर आलोचना यह की जा सकती है कि इसके द्वारा प्राप्त ''उपलब्धियों'' के सिद्धान्त अथवा प्रयोग हेतु कोई स्पष्ट सार्थकता नहीं है। इस क्षेत्र में हुए कार्यो का सिंहावलोकन करने पर एक व्यक्ति इस तथ्य से प्रभावित हो सकता है कि अधिकां"ा अध्ययन परि"ाुद्ध गणन आकर्षण द्वारा निर्दे"ाित किये गये हैं। डार्विन पी0 कार्टराइट ने उचित ही लिखा है – ''दुर्भाग्यव"ा अन्तर्वस्तु प्रयोग

विष्ले"णके लिए सिद्धान्त अथवा प्रयोग के सन्दर्भ में बिना किसी सराहनीय योगदान के उपर्यक्त परिगणन की वैषयिकता तथा परिमापन की आव"यकताओं की पूर्ति करना सम्भव है।''

4. **सामान्वीकरण की समस्या** – सिद्धान्ततः अन्तर्वस्तु विष्ले"णअपने परिणामों अथवा उपलब्धियों को वास्तविक रूप में वि"लेषित सामग्री तक ही सीमित करने में रूचि नहीं लेता है। वह अपने विष्ले"णपरिणाम को दत्तों के सामान्य समग्र पर सामान्यीकृत करता है। परन्तु एक दत्तों के सीमित समूह के अध्ययन परिणामों तथा उपलब्धियों को अधिक समग्र पर लागू व सामान्यीकृत करना तर्कसंगत तब तक नहीं होगा जब तक नि"चत स्थितियों की पूर्ति न की जाय तथा नि"चत कार्य प्रणालियों का अनुगमन न किया जाय। परन्तु सार्वभौमिक प्रस्तावों की स्थापना तभी वैध मानी जायेगी जबकि ये प्रस्ताव समग्र के वास्तविक प्रतिनिधित्वपूर्ण निद"ान पर अवलम्बित हों। यदि ये प्रस्ताव प्रतिनिधित्वपूर्ण निद"ान के आधार पर स्थापित नहीं किए गए तो ये सार्वभौमिक रूप से सामान्यीकृत नहीं किए जायेंगे। अन्तर्वस्तु विष्ले"णके अन्तर्गत प्रतिनिधित्वपूर्ण निद"ान का चयन करना एक मुख्य समस्या है।

5. **वि"वसनीयता की समस्या** – अन्तर्वस्तु विश्लेषणात्मक अध्ययन के सम्बन्ध में एक मुख्य समस्या वि"वसनीयता की भी है। अन्तर्वस्तु विष्ले"णके अन्तर्गत चूँकि गुणात्मक दत्त सामग्री को मात्रात्मक दत्त सामग्री में परिवर्तित किया जाता है परन्तु यह दत्त सामग्री वि"वसनीय है अथवा नहीं ? इसकी जाँच का आधार क्या है ? इसका समुचित एवं तर्कसंगत उत्तर अन्तर्वस्तु वि"लेषक नहीं पाता है।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण की उपर्युक्त समस्याओं के बावजूद भी यह कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि गुणात्मक सामग्री के विश्लेषण के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु विश्लेषण अत्यन्त उपयोगी है। इसके माध्यम से हमें किसी श्रेणी वि"ोष को प्रदान किए गए वि"िष्ट अर्थ का ज्ञान हो सकता है तथा विभिन्न प्रकार की नई अन्तर्दृष्टियाँ प्राप्त हो सकती है। नई अन्तर्दृष्टियों के सन्दर्भ में मर्टन ने लिखा है– ''साक्षात्कार का विष्ले"णसुराग प्रदान करता है'' तथा बेटेलहिम तथा जैनोविच ने यह उद्‌गार व्यक्त किया है कि साक्षात्कार अभिलेखों की परीक्षा अभिरूचिपूर्ण प्राकल्पनाओं को सुझाती है जो आं"िाक रूप से यह स्पष्ट कर सकती है कि कुछ व्यक्ति सामान्य प्रचलित प्रतिमानों से क्यों विचलित होते हैं।

8.6 सारां"ा

इस इकाई में प्रस्तुत किये तथ्यों के आधार पर आप लोग टेक्चुअल, मीडिया एवं अन्तर्वस्तु विष्ले"णके बारे में जानकारी प्राप्त कर लिये होगें। वास्तव में टेक्चुअल विष्ले"णको हम आज के समय के परिप्रेक्ष्य में देखे तो हमें ज्ञात होगा कि यह विष्ले"णभाषा, हाव–भाव, प्रतीकों एवं परिस्थितियों का वास्तविक निरूपण करने पर जोर देता है। ऐसा इसलिये क्योंकि व्यक्ति जब किसी प्र"न का उत्तर देता है तो उस समय उसके चेहरे की प्रतिक्रिया उसके द्वारा दिये गये उत्तर की प्रतिपुष्टि कर देती है। कभी–कभी हम कोई दृ"य देखते हैं तो उसके साथ किसी प्रकार की भाषा नहीं लिखी रहती है फिर भी हम उस दृ"य का वास्तविक अर्थ निकालने का प्रयास करते हैं एवं उसका अपने भाषा में वर्णन भी करने में समर्थ होते हैं। उसी प्रकार आज के समय में मीडिया विष्ले"णज्चलंत मुद् दों के बारे में हमें ज्ञान प्रदान करता है।

प्रस्तुत इकाई में अन्तर्वस्तु विष्ले"णके बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया जिसमें अन्तर्वस्तु विष्ले"णकी परिभाषा प्रस्तुत की गई है। वास्तव में अन्तर्वस्तु विष्ले"णसम्प्रेषण के प्रकट अन्तर्वस्तु के वैषयिक, व्यवस्थित तथा गुणात्मक वर्णन के लिए अनुसंधान की प्रवृधि है। प्रस्तुत इकाई में अन्तर्वस्तु की वि"ोषताएं, उद्दे"य, उपयोग, प्रकार तथा समस्याओं के बारे में बृहद चर्चा की गई है।

आ"ाा ही नहीं अपितु पूर्ण वि"वास है कि प्रस्तुत इकाई के द्वारा प्रस्तुत किये गये ज्ञान आप के द्वारा किये जाने वाले अनुसंधानों में अत्यधिक महत्वपूर्ण साबित होंगे।

8.7 शब्दावली

टेक्चुअल विश्लेषण –टेक्चुअल विश्लेषण वह विश्लेषण है जिसके माध्यम से हम वास्तविक परिस्थियों के बारे ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वह परिस्थितियॉ प्रतीकों, भाव–भंगिमाओं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में हों।

मीडिया विश्लेषण – किसी भी मुद्दे को किस प्रकार से रखना है? तथा उसको समाज के सामने किस प्रकार प्रस्तुत करना है जिससे ज्यादा से ज्यादा मीडिया कवरेज प्राप्त हो, मीडिया विश्लेषण कहलाता है।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का वास्तव में स्वाभाविक रूप से अभिलेखित की गई गुणात्मक सामग्री के रूप के किया जाता है। यह सामग्री के मात्रात्मिककरण या परिमाणन हेतु विस्तृत प्रविधियों का विकास करता है।

सांकेतीकरण – अनुसंधान द्वारा उत्पन्न सामग्री के विश्लेषण के सम्बन्ध प्रयुक्त किया जाता है।

बेरेलसन – एक समाज"ाास्त्री थे जिन्होनें शाब्दिक सामग्री के अन्तर्वस्तु विश्लेषण के 16 उपयोगों की एक सूची प्रस्तुत की।

8.8 अभ्यास प्र"नों के उत्तर

7. सही
8. सही
9. सही
10. सही
11. सही
12. सही

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, डॉ. एस.डी., वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व, कमल प्रका"ान, इन्दौर, पेज 471–482, वर्ष 1995.
2. मुखर्जी, आर.एन., सामाजिक अनुसंधान तथा सांख्यिकी।
3. मैलिनोवस्की, कल्चर, इन दी इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सो"ाल साइंसेज।
4. गोयल, डॉ0 सुनील एवं गोयल, संगीता, 'प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान, आर0 बी0 एस0 ए0 पब्लि"ार्स, जयपुर, वर्ष 2005, पेज सं0 54–61।

8.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1- Between A Rock and a Hard Place: An Analysis of Low-Wages Workers in the Media.
2. www.google.co.in
3. Learning material of Master of Social Work of Indira Gandhi National Open University.

8.11 निबंधात्मक प्र"न

1. टेक्चुअल विश्लेषण के बारे में प्रका"ा डालिये।
2. मीडिया विश्लेषण पर एक निबंध लिखियें
3. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की अवधारणा के बारे में लिखिए।
4. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की वि"ोषताएं कौन–कौन सी है?
5. अन्तर्वस्तु विश्लेषण के वर्गीकरण के आधार कौन–कौन से है?
6. अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकारों के बारे में लिखिए ?
7. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण कैसे किया जाता है ?

इकाई– 9 मूल्यांकनात्मक, क्रियात्मक तथा सहभागी अनुसंधान
Evaluative, Action & Participatory Research

9.0 इकाई का उद्दे"य
9.1 प्रस्तावना
9.2 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषा
9.2.1 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की प्रविधियां
9.2.2 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्यायें
9.3 क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषयें
9.3.1 क्रियात्मक अनुसंधान की वि"ोषताएॅ
9.3.2 क्रियात्मक अनुसंधान के उद्दे"य
9.3.3 क्रियात्मक अनुसंधान के प्रकार
9.3.4 क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपान
9.3.5 क्रियात्मक अनुसंधान का महत्व व गुण
9.4 सहभागी अनुसंधान की अवधारणा
9.4.1 सहभागीा अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान
9.4.2 सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुण
9.4.3 सहभागी अनुसंधान के दोष
9.4.4 सहभागी अनुसंधान के प्रकार
9.5 सारां"ा
9.6 शब्दावली
9.7 अभ्यास प्र"नों के उत्तर
9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
9.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
9.10 निबंधात्मक प्र"न

9.0 उद्दे"य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप–

7. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषा की जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

8. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की प्रविधियों के बारे में चर्चा प्रस्तुत कर सकेगें।
9. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्याओं को जान सकेगें।
10. क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषाओं पर प्रका"ा डाल सकेगें।
11. क्रियात्मक अनुसंधान की वि"ोषताओं के बारे में लिख सकेगें।
12. क्रियात्मक अनुसंधान के उद्दे"यों पर प्रका"ा डाल सकेगें।
13. क्रियात्मक अनुसंधान के प्रकारों का वर्णन कर सकेगें।
14. क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपानों का वृहद अध्ययन कर सकेगें।
15. क्रियात्मक अनुसंधान के महत्व व गुणों की व्याख्या कर सकेगें।
16. सहभागी अनुसंधान की अवधारणा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
17. सहभागाी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान के बीच अन्तर स्पष्ट कर सकेगें।
18. सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुणों की व्याख्या कर पायेंगें।
19. सहभागी अनुसंधान के दोषों पर प्रका"ा डाल सकेगें।
20. सहभागी अनुसंधान के प्रकारों का वर्णन कर सकेगें।

9.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई आप लोगों के सामने प्रस्तुत है, जो आप लोगों को मूल्यांकनात्मक, क्रियात्मक एवं सहभागी अनुसंधान के बारे में जानकारी प्रदान करेगी। वास्तव में जब कोई अनुसंधान कर्ता योजना कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना चाहता है तो वह मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का प्रयोग कर कार्यक्रमों का मूल्यांकन करता है। इसी इकाई में क्रिया अनुसंधान के बारे में भी वर्णन प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में क्रियात्मक या क्रिया अनुसंधान वह है जो किसी समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करता है, साथ ही अनुसंधान में प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित करता है। इकाई के अंत में सहभागी अनुसंधान के बारे में भी चर्चा प्रस्तुत की गई है जिसमें बताया गया है कि सहभागाी अनुसंधान तकनीक में एक मानव"ाास्त्री को उन लोगों के बीच जाकर सामाजिक सदस्य के रूप में रहना पड़ता है जिनका वह अध्ययन करना चाहता है। एक मानव"ाास्त्री को सहभागाी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा लेना पड़ता है। वह अध्ययन समूह के बीच जाकर निवास स्थान की खोज करता है।

वास्तव में ज्ञान प्राप्ति के उपागम के आधार पर सामाजिक अनुसंधान का तीसरा प्रकार मूल्यांकनात्मक अनुसंधान है। प्रसिद्ध समाज"ाास्त्री अगस्त कॉम्टे का कहना था कि समाज का विकास स्वतः होता है और अंत में समाज ऐसी अवस्था में पहुॅच जाता है जहॉ विकास की प्रक्रिया मानव द्वारा नियंत्रित, निर्दे"ित एवं संचालित होती है। मानव अपने योजना कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना चाहता है। मानव के इस उद्दे"य की पूर्ति मूल्यांकनात्मक अनुसंधान करता है। इस प्रकार आप लोग प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद मूल्यांकनात्मक, क्रियात्मक तथा सहभागी अनुसंधान के बारे में वृहद जानकारी प्राप्त कर सकेगें तथा विभिन्न प्रकार के शोधों में इनका उचित रूप से प्रयोग कर सकेगें।

9.2 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाशा

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान उस अनुसंधान को कहा जाता है जिसके द्वारा समाज में व्याप्त गुणात्मक प्रकृति के तथ्यों एवं प्रवृतियों के अध्ययन एवं उसके विष्ले"ाणके साथ ही साथ उनकी उपयोगिता को भी मूल्यांकित किया जाता है। इस प्रकार का अनुसंधान स्वाभाविक सामाजिक परिवर्तनों एवं नियोजित सामाजिक परिवर्तनों इन दोनों के ही स्वरूप को समझने के लिए उपयोगी है। विभिन्न सरकारें अपने

विभिन्न संगठनों के द्वारा अनेक तरह के कार्यक्रमों को लागू करती हैं। ऐसे कार्यक्रमों की सफलता एवं प्रगति को जानना आव"यक प्रतीत होता है। इस आव"यकता की पूर्ति मूल्यांकनात्मक अनुसंधान के द्वारा की जाती है।

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित किया है जो अग्रलिखित हैं–

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए विलियमसन, कार्प एवं डालफिन ने 'दी रिसर्च क्राफ्ट में लिखा है, '' मूल्यांकनात्मक अनुसंधान वास्तविक संसार में सम्पादित की गई ऐसी गवेषणा है जिसके द्वारा यह मूल्यांकन किया जाता है कि व्यक्तियों के किसी वि"िाष्ट समूह के जीवन में सुधार में सुधार लाने के लिए जो कार्यक्रम बनाया गया, वह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में कहॉ तक सफल रहा।''

यह परिभाषा स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि इस अनुसंधान के द्वारा कार्यक्रमों के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों का अध्ययन किया जाता है। साथ ही यह अंतर भी मालूम किया जाता है कि लक्ष्य एवं उपलब्धियों में कितना अंतर रहा एवं अंतर के क्या कारण रहे।

मनदीम ने मूल्यांकनात्मक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए लिखा है,'' मूल्यांकनात्मक शोध इस प्रकार की शोध हेतु प्रयोग किया गया एक सामान्य पद है, जो व्यक्तिगत कार्यक्रम के उद्दे"यों के संदर्भ में सामाजिक कार्यक्रमों के प्रभावों के मूल्यांकन हेतु की जाती है।''

9.2.1 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की प्रविधियां

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान हेतु व्यक्तिगत स्तर पर गुणात्मक तथ्यों का मूल्यांकन करने के लिए अनुमापन की अनेक मापन प्रविधियां निर्धारित की गई हैं जो प्रमुख रूप से अदृ"य सामाजिक तथ्यों को समाजमितीय क्षेत्र में मूल्यांकित करती हैं। सामाजिक परिवर्तनों एवं सुधारात्मक कार्यक्रमों की सफलता के मापन के लिए बड़े स्तर पर अनुसंधान चलाए जाते हैं। इसमें अनुसंधान के मूल्यांकन की निम्नलिखित प्रक्रियायें अपनायी जाती हैं–

1. सर्व प्रथम समग्र के आकार को ध्यान में रखते हुए निद"ार्न का चयन किया जाता है।
2. निद"ार्न के चयन के बाद संबंधित इकाइयों से साक्षात्कार, निरीक्षण एवं अवलोकन के द्वारा सम्पर्क स्थापित किया जाता है।
3. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में मूल्यांकन अनुसूची का भी प्रयोग किया जाता है। इस बात की पुष्टि पी0 वी0 यंग ने भी की है। उन्होंने इस संदर्भ में अमेरिका के जनस्वास्थ्य संगठन की मूल्यांकनात्मक अनुसूची का उल्लेख किया है।
4. इस प्रविधि में अनुमाप–मूल्यों का भी प्रयोग किया जाता है। मूल्यांकनात्मक अनुसंधान में माप–मूल्यों का निर्धारण करके ही मूल्यांकन किया जाता है।

9.2.2 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्यायें

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की कुछ समस्यायें भी हैं जो अग्रलिखित हैं–

1. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की पहली समस्या यह है कि कार्यक्रम की परिवर्तन"ाील प्रकृति के कारण मूल्यांकन करने में नि"िचतता नहीं आ पाती है।

2. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की दूसरी समस्या यह है कि अनुसंधान द्वारा परिणामों का मूल्यांकन किया जाता है लेकिन कार्यक्रम की संगठनात्मक संरचना का परिणामों पर जो प्रभाव पड़ता है उनमें समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं।
3. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की तीसरी समस्या यह है कि कार्यक्रम को संचालित करने वाले तथा मूल्यांकनकर्ताओं में संबंधों की समस्या खड़ी हो जाती है।

बोध प्र"न–1

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का नि"ाान लगाइए।

	सही	गलत
13. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की एक प्रविधि है।	☐	☐
14. ज्ञान प्राप्ति के उपागम के आधार पर सामाजिक अनुसंधान का तीसरा प्रकार मूल्यांकनात्मक अनुसंधान है।	☐	☐
15. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में मूल्यांकन अनुसूची का भी प्रयोग किया जाता है।	☐	☐
16. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में अनुमाप–मूल्यों का प्रयोग नहीं किया जाता है।	☐	☐
17. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में कार्यक्रम की परिवर्तन"ाील प्रकृति के कारण मूल्यांकन करने में नि"चतता नहीं आ पाती है।	☐	☐
18. समाज"ाास्त्री अगस्त कॉम्टे का कहना था कि समाज का विकास स्वतः होता है	☐	☐

अभ्यास प्र"न–1

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की प्रविधियों के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

बोध प्र"न–2

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्यायें लिखिये और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर नि"ाान लगाइयें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

अभ्यास प्र"न–2

अग्रलिखित प्र"नों के उत्तर दीजिए तथा अपने उत्तर का मिलान दिये पाठ्य सामग्री से कीजिए। उत्तर लिखने के लिये दिये गये स्थान का प्रयोग कीजिए।

1. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान से आप क्या समझते है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्याओं का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

9.3 क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाशयें

क्रियात्मक अनुसंधान का सूत्रपात अमेरिका में हुआ है। इस नये अनुसंधान का आन्दोलन आज से लगभग चार द"ाक पूर्व प्रारम्भ हुआ। इस आन्दोलन को गति प्रदान करने में टीचर्स कालेज कोलम्बिया वि"वविद्यालय के होरेसमन लिंकन इन्स्टीट्यूट ऑफ स्कूल एक्सपेरिमेन्टे"ान का योगदान प्र"ासंनीय है। आन्दोलन का नेतृत्व वहीं के स्टेफन एम0 कोरी ने किया। अब क्रियात्मक अनुसंधान का प्रयोग हमारे दे"ा में भी अत्यधिक मात्रा में होने लगा है। सामाजिक समस्याओं के अपेक्षित समाधान के लिये क्रियात्मक अनुसंधान एक अमोघ अस्त्र है।

भारत जैसे विकास"ाील दे"ा में जहॉ मानवीय जीवन के विविध क्षेत्रों में प्रगति के लिये अनेक प्रकार के नवीन प्रयोग किये जा रहे हैं, क्रिया अनुसंधान महत्वपूर्ण है, क्योंकि अर्थ व्यवस्था के अन्तर्गत क्रिया अनुसंधान सामाजिक तथा आर्थिक विकास के लिये पाइलट प्रयोगों के माध्यम से नवीन विचार के प्रयोग के लिए उज्ज्वल संभावना उपस्थित करता है। क्रिया अनुसंधान के माध्यम से क्षेत्रिय समस्याओं का समुचित रूप से चुनाव किया जा सकता है, विस्तृत स्तर पर सफल विचारों एवं कार्यक्रमों को लोकप्रिय बनाने के लिए आव"यक ढ़ंगों एवं प्रविधियों का विकास किया जा सकता है तथा इसके मार्ग में आने वाली विभिन्न समस्याओं का निराकरण किया जा सकता है। विकास की गति को तीव्र बनाने हेतु विभिन्न क्षेत्रों में अपूर्ण आव"यकताओं की प्रभावपूर्ण पूर्ति तथा इस पूर्ति के मार्ग में आने वाली समस्याओं

के समाधान के लिये पहले से चले आ रहे कार्यक्रमों में आव"यक सं"ाोधन करने तथा नये कार्यक्रमों को चलाने के समुचित अवसर क्रिया अनुसंधान द्वारा प्रदान किये जाते हैं।

वास्तव में क्रिया अनुसंधान का विकास वर्तमान शताब्दी के मध्य में हुआ है। क्रियात्मक या क्रिया अनुसंधान वह है जो किसी समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करता है, साथ ही अनुसंधान में प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित करता है। **गुडे तथा हाट** ने लिखा है, '' क्रियात्मक अनुसंधान उस कार्यक्रम का भाग होता है, जिसका उद्दे"य समाज में विद्यमान परिस्थितियों में परिवर्तन लाना है, चाहे वे गन्दी बस्तियों की द"ाएँ हों या प्रजातीय तनाव तथा पक्षपात हो या एक संगठन की प्रभाव"ाीलता हो।''

गन्दी बस्तियों के बारे में क्रियात्मक अनुसंधान के उपयोग पर **गुडे तथा हॉट** ने बहुत अच्छा प्रका"ा डाला है। इनके अनुसार गन्दी बस्तियों में तथ्यों का संकलन करना, उनकी प्रमाणिकता की जॉच करना और इन गन्दी बस्तियों में सुधार के लिये योजना प्रस्तुत करना क्रियात्मक अनुसंधान का उदाहरण है। सामाजिक जीवन में व्याप्त किसी भी समस्या का अध्ययन करके उस समस्या से प्राप्त निष्कर्षों को क्रियात्मक स्वरूप प्रदान करना ही क्रियात्मक अनुसंधान कहलाता है।

क्रियात्मक अनुसंधान करते समय अग्रलिखित विन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए–

1. अध्ययन के दौरान सामाजिक समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर ध्यान देना।
2. समस्या या घटना के सम्बन्ध में ज्ञान।
3. सहयोग प्राप्त करना, तथा
4. प्रतिवेदन को एकदम ही अन्तिम रूप न प्रदान करना।

क्रियात्मक अनुसंधान की परिभाषा **स्टीफन एम0 कोरी** ने अग्रलिखित दी है। उनके अनुसार, ''एक अध्ययनकर्ता अपने निर्णयों तथा क्रियाओं के दि"ाा निर्धारण करने, उन्हें सही बनाने अथवा उनका मूल्यांकन करने के लिये जिस प्रक्रिया के द्वारा अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करता है, उसी को क्रियात्मक अनुसंधान कहा जाता है।''

जी0 डंकन मिचैल के शब्दों में–''प्रायः क्रियात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध सामाजिक परिवर्तन, व्यक्तियों अथवा एक लघु सामाजिक समूह के उपचार से होता है अथवा इसका उद्दे"य एक संगठन की कु"ालता की वृद्धि होता है।''

मैकग्रथ तथा अन्य के अनुसार– '' क्रियात्मक अनुसंधान संगठित खोजपूर्ण क्रिया है जिसका उद्दे"य व्यक्ति अथवा समूह की क्रियाओं में परिवर्तन तथा विकास करने के लिए अध्ययन करना रचनात्मक सुझाव प्रस्तुत करना है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आलोक में यह कहा जा सकता है कि क्रियात्मक अनुसंधान से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा किसी व्यावसायिक क्षेत्र में कार्यरत व्यक्ति स्वयं की समस्याओं का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन करते हैं ताकि वे अपने क्रियाकलापों एवं निर्णयों का मूल्यांकन कर सकें एवं उनमें सुधार ला सकें। क्रियात्मक अनुसंधान का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण है, क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों द्वारा अनुसंधान। इसमें मान्यता यह है कि अनुसंधान केवल वि"वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में स्थित प्राध्यापकों अथवा अनुसंधानकर्ताओं का सर्वाधिकार नहीं हो सकता। क्षेत्र में कार्य करने वाला प्रत्येक कार्यकर्ता अपनी समस्याओं को पहचान कर उन्हें वैज्ञानिक विधि से हल कर सकता है अथवा यह कहा जा सकता है कि क्षेत्र में कार्य करने

वाले कार्यकर्ता द्वारा अपनी समस्या का खोजा हुआ हल दूर स्थित किसी उच्च कोटि के अनुसंधानकर्ता द्वारा सुझाये गये हल की अपेक्षा अधिक उपयोगाी सिद्ध होगा।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि क्रियात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध सामाजिक अनुसंधान अध्ययन के निष्कर्षों को क्रियात्मक रूप देने की किसी तात्कालिक या भावी योजना से होता है।

9.3.1 क्रियात्मक अनुसंधान की वि"ोषताएँ

क्रियात्मक अनुसंधान की वि"ोषताएँ निम्नवत हैं–

1. क्रियात्मक अनुसंधान क्षेत्रीय परिस्थितियों में संचालित किया जाता है।
2. क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति उपयोगितावादी होती है।
3. क्रियात्मक अनुसंधान के अनतर्गत मौलिक ज्ञान द्वारा उपलब्ध किये गये सत्यों के उपयोग के लिये आव"यक ढ़ंगों एवं प्रविधियों का विकास किया जाता है तथा व्यावहारिक अनुसंधान द्वारा प्रस्तुत किये गये विभिन्न समाधानों को सामुदायिक परिस्थितियों की वि"िाष्ट आव"यकताओं के अनुसार सं"ाोधित एवं परिवर्तित करते हुए इन्हें समुदाय द्वारा स्वीकृत कराने का प्रयास किया जाता है।
4. क्रियात्मक अनुसंधान पाइलट परियोजनाओं को कुछ चुने हुए क्षेत्रों में चलाते हुए सम्पादित किया जाता है।
5. क्रियात्मक अनुसंधान पाइलट परियोजनाओं से प्राप्त अनुभवों के आधार पर इन परियोजनाओं को अधिक विस्तृत क्षेत्र में लागू करना तथा अंतिम रूप से सम्पूर्ण मानव समाज को इससे लाभान्वित कराना होता है।
6. क्रियात्मक अनुसंधान का संबंध प्रत्यक्ष रूप से तात्कालिक समस्याओं से संबंधित रहता है। इसमें समस्याओं का समाधान करने के लिए वैज्ञानिक प्रयत्न किये जाते हैं।
7. क्रियात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत समस्याओं का वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर अध्ययन किया जाता है।
8. क्रियात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत व्यावसायिक कार्यकर्ता अपनी समस्याओं को पहचान कर उनका वैज्ञानिक हल समाधान खोजते हैं। इस पद्धति को आत्म विष्ले"णकी पद्धति भी कहा जाता है।
9. क्रियात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत व्यक्ति या समूह की क्रियाओं में परिवर्तन तथा विकास करने के लिए अध्ययन किया जाता है।

9.3.2 क्रियात्मक अनुसंधान के उद्दे"य

क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति के आधार पर इसके निम्नांकित उद्दे"य हो सकते हैं–

1. क्रियात्मक अनुसंधान परिवर्तन को नियोजित करता है।
2. क्रियात्मक अनुसंधान व्याधिकीय परिस्थितियों को नियंत्रित करता है।
3. क्रियात्मक अनुसंधान सुधार एवं कल्याण को आगे बढ़ाता है।

9.3.3 कियात्मक अनुसंधान के प्रकार

कियात्मक अनुसंधान के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं–

1. **निदानात्मक कियात्मक अनुसंधान**– इसके अन्तर्गत अधिकां"ातः समूह अथवा समुदाय के तनावों पर बल दिया जाता है तथा यह प्रयास किया जाता है कि तनाव किस प्रकार समाप्त किये जा सकते हैं।
2. **सहकारी कियात्मक अनुसंधान**– कियात्मक अनुसंधान के इस प्रकार के अन्तर्गत अनुसंधान कार्य अनुसंधानकर्ताओं, कार्यकर्ताओं व अनुसंधान वि"ोषज्ञों के सहयोग से किया जाता है।
3. **अनुभवात्मक कियात्मक अनुसंधान**– इसके अन्तर्गत व्यक्तियों व समूहों के दिन प्रतिदिन की कठिनाइयों के अनुभवों के आधार पर अनुसंधान कार्य सम्पादित किया जाता है, समस्याओं को निर्धारित किया जाता है तथा समाधानों की खोज की जाती है।
4. **प्रयोगात्मक कियात्मक अनुसंधान**– इसके अन्तर्गत प्रयोगात्मक विधियों का प्रयोग किया जाता है।

अभ्यास प्र"न–3

कियात्मक अनुसंधान की वि"ोषताओं के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....

अभ्यास प्र"न–4

अग्रलिखित प्र"नों के उत्तर दीजिए तथा अपने उत्तर का मिलान दिये पाठ्य सामग्री से कीजिए। उत्तर लिखने के लिये दिये गये स्थान का प्रयोग कीजिए।

1. कियात्मक अनुसंधान के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

.....
.....
.....
.....
.....

9.3.4 कियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपान

अनुसंधान का कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व उद्दे"यों एवं लक्ष्यों का स्पष्ट रूप से वि"ाष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाता है जिससे क्रियात्मक अनुसंधान में भाग लेने वाले अनुसंधानकर्ता इन उद्दे"यों को अपने सामने निरन्तर रखते हुए क्षेत्र में अपना शोध कार्य करने में समर्थ हो सकें। उद्दे"यों की स्पष्ट परिभाषा के बाद क्रियात्मक अनुसंधान के दौरान अपनाए जाने वाले विभिन्न चरण निम्न हैं–

1. **आधार रेखा सर्वेक्षण**– किसी भी प्रकार का क्रियात्मक अनुसंधान परियोजना शुरू करन से पहले यह अपव"यक है कि परियोजना से सम्बंधित सभी आव"यक एवं सार्थक सूचना को एकत्रित कर लिया जाये। सूचना के एकत्रीकरण के बाद स्थानीय परिस्थितियों की वि"ाष्टता को समझने के लिये आव"यक होता है कि सामुदायिक परिस्थिति का सर्वेक्षण किया जाय। इस सर्वेक्षण में समुदाय के व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति, सांस्कृतिक साधनों, प्राविधिक ज्ञान, लोंगों की संग्रहण"ीलता, सामुदायिक समितियों, संगठनों एवं संस्थाओं, लोंगों के विचारों, मनोवृतियों, वि"वासों एवं क्रियाओं, समुदाय की शक्ति की स्थापना, नेतृत्व एवं गुटबंदी, संचार के विभिन्न साधनों एवं प्रतिमानों आदि का सर्वेक्षण किया जाता है। आधार रेखा सर्वेक्षण क्रियात्मक अनुसंधान को संचालित करने वाली संस्था को इस प्रकार की मौलिक सामग्री प्रदान करता है जो आरम्भिक स्थिति में किये गये इस सर्वेक्षण तथा पाइलट परियोजना के क्षेत्र में कुछ दिनों तक क्रिया"ील रहने के बाद हुए परिवर्तनों के तुलनात्मक मूल्यांकन में सहायता देती है। आधार रेखा सर्वेक्षण यह सूचना प्रदान करते है कि वह क्षेत्रीय परिस्थिति जिसमें पाइलट परियोजना को चलाने का विचार है, इसके संचालन के लिये आव"यक आव"यकताओं की पूर्ति करती है या नहीं।
2. **कियात्मक अनुसंधान परियोजना का आरम्भ**– परियोजना के संचालन के लिए आव"यक सामान्य सूचना एवं परिस्थिति संबंधित तथ्यों को एकत्रित करने के बाद क्रिया की एक योजना तैयार की जाती है और इसके निर्माण के बाद प्र"ाक्षित कर्मचारियों को सेवयोजित कर उनकी वि"ोषज्ञ सेवाओं की सहायता से परियोजना को शुरू किया जाता है।
3. **कियात्मक अनुसंधान परियोजना का सामयिक सूल्यांकन**– गुणात्मक एवं परिमाणात्मक दृष्टिकोणों से क्रियात्मक अनुसंधान परियोजना की इच्छित दि"ाा में में प्रगति के मूल्यांकन के लिए समय–समय पर आव"यक आंकड़ों की सहायता से मूल्यांकन कार्य किया जाता है। मूल्यांकन हमें यह बताता है कि जिन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु यह परियोजना चलाई गई थी उनकी पूर्ति हो रही हे या नहीं।
4. **परियोजने की किया विधि में आव"यक परिवर्तन एवं सं"ोधन**– मूल्यांकन से प्राप्त परिणामों के आधार पर मौलिक परियोजना में आव"यक सं"ोधन एवं परिवर्तन किये जाते हैं और इस प्रकार इसे पुनः वर्तमान सामुदायिक परिस्थितियों में ऐच्छिक उद्दे"यों की प्राप्ति की दृष्टि से समंजित किया जाता है।
5. **परियोजना का अंतिम मूल्यांकन**– परियोजना का मूल्यांकन पर्याप्त समय के बाद किया जाना चाहिए। यह मूल्यांकन परियोजना के क्षेत्र में चलते रहने के प"चात् इसका क्रमबद्ध मूल्यांकन प्राप्त किये गये परिणामों एवं व्यक्तियों पर इसके द्वारा डाले गये प्रभावों को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। व्यक्तियों की संग्रहण"ीलता, उनको प्राप्त होने वाले लाभ तथा व्यक्तियों के परियोजना में सम्मिलन का पता लगया जाता है। इसकी शक्तियों एवं दुर्बलताओं पर प्रका"ा डाला जाता है। असफलताओं के कारणों का वि"ोष उल्लेख किया जाता है। अंतिम रूप से यह निर्णय लिया जाता है कि क्या इस परियोजना को अन्य

क्षेत्रों पर लागू करना उपयुक्त होगा अथवा नहीं। यह भी नि"चत किया जाता है कि अन्य क्षेत्रों में इसे लागू करने के मार्ग में क्या कठिनाइयॉ आ सकती हैं तथा इसका निवारण किस प्रकार हो सकता है। योजना को विस्तृत स्तर पर लागू करने के लिए आव"यक संगठनात्मक संरचना, कर्मचारियों एवं अन्य प्राविधिक आव"यकताओं के विषय में संस्तुतियां की जाती हैं।क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपानों को अग्रलिखित चित्र संख्या–01 की सहायता से प्रस्तुत किया जा रहा है–

क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपान

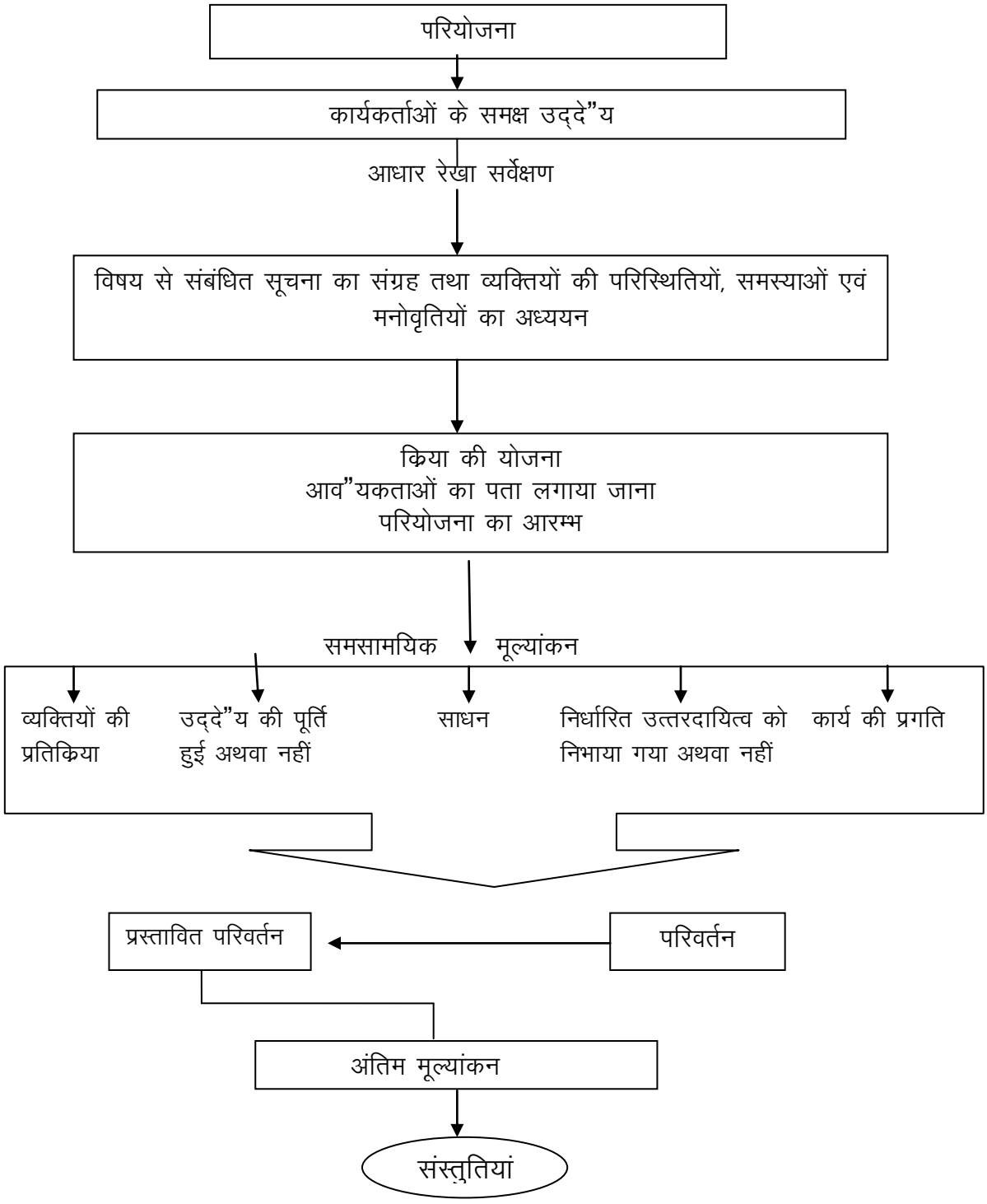

चत्र संख्या–01, **Source: P.R.A.I., Action Research and its importance in underdeveloped economy, p. 13**

कियात्मक अनुसंधान की योजना का उदाहरण

उदाहरण के रूप में एक कियात्मक अनुसंधान योजना यहॉ प्रस्तुत की जा रही है–

समस्या– छात्रों में वाचन की आदत विकसित करना।

सम्भावित कारण–

1. छात्रों के पास स्वयं की पुस्तकें न होने के कारण वे पढ़ने में रूचि नहीं लेते।
2. छात्रों को कौन सी पुस्तक पढ़नी चाहिए इसका ज्ञान न होने से वे पढ़ने में रूचि नहीं लेते।
3. छात्रों को पुस्तकालय से पुस्तकें सुविधा से उपलब्ध नहीं हो पाती।

कियात्मक परिकल्पना–

1. यदि छात्रों को उनके स्तर के लिए उपयुक्त पुस्तकों की सूची प्राप्त हो सके तो उनमें पढ़ने की आदत विकसित हो सकती है।
2. यदि अध्यापक अध्ययन के दौरान छात्रों को संदर्भ साहित्य के संबंध में अवगत करावें एवं ऐसे कार्य दें जिनमें पाठ्यपुस्तकों को पढ़ने की आव"यकता हो तो छात्रों वाचन की आदत विकसित की जा सकती है।

अनुसंधान प्ररचना

प्रथम सोपान– कियात्मक अनुसंधान कार्य प्रारम्भ होने के पूर्व जिस कक्षा के छात्रों पर प्रयोग किया जा रहा है, उन्होंने पिछले वर्ष औसतन एक माह में कितनी पुस्तकें पढ़ी, यह पता लगाया जाएगा। पुस्तकालय से यह सूचना प्राप्त की जायेगीं

द्वितीय सोपान– विभिन्न विषयों के अध्यापक अपने विषयों अपने विषयों में उपलब्ध पुस्तकों का स्तरानुकूल वर्गीकरण कर सूचियॉ तैयार करेंगे। ये सूचियॉ छात्रों में वितरित की जायेंगी।

तृतीय सोपान– अध्यापक पढ़ाते समय सन्दर्भ पुस्तकों की ओर छात्रों का ध्यान आकर्षित करेंगे तथा ऐसी अध्यापन विधाऍ काम में लेंगे एवं कार्य देंगे जिनमें पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त पुस्तकें पढ़नी पढ़ें।

चतुर्थ सोपान– पठन–पाठन के कार्यक्रम में स्वाध्याय के लिए एक पीरिएड प्रतिदिन का प्रावधान होगा तथा इसमें छात्रों को पुस्तकें देने का प्रबंध होगा।

पंचम सोपान– छात्र अपने पास एक डायरी रखेंगे। उनमें वे जो पुस्तकें पढ़ते हैं उनका सारां"ा लिखेंगे।

'ाष्टम् सोपान– प्रयोगा समाप्त होने के उपरांत छात्रों ने औसतन एक माह में कितनी पुस्तकें पढ़ी, यह ज्ञात किया जायेगा।

मूल्यांकन– प्रयोग के पूर्व एक छात्र औसतन एक माह में कितनी पुस्तकें पढ़ता था और प्रयोग के फलस्वरूप एक छात्र की औसतन एक माह में पढ़ी हुई पुस्तकों की तुलना की जायेगी तथा यह ज्ञात किया जायेगा कि पुस्तकों की संख्या में कितनी वृद्धि हुई है तथा क्या यह वृद्धि सार्थक है? इन अंकों के आधार पर यह निष्कर्ष निकल जायेगा कि क्या उपर्युक्त समस्या प्रयोग में अपनाए गए तरीकों से हल हो सकती है।

9.3.5 क्रियात्मक अनुसंधान का महत्व व गुण

तात्कालिक सामाजिक समस्याओं का समाधान करने के लिए क्रियात्मक अनुसंधान एक नया विचार है। प्रजातन्त्रात्मक राष्ट्र की आव"यकताओं को पूरा करले के लिए एक महत्वपूर्ण तरीका है। आज के तीव्र परिवर्तन"ाील समाज में इसकी अत्यन्त आव"यकता है। यह एक सजीव अनुसंधान है जो समस्याओं को हल करने का प्रयास करता है।

हमारे दे"ा के वि"वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में प्रगति एवं सुधार लाने की दृष्टि से क्रियात्मक अनुसंधान एक ठोस कदम है। इसके द्वारा जो कुछ भी सुधार अथवा परिवर्तन लाए जायेंगे वे पर्याप्त स्पष्ट व ठोस होंगे। वि"वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की प्रत्येक समस्या जो वि"वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की गतिविधि में बाधक सिद्ध हो सकती है, उसका समाधान ढूँढ़ा जा सकता है। आजकल हमारे वि"वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में जो ऊहापोह की स्थिति उपस्थित हो गई है, उसका निराकरण सम्भव हो सकता है। "वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में अध्यापकों द्वारा विभागाध्यक्ष या प्रधानाचार्य की निन्दा या विभागाध्यक्ष या प्रधानाचार्य द्वारा अध्यापकों का मीन–मेख निकालना, अध्यापकों में परस्पर असहयोग, छात्रों द्वारा ि"ाक्षकों की आलोचना या ि"ाक्षकों द्वारा छात्रों की भर्त्सना आदि की जप प्रवृति प्रचण्ड रूप धारण करती चली जा रही है उसका लोप क्रियात्मक अनुसंधान के अवलम्बन से ही सम्भव है।

क्रिया अनुसंधान ने सैद्धांतिक व्यवहार के बजाय प्रयोग पर अधिक बल दिया है। अनुसंधान में प्राप्त परिणामों के आधार पर भावी व्यवहार निर्भर करता है। इससे समस्या समाधान के अवसर प्राप्त होते हैं। मूले ने इसलिए कहा है कि,'' क्रियात्मक अनुसंधान समस्याओं को समाधान से उत्पन्न करता है। ि"ाक्षक इनको सरलता से समझकर प्रयोग कर सकता है। इससे ि"ाक्षक के व्यवहार तथा अभिमत में परिवर्तन होता है।''

वास्तव में क्रियात्मक अनुसंधान को महत्व निम्नलिखित दृष्टियों के वि"ोष है–

1. जनतन्त्रात्मक मूल्यों की सुरक्षा हेतु।
2. वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण उत्पन्न नयी परिस्थितियों का सामना करने के लिए।
3. सामाजिक व्यवस्था की यांत्रिकता एवं रूढ़िवादिता का पर्यावरण समापन करने के लिए।
4. वि"वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों मे की कार्य–पद्धति में जितना हो सके सुधार लाने के लिए।
5. छात्रों की बहुमुखी प्रगति हेतु वि"वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों मे की क्रियाओं का प्रभावोत्पादक रीति से आयोजन करने के लिए।
6. अध्यापकों, विभागाध्यक्षों, प्रधानाचार्यों, प्रबंधकों तथा निरीक्षकों में वैज्ञानिक या वैषयिक दृष्टि से अपनी कार्य–प्रणालियों का मूल्यांकन करने एवं उनमें समयानुसार परिवर्तन लाने के लिए समर्थ बनाना।
7. वि"वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की अनेक समस्याओं का महज समाधान प्राप्त करने हेतु।
8. छात्रों की उपलब्धियों का स्तर बढ़ाने के लिए।

9.4 सहभागी अनुसंधान की अवधारणा

सहभागी अनुसंधान तकनीक में एक मानव"ाास्त्री को उन लोगों के बीच जाकर सामाजिक सदस्य के रूप में रहना पड़ता है जिनका वह अध्ययन करना चाहता है। एक मानव"ाास्त्री को सहभागी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा लेना पड़ता है। वह अध्ययन समूह के बीच जाकर निवास

स्थान की खोज करता है। वह अपने उद्दे"यों से लोगों को परिचित कराता है तथा जब एक अजनबी के रूप में अपने बारे में प्रचलित भ्रांतियां दूर हो जाती हैं, तब अनुसंधानकर्ता तथा अध्ययन समूह के सदस्यों के बीच सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। उस समाज के सदस्य अनुसंधानकर्ता को अपने समाज के सदस्य के रूप में स्वीकार कर लेते हैं।

9.4.1 सहभागी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान

छात्रहित में सहभागी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान के बीच अंतर स्पष्ट करना आव"यक है। सहभागी अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता की सहभागिता एध्ययन समूह के सदस्यों के साथ बनी रहती है, जबकी प्रत्यक्ष अनुसंधान में अध्ययन समूह तथा अनुसंधानकर्ता के बीच सहभागिता का अभाव पाया जाता है। एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सहभागिता के साथ–साथ प्रत्यक्ष अनुसंधान भी करता है, लेकिन एक प्रत्यक्ष अनुसंधानकर्ता सहभागी अनुसंधान नहीं कर पाता है। इस प्रकार सभी सहभागी अनुसंधान प्रत्यक्ष अनुसंधान के उदाहरण हो सकते हैं, लेकिन सभी प्रत्यक्ष अनुसंधान सहभागी अनुसंधान नहीं हो सकते।

मानव"ाास्त्र में सहभागी अनुसंधान का प्रयोग– मानव"ाास्त्री अध्ययन में सहभागी अनुसंधान तकनीक का प्रयोग सर्वप्रथम ब्रिटि"ा मानव"ाास्त्री बी0 के0 मैलिनोवस्की द्वारा ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों के अध्ययन में किया गया था। मैलिनोवस्की प्रकार्यवाद सिद्धांत के जनक थे। उन्होंने मानव जाति वर्णन"ाास्त्र में सहभागी अनुसंधान तकनीक का प्रमुख स्थान स्थापित कराने में सफलता प्राप्त की थी। मैलिनोवस्की ने लगातार चार वर्षों तक (1914–18) ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों के बीच उस समाज के सदस्य के रूप में रहकर सहभागी अनुसंधान तकनीक के माध्यम से अनुभवाश्रित तथ्यों का पता लगाया था। सहभागी अनुसंधान तकनीक के प्रयोग के आधार पर उन्होंने ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों की सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था के रूप में सूचनाओं का भण्डार स्थापित करने में सफलता पाई थी। सहभागी अनुसंधान तकनीक के प्रयोग के आधार पर उन्होंने यह दिखाने का प्रयास किया कि किस प्रकार ट्रोब्रिएंड द्वीप समाज समग्रता के रूप में कार्य करता है। ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों की संस्कृति, सामाजिक संगठन, अर्थव्यवस्था, राजनीति व्यवस्था इत्यादि के बारे में उन्होंने जो कुछ भी लिखा है वह उनके सहभागी अनुसंधान तकनीक से प्राप्त तथ्यों एवं अनुभवों पर आधारित है।

मैलिनोवस्की के बाद मानव"ाास्त्र में सहभागी अनुसंधान तकनीक के माध्यम से क्षेत्र कार्य की परंपरा स्थापित हुई। आजकल सभी मानव"ाास्त्री मैलिनोवस्की द्वारा स्थापित इस परंपरा का पालन करते हैं। अतः सहभागी अनुसंधान तकनीक मानव"ाास्त्री शोध की आत्मा का रूप धारण कर चकी है।

9.4.2 सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुण

सहभागी अनुसंधान तकनीक में अग्रलिखित गुण पाये जाते हैं–

1. **सूचनादाताओं से संबंध स्थापना**– सहभागी अनुसंधान में एक अनुसंधान कर्ता को अपने सूचनादाताओं से संबंध स्थापित करना पड़ता है। बिना संबंध स्थापन के एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपने लक्ष्य प्राप्ति में सफल नहीं हो सकता है। संबंध स्थापन के आधार पर एक अनुसंधान कर्ता सूचनादाताओं के बीच अपनी सहभागिता द"ार्ा पाता है तथा सहभागी अनुसंधान करने में सफल होता है। अतः सूचनादाताओं से संबंध स्थापन सहभागी अनुसंधान का एक प्रमुख गुण है। संबंध स्थापन के द्वारा एक सहभागी अनुसंधान कर्ता बेहिचक अपने सूचनादाताओं से सब कुछ जान पाने में सफल होता है।

2. **सूचनादाताओं के सुख–दुःख में भागीदारी**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता को अपने अध्ययन समूह के सदस्यों द्वारा अपने समाज के सदस्य के रूप में मान्यता प्राप्त हो जाती है। अनुसंधानकर्ता एवं सूचनादाता के बीच की दूरी समाप्त हो जाती है। इनके बीच अपनापन का भाव विकसित हो जाता है। सूचनादाताओं द्वारा अनुसंधानकर्ता की भावना की कद्र की जाती है तथा अनुसंधानकर्ता भी सूचनादाताओं की भावनाओं का आदर करता है। दोनों एक दूसरे के सुख–दुःख के भागीदार भी बन जाते हैं। ऐसे घनिष्ट संबंधों का लाभ एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को प्राप्त होता है।
3. **प्राकृतिक व्यवहार का अध्ययन**– सहभागी अनुसंधान में सूचनादाताओं एवं शोधकर्ता के बीच संकोच का भाव खत्म हो जाता है। अतः शोधकर्ता एवं सूचनादाता एक–दूसरे से बीना हिचक के बातचीत करते हैं। ऐसी स्थिति में एक अनुसंधानकर्ता अपने सूचनादाताओं के प्राकृतिक व्यवहार का अनुसंधान करने में सफल होता है। सूचनादाताओं के प्राकृतिक व्यवहार का अध्ययन अन्य मानव"ाास्त्रीय शोध तकनीक से संभव नहीं है। अन्य मानव"ाास्त्रीय तकनीक के प्रयोग में सूचनादाता तथा अनुसंधान कर्ता के बीच दूरी बनी रहती है। सूचनादाता अनुसंधान कर्ता को जवाब देते समय बिल्कुल सतर्क रहता है। अतः सूचनादाताओं के प्राकृतिक व्यवहार का अध्ययन संभव नहीं हो पाता है।
4. **सामाजिक किया–कलापों का अध्ययन**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपने सूचनादाताओं के समाज का अभिन्न अंग बन जाता है। सूचनादाताओं के समाज का सदस्य होने के कारण एक सहभागी अनुसंधान कर्ता उस समाज के किया–कलापों में भाग लेने लगता है तथा उस समाज के किया–कलापों का अध्ययन करने में सफल होता है। वह दिन–रात उस समाज के बीच रहता है जिसका वह अध्ययन करता है। वह इस तथ्य का अनुसंधान करने में सफल होता है कि किस प्रकार उस समाज में विभिन्न प्रकार के सामाजिक कियाकलापों का निर्वहन किया जाता है। एक अनुसंधानकर्ता उस समाज की विभिन्न संस्थाओं तथा उसके प्रकार्य को समझने में सफल होता है।
5. **सामाजिक संबंधों का अध्ययन**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता तथा सूचनादाताओं के बीच भावनात्मक संबंध का विकास होता है। वह सूचनादाताओं के साथ संबंध विकसित कर लेता है। साथ ही साथ वह उस समाज के विभिन्न व्यक्तियों के बीच प्रचलित सामाजिक संबंध से अवगत होता है। वह परिवार, वं"ा, गोत्र तथा ग्राम समुदाय में प्रचलित सामाजिक संबंधों को बहुत नजदीक से देखता है तथा सामाजिक सच्चाई से अवगत होता है।
6. **सामाजिक समस्या की जानकारी**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता उन लोगों के समाज में जाकर रहता है जिसका वह अध्ययन करता है। वह उस समाज का एक सदस्य बन जाता है। अतः वह उस समाज की विभिन्न समस्याओं से अवगत होता है। वह उन समस्याओं से संबंधित सच्चाई को जानने में सफल होता है।
7. **बातचीत की सुविधा**– सहभागी अनुसंधान में एक अनुसंधानकर्ता हमे"ाा सूचनादाताओं के मध्य रहता है। अतः वह सूचनादाताओं से हमे"ाा सूचना प्राप्त करने की स्थिति में रहता है। वह बिना हिचक किसी सूचनादाता से बातचीत कर लेता है। इस सुविधा के कारण एक शोधकर्ता अपने उद्दे"यों की प्राप्ति में जल्द सफल हो जाता है।
8. **समस्याओं के समाधान के उपाय**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता केवल अपने सूचनादाताओं के समाज की समस्याओं से ही अवगत नहीं होता है, बल्कि वह उस समाज की समस्याओं को सुलझाने में भी सहायक होता है। उस समाज के सदस्य अनुसंधानकर्ता के ऊपर भरोसा करने लगते हैं तथा अपनी विभिन्न प्रकार की समस्याओं के समाधान में उसकी मदद लेते हैं।

समस्याओं को सुलझाकर एक सहभागी अनुसंधानकर्ता अपनी स्थिति और मजबूत कर लेता है तथा सूचनादाताओं से सूक्ष्म जानकारी प्राप्त कर लेता है।

9. **अंतरदृश्टि का विकास**– सहभागी अनुसंधानकर्ता सूचनादाताओं के समाज में दिन–रात रहता है। अतः वह उस समाज की सच्चाई के बारे में उसके मस्तिष्क में एक अंतरदृष्टि का विकास होता है। उसी अंतरदृष्टि के आधार पर वह सामाजिक सच्चाई का विवरण प्रस्तुत करता है।
10. **सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं की जानकारी**– चूँकी एक सहभागी अनुसंधानकर्ता अपने सूचनादाताओं के साथ–साथ रहता है, अतः वह उस समाज के सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करने में सफल होता है। वह कुछ वैसी सामाजिक घटनाओं के संबंध में भी जानकारी प्राप्त कर लेता है जिसे समाज के सदस्य एक अनजान व्यक्ति के सामने प्रकट नहीं होने देना चाहते हैं। लेकिन सहभागी अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता तथा सूचनादाता के बीच संकोच समाप्त हो जाता है। यही कारण है कि एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं की जानकारी प्राप्त करने में सफल होता है।
11. **ज्यादा सत्य सूचनाओं का संकलन**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सूचनादाताओं के प्राकृतिक व्यवहार तथा सामाजिक सच्चाई को प्रत्यक्ष रूप से देखने में सफल होता है। अतः वह ज्यादा सत्य सूचनाओं को संकलित करने में सफल होता है।
12. **परम्पराओं एवं रीति– रिवाजों का गहराई से अध्ययन**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता उस समाज की परम्पराओं एवं रीति–रिवाजों को गहराई से अध्ययन करने में सफल होता है। चूँकि वह रीति–रिवाजों में भाग लेकर उसका क्रमबद्ध ढ़ंग से शोध करता है। अतः वह सामाजिक सच्चाई की गहराई तक पहुँच पाने में सफल होता है।
13. **सूचनादाताओं से स्पश्टीकरण की सुविधा**– चूँकि एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सूचनादाताओं के सम्पर्क में रहता है, अतः वह किसी भी विषय पर सूचनादाताओं से स्पष्टीकरण प्राप्त करने में सफल होता है। वह स्पष्टीकरण के आधार पर सामाजिक सच्चाई को अच्छे ढ़ंग से समझ पाता है।
14. **समाजीकरण प्रक्रिया की जानकारी**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता समाज के सदस्य के रूप में मान्यता मिलने के कारण समाजीकरण प्रक्रिया को बहुत समीप से देख तथा समझ पाता है। वह समाज के विभिन्न सदस्यों के व्यवहार तथा सामाजिक गुण से परिचित होता है। वह यह भी बहुत आस–पास से देख पाता है कि किस प्रकार समाज में एक व्यक्ति को जीवन की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में प्रवे"ा कराया जाता है।
15. **कुरीति तथा कुप्रथाओं के संबंध में जानकारी**– सहभागी अनुसंधानकर्ता समाज के बीच रहने का अवसर प्राप्त करता है। अतः वह उस समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार की कुरीतियों तथा कुप्रथाओं से परिचित होता है तथा सही जानकारी प्राप्त करने में सफल होता है। जैसे– डायन, कुदृष्टि, बाल विवाह इत्यादि।
16. **संघर्श एवं सहयोग की जानकारी**– समाज के बीच रहने के कारण एक सहभागी अनुसंधानकर्ता लाभप्रद स्थिति में रहता है। वह समाज में प्रचलित संघर्ष तथा सहयोग की प्रक्रियाओं से परिचित होता है तथा सामाजिक सहयोग एवं संघर्ष पर सामाजिक सच्चाई से अवगत होता है।
17. **प्रतियोगिता की जानकारी**– प्रतियोगिता भी एक सामाजिक प्रक्रिया है तथा सभी समाज में प्रतियोगिता किसी न किसी रूप में पाई जाती है। चूँकि एक सहभागी अनुसंधानकर्ता समाज के बीच रहता है तथा सामाजिक क्रिया–कलापों का अंग बन जाता है, अतः उसे समाज में प्रचलित प्रतियोगिता प्रक्रिया की जाकारी प्राप्त होती है।

18. **स्थानीय भाशा जानने में सहायक**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता अपने सूचनादाताओं से काफी लंबे समय तक सम्पर्क में रहता है। अतः वह सूचनादाताओं से बातचीत करते–करते उनकी स्थानीय भाषा की जानकारी भी प्राप्त कर लेता है। स्थानीय भाषा का ज्ञान प्राप्त कर एक सहभागी अनुसंधानकर्ता अपने सहभागी अनुसंधान में वि"ोष सफलता प्राप्त करने में सफल होता है।
19. **क्रमबद्ध अनुसंधान मे सहायक**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सूचनादाताओं के मध्य हमे"ाा रहता है। अतः वह सामाजिक सच्चाईयों का क्रमबद्ध शोध करने में सफल होता है। अगर उसे किसी प्रकार की समस्या का सामना करन पड़ता है, तब वह सूचनादाताओं से मिलकर उसे आसानी से दूर कर लेता है।
20. **स्थिर अभिलेखन में सहायक**– सहभागी शोध एक शोधकर्ता को सामाजिक सच्चाई के स्थिर अभिलेखन में सहायक होता है। सहभागी अनुसंधानकर्ता धीरे–धीरे सभी सामाजिक सच्चाईयों का क्रमबद्ध शोध कर उसे लिखित रूप प्रदान करने में सफल होता है।
21. **भाारीरिक भाशा के अध्ययन में सहायक**– शारीरिक अंगों की गति के अध्ययन द्वारा सहभागी शोधकर्ता सूचनादाताओं की शारीरिक भाषा को समझ पाने में सफल होता है। जब कोई सहभागी अनुसंधानकर्ता सहभागी अनुसंधान करता है तो उसे विभिन्न प्रकार की तकनीकों का भी सहारा लेना पड़ता है, क्योंकि सहभागी अनुसंधानकर्ता को समय व परिस्थति के अनुरूप तकनीकों का भी प्रयोग कर समस्या के बारे में जानकारी प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार प्रकार उपरोक्त बिन्दुओं के माध्यम से आप लोग सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुणों के बारे में जानकारी प्राप्त किया। जब कभी भी इस प्रकार के गुण आपके सामने प्रस्तुत होंगे तो आप लोग समझ सकते हैं कि वह तकनीक सहभागी अनुसंधान तकनीक है।

बोध प्र"न 4

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का नि"ाान लगाइए।

	सही	गलत
1. एक मानव"ाास्त्री को सहभागाी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा नहीं लेना पड़ता है।	☐	☐
2. बी0 के0 मैलिनोवस्की द्वारा ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों का अध्ययन किया गया था।	☐	☐
3. सहभागाी अनुसंधान स्थानीय भाषा जानने में सहायक होता है।	☐	☐
4. सहभागाी अनुसंधान द्वारा सामाजिक समस्या की जानकारी नहीं प्राप्त की जा सकती।	☐	☐
5. मैलिनोवस्की के बाद मानव"ाास्त्र में सहभागी अनुसंधान तकनीक के माध्यम से क्षेत्र कार्य की परंपरा स्थापित हुई।	☐	☐
6. सभी सहभागाी अनुसंधान प्रत्यक्ष अनुसंधान के उदाहरण हो सकते हैं, लेकिन सभी प्रत्यक्ष अनुसंधान सहभागाी अनुसंधान नहीं हो सकते।	☐	☐

अभ्यास 3

सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुणों के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

9.4.3 सहभागी अनुसंधान के दोष

हालांकि सहभागी अनुसंधान तकनीक को मानव"ाास्त्रीय शोध की आत्मा के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है, लेकिन सहभागी अनुसंधान तकनीक की भी अपनी कुछ सीमायें हैं जिसके कारण सभी प्रकार के अध्ययन एवं सभी प्रकार की सूचना पाने के लिए सहभागी अनुसंधान तकनीक का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सहभागी अनुसंधान तकनीक के निम्नलिखित दोष प्रकट होते हैं–

1. **भावनात्मक संबंध केकारण सूचना प्रभावित**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपने सूचनादाताओं के समूह के साथ भावनात्मक रूप से जुड़ जाता है। उसके तथा सूचनादाताओं के बीच भावनात्मक संबंध का विकास हो जाता है। भावनात्मक संबंध के कारण एक सहभागी अनुसंधान कर्ता दृष्टि दोष का ि"ाकार हो जाता है। इसके कारण वह सच्चाई जानने में वह विफल हो जाता है। इस प्रकार शोधकर्ता तथा सूचनादाता के बीच भावनात्मक संबंध के विकास के कारण सूचनाएं प्रभावित हो जाती हैं।
2. **पक्षपातपूर्ण निर्णय**– एक मानव"ाास्त्री को सामातिक मूल्य निर्धारण में बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती है। सामाजिक मूल्य निर्धारण में उसे सांस्कृतिक सापेक्षवाद की अवधारणा मो आचार"ाास्त्रीय नियम के रूप में पालन करना पड़ता है। वह किसी समाज की संस्कृति का वर्णन पक्षपातरहित ढ़ग से प्रस्तुत करता है। वह अपनी सांस्कृतिक मूल्यों के साथ तूलना नहीं करता है तथा उस संस्कृति को ऊॅच–नीच, विकसित–अविकसित, अमीर–गरीब इत्यादि सापेक्षिक शब्दों के माध्यम से व्यक्त नहीं करता है। लेकिन जब एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपने सूचनादाताओं से भावनात्मक संबंध काज विकास कर लेता है, त बवह सूचनादाताओं का पक्ष लेना शुरू कर देता है जिसके कारण उसके द्वारा संकलित तथ्य पक्षपात पूर्ण हो जाते हैं। वह सही सूल्य निर्धारण में विफल हो जाता है।
3. **अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं की अनदेखी**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता सूचनादाताओं के बीच हमे"ाा रहता है तथा सूचनादाताओं तथा उस अनुसंधानकर्ता के बीच की दूरी समाप्त हो जाती है। एक सहभागी अनुसंधान कर्ता उस समाज का सदस्य बन जाता है। सूचनादाताओं एवं अनुसंधानकर्ता के बीच इतनी घनिष्टता बढ़ जाती है कि अनुसंधानकर्ता अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं को नजरअंदाज कर देता है। वह उन सूचनाओं की महत्ता को भूल जाता है। इस

प्रकार एक सहभागी अनुसंधान कर्ता द्वारा अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं की अनदेखी कर दी जाती है।

4. **मूल्य निर्धारण में पक्षपात की संभावना**– सूचनादाताओं तथा एक सहभागी अनुसंधान कर्ता के बीच ऐसे भावनात्मक संबंध विकसित हो जाते हैं जिसके कारण अनुसंधानकर्ता की दृष्टि प्रभावित हो जाती है। उसकी दृष्टि तटस्थ नहीं रह पाती। उसकी दृष्टि सूचनादाताओं का पक्ष लेना शुरू कर देती है। इसके कारण मूल्य निर्धारण में पक्षपात की संभावना बढ़ जाती है।
5. **संकीर्ण अनुभव**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता का अनुभव संकीर्ण हो जाता है। उसका अनुभव उन्हीं लोगों तक सीमित हो जाता है जिनके बीच रहकर वह अपना अध्ययन करतह है। उसी स्थान पर निवास करने वाले अन्य लोगों के ऊपर वह ध्यान नहीं देता हैं। अतः एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपना संकीर्ण अनुभव लेकर वापस लौटता है।
6. **सहभागिता की अनुमति नहीं मिलने पर विफलता**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को अगर सूचनदाताओं द्वारा सहभागिता की अनुमति नहीं मिलती है, तब उसे अपने लक्ष्य में विफल होना पड़ता है। सहभागी अनुसंधान के लिये सहभागिता की अनुमति अनिवार्य होती है, क्योंकि बिना अनुमति के एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपनी सहभागिता नहीं दिखा सकता है। कुछ ऐसे सामाजिक क्रियाकलाप होते हैं जिनमें बाहरी व्यक्तियों की उपस्थिति अ"ाुभ मानी जाती है। उन क्रियाकलापों में केवल समाज के लोग ही भाग ले सकते हैं। उदाहरण के लिये, गर्भाधारण अनुष्ठान, नामकरण अनुष्ठान, अन्न प्रासन अनुष्ठान, मुंडन इत्यादि। इन क्रियाकलापों में भाग लेने के लिये एक अनुसंधानकर्ता को सामाजिक अनुमति नहीं मिल पाती है। अतः वह इस प्रकार के सामाजिक क्रियाकलापों का अनुसंधान अपनी सहभागिता के आधार पर नहीं कर पाता है।
7. **सामाजिक निशेधों के कारण अध्ययन सम्भव नहीं**– प्रत्येक समाज में कुछ ऐसे नियम होते हैं जिन्हें निषेध के रूप में पालन किया जाता है। उदाहरण के लिये प्रसवगृह में प्रवे"ा वर्जित होता है, देवता घर में बाहरी लोगों का प्रवे"ा निषेध होता है, जादू करते समय किसी का होना वर्जित होता है, नामकरण के समय बाहरी लोगों का प्रवे"ा वर्जित होता है। इसी प्रकार समाज में कई निषेधात्मक नियक प्रचलित रहते हैं। हालांकि एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को उस समाज के सदस्य के रूप में मान्यता प्राप्त होती है तथा उसके एवं सूचनादाताओं के बीच की दूरी समाप्त हो जाती है, लेकिन एक सामाजिक सदस्य के रूप में उसे भी उन सभी निषेधात्मक नियमों का पालन करना पड़ता है। अतः निषेधात्मक नियमों के पालन के कारण एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को अपनी सहभागिता नहीं द"ार्ाने के लिये बाध्य होना पड़ता है।
8. **व्यक्तिगत सम्बन्ध का अध्ययन सम्भव नहीं**– समाज में व्यक्ति–व्यक्ति के बीच कुछ गुप्त सम्बन्ध होते हैं। उन गुप्त सम्बन्धों का अध्ययन सहभागी अनुसंधान द्वारा सम्भव नहीं है, क्योंकि दो व्यक्तियों के गुप्त सम्बन्धों के बीच तीसरे व्यक्ति की सहभागिता को बर्दा"त नहीं किया जा सकता है। अतः व्यक्तिगत सम्बन्धों का अध्ययन सहभागी अनुसंधान द्वारा सम्भव नहीं है।
9. **सामाजिक सहमति पर निर्भरता**– सहभागी अनुसंधान की सफलता समाज की सहमति पर निर्भर करती है। मान लिया जाये कि एक अनुसंधानकर्ता किसी समाज के विवाह सम्बंधी रीति–रिवाजों का अपनी सहभागिता द्वारा अध्ययन करना चाहता है, लेकिन समाज ने न तो एसे रीति–रिवाजों में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया है आ।र न ही एसे समाज ने भाग लेने की अनुमति प्रदान की है, इस परिस्थिति में एक अनुसंधान कर्ता सहभागी अनुसंधान तकनीक के आधार पर सूचना संकलित कर सकता है। अतः एक सहभागी अनुसंधान की सुफलता सामाजिक आमंत्रण या सहमति पर निर्भर करता है।

10. **अतीत की घटनाओं के अध्ययन में विफल**– मान लिया जाये कि कोई घटना पहले ही घटित हो गई है, तब उस स्थिति में उस घटना का अध्ययन सहभागी अनुसंधान द्वारा सम्भव नहीं है। अतः अतीत की घटनाओं के अध्ययन में सहभागी अनुसंधान तकनीक को विफलता का सामना करता पड़ता है।
11. **यौन जीवन का अध्ययन सम्भव नहीं**– यौन जीवन एक सामाजिक सच्चाई है। यौन जीवन जीने के लिए समाज में विवाह नामक प्रथा प्रचलित है लेकिन साथ ही समाज में कुछ अवैध यौन सम्बन्ध की घटना भी प्रका"ा में आती हैं। वैध यौन सम्बन्ध दो व्यक्ति तक ही सीमित होते हैं। यौन जीवन को प्रत्येक व्यक्ति अपने तक सीमित रखना चाहता है। इस गुप्त व्यवहार में किसी तीसरे व्यक्ति की सहभागिता सम्भव नहीं है। अतः सहभागी अनुसंधान तकनीक द्वारा यौन जीवन से सम्बंधित सूचनाओं को संकलित नहीं किया जा सकता है।
12. **वे"यावृत्ति का अध्ययन सम्भव नहीं**– वे"यावृत्ति एक सामाजिक रोग है। कोई भी समाज वे"यावृत्ति को मान्यता नहीं देता है। लेकिन वे"यावृत्ति गुप्त रूप से एक व्यवसाय के रूप में प्रचलित रहती है। समाज में अवैध यौन सम्बन्ध में लिप्त महिलाओं को वे"या, छिनार, रखनी, रखैल इत्यादि नामों से जाना जाता है। ऐसी महिलायें अपनी यौन सेवा के माध्यम से पुरूष ग्राहकों को संतुष्ट कर पैसा कमाती हैं। समाज में इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। चूँकि समाज में वे"यावृत्ति गुप्त दैहिक धंधा के रूप में प्रचलित है तथा वे"यागामी पुरूषों को भी हेय दृष्टि से देखा जाता है, अतः वे"यावृत्ति का अध्ययन सहभागी अनुसंधान तकनीक से सम्भव नहीं है।
13. **अपराधियों के अध्ययन में असफल**– अपराधियों के कृत्य समाज विरोधी होते हैं, यही कारण है कि समाज अपराधियों को हेय दृष्टि देखता है। चोरी, डकैती, हत्या, बलात्कार, आगजनी, दंगा इत्यादि में शामिल व्यक्तियों को अपराधी कहा जाता है। अपराधियों तथा अपराधिक घटनाओं का सहभागी शोध तकनीक के आधार पर अध्ययन नहीं किया जा सकता है।
14. **सामाजिक राजनीति में निर्लिप्तता**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता के ऊपर यह आरोप लगाया जाता है कि वह उस समाज की राजनीति तथा गुटबाजी में शामिल हो जाता है जिसका वह अध्ययन करता है। ऐसी स्थिति में वह निष्पक्ष नहीं रह जाता हैं। वह किसी गुट से प्रभावित होकर उसका पक्ष लेने लगता है। कभी–कभी गुटबाजी के कारण एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को अपमानित भी होना पड़ता है।
15. **गुप्त व्यवहारों के अध्ययन में विफल**– प्रत्येक समाज में कुछ संकेतों के माध्यम से सूचनाओं का आदान–प्रदान होता है तथा कई प्रकार के सामाजिक क्रिया–कलाप सम्पन्न होते हैं। गुप्त व्यवहारों में किसी वाह्य व्यक्ति का हस्क्षे बर्दा"त नहीं किया किया जाता है। हालॉकि एक सहभागी अनुसंधान कर्ता` को समाज के सदस्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है, फिर भी अनेक प्रकार के गुप्त व्यवहारों में उसे सहभागी नहीं बनाया जाता है। अतः गुप्त व्यवहारों का अध्ययन सहभागी अनुसंधान तकनीक से सम्भव नहीं है।
16. **काला जादू के अध्ययन में असफल**– काला जादू का सम्बन्ध हानि पहुॅचाने वाली जादुई क्रियाओं से है। काला जादू करने वालों को डायन, कमाईन इत्यादि नामों से जाना जाता है। काला जादुई क्रियाएं सुनसान स्थान में सम्पन्न की जाती हैं। वहॉ किसी अन्य व्यक्ति की सहभागिता सम्भव नहीं है। अतः काला जादू का अध्ययन सहभागी अनुसंधान कर्ता द्वारा सम्भव नहीं है।
17. **पत्रकारिता दृश्टिकोण**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता के ऊपर पत्रकारिता का दृष्टिकोण अपनाने के कारण आलोचना की जाती है।

9.4.4 सहभागी अनुसंधान के प्रकार

सहभागी अनुसंधान को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है–

(अ) पूर्ण सहभागी अनुसंधान

(ब) अर्द्ध सहभागी अनुसंधान

(स) असभागी अनुसंधान

उपरोक्त तीनों प्रकारों की व्याख्या करना आव"यक प्रतीत होता है, जिससे आप लोगों के समझ में इन तीनों प्रकारों का वास्तविक अर्थ पता चल सके। अतः इन तीन प्रकारों का वर्णन अग्रलिखित प्रस्तुत किया जा रहा है–

(अ) पूर्ण सहभागी अनुसंधान– यह अनुसंधान वह अनुसंधान है जिसमें एक अनुसंधानकर्ता की पूर्ण भागीदारी रहती है। मान लिया जाये कि एक अनुसंधान कर्ता किसी समाज में प्रचलित विवाह सम्बन्धी अनुष्ठानों का अध्ययन करना चाहता है तथा वह प्रारम्भ से अंत तक सभी प्रकार के अनुष्ठानों का अध्ययन अपनी सहभागिता के आधार पर करता है, तब उसका सहभागी अनुसंधान पूर्ण सहभागी अनुसंधान कहलाता है। लेकिन जब वह सभी प्रकार के अनुष्ठानों में अपनी सहभागिता न द"र्ाकर कुछ महत्वपूर्ण अनुष्ठानों में अपनी सहभागिता द"र्ाता है, तब इस प्रकार के सहभागी अनुसंधान को अपूर्ण सहभागी अनुसंधान कहा जाता है।

(ब) अर्द्ध सहभागी अनुसंधान– इस प्रकार के अनुसंधान में एक अनुसंधान कर्ता की भागीदारी पूर्ण नहीं रहती है, बल्कि उसकी भागीदारी अर्द्ध होती है। इस प्रकार की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब एक सहभागी अनुसंधान कर्ता किसी कारणव"ा बीच में ही अपनी सहभागिता छोड़कर चला जाता है। बाद में बचे हुए तथ्यों की जानकारी वह उन लोगों से प्राप्त करता है जिनकी सहभागिता रहती है। इस प्रकार एक अनुसंधान कर्ता का अपना सहभागी अनुसंधान, अर्द्ध सहभागी अनुसंधान कहलाता है। आकस्मिक घटना, सामाजिक निषेध, दो अनुसंधान कर्ताओं द्वारा एक ही अध्ययन, बड़ी–बड़ी शोध परियोजनाओं में अर्द्ध सहभागी अनुसंधान तकनीक का सहारा लिया जाता है।

(स) असभागी अनुसंधान– असहभागी अनुसंधान वह अनुसंधान है जिसमें एक अनुसंधान कर्ता की सहभागिता नहीं होती है। अपने लक्ष्य पूर्ति हेतु एक अनुसंधान कर्ता उस व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित करता है तथा पूछताछ करता है जिसकी सहभागिता उस घटना से रहती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि एक सहभागी अनुसंधान कर्ता एक असहभागी अनुसंधान कर्ता के लिए सूचनादाता का काम करता है। यही कारण है कि सहभागी अनुसंधान के गुण असहभागी अनुसंधान के दोष असहभागी अनुसंधान के गुण में बदल जाते हैं। जहॉ सहभागी अनुसंधान विफल हो जाता है वहॉ असहभागी अनुसंधान सफल होता है।

9.5 सारां"ा

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि मूल्यांकनात्मक, क्रियात्मक एवं सहभागी अनुसंधान क्या होते हैं तथा इनका प्रयोग कहॉ किया जाता है? वास्तव में ये तीनों प्रकार के अनुसंधानों की प्रासंगिकता वर्तमान समय में बहुत ही महत्वपुर्ण है। जब हम किसी कार्यक्रम की सफलता एवं असफलता का मूल्यांकन करना होता है तब मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का प्रयोग करते हैं। तथापि क्रिया

अनुसंधान के माध्यम से क्षेत्रिय समस्याओं का समुचित रूप से चुनाव किया जा सकता है, विस्तृत स्तर पर सफल विचारों एवं कार्यक्रमों को लोकप्रिय बनाने के लिए आव"यक ढ़ंगों एवं प्रविधियों का विकास किया जा सकता है तथा इसके मार्ग में आने वाली विभिन्न समस्याओं का निराकरण किया जा सकता है। विकास की गति को तीव्र बनाने हेतु विभिन्न क्षेत्रों में अपूर्ण आव"यकताओं की प्रभावपूर्ण पूर्ति तथा इस पूर्ति के मार्ग में आने वाली समस्याओं के समाधान के लिये पहले से चले आ रहे कार्यक्रमों में आव"यक स"ोधन करने तथा नये कार्यक्रमों को चलाने के समुचित अवसर क्रिया अनुसंधान द्वारा प्रदान किये जाते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि क्रिया अनुसंधान के माध्यम से कार्यक्रमों की रूपरेखा का निर्माण करने एवं नये कार्यक्रमों को चलाने में सहायता प्राप्त होती है। इसी इकाई में सहभागी अनुसंधान के बारे में भी प्रका"ा डाला गया है जिसके आधार पर आप लोग सहभागी अनुसंधान की बारीकियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर अपना अनुसंधान कार्य पुरा कर सकते है। सहभागी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान के अन्तर को स्पष्ट कर सकते है। इस इकाई के माध्यम से आप लोग सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुणों की व्याख्या कर पायेंगे तथा सहभागी अनुसंधान के दोषों एवं सहभागी अनुसंधान के प्रकारों पर प्रका"ा भी डाल सकेंगे।आ"ाा ही नहीं वरन् पूर्ण वि"वास है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में अत्यधिक वृद्धि करेगी जिससे आप अपने जीवन में आने वाले अनुसंधानों का अध्ययन बहुत ही सरलता से कर पाने में समर्थ होंगे।

9.6 शब्दावली

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान– इस अनुसंधान के द्वारा कार्यक्रमों के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों का अध्ययन किया जाता है। साथ ही यह अंतर भी मालूम किया जाता है कि लक्ष्य एवं उपलब्धियों में कितना अंतर रहा एवं अंतर के क्या कारण रहे।

क्रियात्मक अनुसंधान– क्रियात्मक अनुसंधान संगठित खोजपूर्ण क्रिया है जिसका उद्दे"य व्यक्ति अथवा समूह की क्रियाओं में परिवर्तन तथा विकास करने के लिए अध्ययन करना रचनात्मक सुझाव प्रस्तुत करना है।

सहभागी अनुसंधान– सहभागी अनुसंधान तकनीक में एक मानव"ाास्त्री को उन लोगों के बीच जाकर सामाजिक सदस्य के रूप में रहना पड़ता है जिनका वह अध्ययन करना चाहता है। एक मानव"ाास्त्री को सहभागी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा लेना पड़ता है।

9.7 अभ्यास प्र"नों के उत्तर

बोध प्र"न 1

1. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की एक प्रविधि है। **सही**
2. ज्ञान प्राप्ति के उपागम के आधार पर सामाजिक अनुसंधान का तीसरा प्रकार मूल्यांकनात्मक अनुसंधान है। **सही**
3. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में मूल्यांकन अनुसूची का भी प्रयोग किया जाता है। **सही**
4. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में अनुमाप–मूल्यों का प्रयोग नहीं किया जाता है। **गलत**
5. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में कार्यक्रम की परिवर्तन"ाील प्रकृति के कारण मूल्यांकन करने में नि"चतता नहीं आ पाती है। **सही**

6. समाज"ाास्त्री अगस्त कॉम्टे का कहना था कि समाज का विकास स्वतः होता है **सही**

बोध प्र"न 4

1. एक मानव"ाास्त्री को सहभागी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा नहीं लेना पड़ता है। **गलत**
2. बी0 के0 मैलिनोवस्की द्वारा ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों का अध्ययन किया गया था। **सही**
3. सहभागी अनुसंधान स्थानीय भाषा जानने में सहायक होता है। **सही**
4. सहभागी अनुसंधान द्वारा सामाजिक समस्या की जानकारी नहीं प्राप्त की जा सकती। **गलत**
5. मैलिनोवस्की के बाद मानव"ाास्त्र में सहभागी अनुसंधान तकनीक के माध्यम से क्षेत्र कार्य की परंपरा स्थापित हुई। **सही**
6. सभी सहभागी अनुसंधान प्रत्यक्ष अनुसंधान के उदाहरण हो सकते हैं, लेकिन सभी प्रत्यक्ष अनुसंधान सहभागी अनुसंधान नहीं हो सकते। **सही**

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. विलियमसन, कार्प एण्ड डाल्फिन, दी रिसर्च क्राफ्ट, पेज, 382.
2. गुडे एण्ड हॉट, (1952) मेथड्स इन सो"ाल रिसर्च, मैक्ग्रा हील बुक कम्पनी, न्यूयार्क,
3. स्टीफन, एम0 कोरी, (1953) एक"ाल रिसर्च टू इम्प्रूव स्कूल प्रेक्टिसेज, न्यूयार्क ब्यूरो ऑफ पब्लिके"ान्स कोलम्बिया यूनिवर्सिटी टीचर्स कालेज प्रेस.
4. मि"ोल, जी0 डी0, (1968) ए डिक"ानरी ऑफ सा"ायोलोजी, लंदन, रोटलेज एण्ड केगन पॉल, प्रेस.
5. मैकग्रेथ एण्ड अद"र्ा, एजूके"ानल रि"ार्च मेथड्स.
6. जॉन, डब्लू0 बेस्ट, (1963) रिसर्च इन एजूके"ान, न्यू देलही.
7. अहमद, मिर्जा रफीउद्दीन, (1967) समाज कार्य द"ान एवं प्रणालियां, ब्रिटि"ा बुक डिपो, लखनऊ.
8. आगवर्न एण्ड निमकॉफ, (1957) ए हैण्डबुक ऑफ सा"ायोलाजी, राउटलेज एण्ड केगनपाल लिमिटेड, लंदनध
9. आप्टेकर, हरबर्ट, (1941) बेसिक कान्सेप्ट्स इन सो"ाल वर्क, यूनिवर्सिटी आवनार्थ कैरोलिना प्रेस, चैपेल हिल.
10. आर्थर, हिलमैन, (1957) कम्युनिटी आर्गेनाइज"ान एण्ड प्लानिंग, दी मैकमिलन कम्पनी, न्यूयार्क.
11. आसबर्न, एल0 डी0 एण्ड न्यूमेयर, एम0 एच0, दी कम्यूनिटी एण्ड सोसाइटी.
12. इण्डियन कान्फ्रेन्स ऑफ सो"ाल वर्क, स्पे"ाल ऐन्निवर्सरी, नवम्बर–दिसम्बर, 1957.
13. इण्डिया–कम्यूनिटी डेवलपमेण्ट प्रोग्राम इन इण्डिया, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1963.
14. इण्डिया–कम्यूनिटी डेवलपमेण्ट ऐट ए ग्लान्स, दिल्ली, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1962.
15. इण्डिया–कम्यूनिटी डेवलपमेण्ट एण्ड कोआपरे"ान, गाइड टू कम्युनिटी डेवलपमेण्ट, सेकेण्ड रेव0 इड0, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1957.

16. इण्डिया– ए रिपोर्ट आन दी ऐनुअल कान्फ्रेन्स आन कम्युनिटी डेवलपमेण्ट एण्ड पंचायत राज, न्यू दिल्ली, जुलाई, 1964, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1964.
17. इण्या–दी स्कोप ऑफ एक्सटेन्सन इन कम्युनिटी डेवलपमेण्ट, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1961.
18. ऐण्डरसन, जे0, सो"ाल वर्क ऐज ए प्रोफे"ान, सो"ाल वर्क ईयर बुक, रसेज सेज फाउन्डे"ान, न्युयार्क.

9.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. डब्लू0डब्लू0डब्लू.गूगल.को.इन
2. गोयल, सुनिल एवं गोयल, संगीता, प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान
3. सिंह, डा0 सुरेन्द्र, सामाजिक अनुसंधान भाग–एक

9.10 निबंधात्मक प्र"न

1. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए तथा इसकी प्रविधियों का वर्णन कीजिए।
2. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान को परिभाषित कीजिए तथा इसकी समस्याओं पर प्रका"ा डालिये।
3. क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषाओं पर प्रका"ा डालते हुए इसकी वि"ोषताओं की चर्चा कीजिए।
4. क्रियात्मक अनुसंधान के उद्दे"यों का वर्णन करते हुए इसके प्रकारों की व्याख्या कीजिए।
5. क्रियात्मक अनुसंधान का एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए इसके विभिन्न सोपानों पर प्रका"ा डालिये।
6. क्रियात्मक अनुसंधान के महत्व व गुणों की चर्चा कीजिए।
7. सहभागी अनुसंधान की अवधारणा लिखिए तथा सहभागीा अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
8. सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुण एवं दोषों का वर्णन कीजिए।

इकाई 10 मापन के स्तर एवं अनुमापन का उपयोग
Level of Measurement & Use of Standrad Scale

10.0 उद्दे"य
10.1 प्रस्तावना
10.2 मापन का अर्थ
10.3 मापन के प्रकार
10.3.1 नामीय मापनी
10.3.2 क्रम सूचक मापनी
10.3.3 अन्तराल मापनी
10.3.4 अनुपाती मापनी
10.4 अच्छे माप की कसौटी
10.4.1 वि"वसनीयता
10.4.2 वैधता
10.4.3 संवेदन"ीलता
10.5 अनुमापकों का मापन
10.5.1 अनुमापको की उपयोगिता
10.5.2 अनुमापकों के निर्माण में कठिनाई
10.6 अनुमापक के प्रकार
10.6.1 थर्स्टन मापनी
10.6.2 लिर्कट मापनी
10.6.3 गाटमैन मापनी
10.6.4 बोगार्डस मापनी
10.7 सारांश
10.8 परिभाषिक शब्दावली
10.9 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर
10.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
10.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
10.12 निबंधात्मक प्र"न

10.0 उद्दे"य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

1. माप के अर्थ को समझ पाना,
2. माप के प्रकार को समझ पाना,
3. अच्छी माप की कसौटियों को समझ पाना,
4. अनुमापन मापनी को समझ पाना,
5. अनुमापन की उपयोगिता तथा कठिनाई को समझ पाना,
6. अनुमापन मापनी के प्रकारों को बताना।

10.1 प्रस्तावना

किसी भी अध्ययन को यर्थाथता तथा वैज्ञानिकता प्रदान करने के लिए नि"चत अनुमापन नितान्त आव"यक होता है। परि"ाुद्ध एवं सही माप करने की क्षमता इस बात का द्योतक है कि एक विज्ञान कितनी प्रगति कर चुका है। मानवीय व्यवहारों जैसे मनोवृति, विचार, सामाजिक स्थिति, सामाजिक दूरी आदि अमूर्त व गुणात्मक घटनाओं का मापना पड़ता है और इनका प्रत्यक्ष व सही माप सम्भव नही है। जहां तक भौतिक प्राकृतिक तथ्यों की माप करना सरल होता है इन माप के द्वारा परि"ाुद्ध निष्कर्ष भी प्राप्त होते हैं। वही सामाजिक घटनाओं अपनी जटिल और परिवर्त"ाील प्रकृति की होने के कारण गुणात्मक प्रकृति की होती है। इनकी प्रकृति गुणात्मक होने के कारण उनका वस्तुनिष्ठ और गणनात्मक माप करना कठिन और सम्भव नही होता। इन वि"ोषताओं की सही सही माप करनें के लिए मापने के पैमानों को विकसित किया जिस कारण समाज"ाास्त्र अपनी वैज्ञानिक प्रकृति को बनाये रखने में सम्भव रहा। भविष्य में समाज वैज्ञानिक व्यक्तिगत व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों की माप कहीं अधिक यथार्थ रूप में कर सकेंगे।

10.2 मापन का अर्थ

वस्तुओं व घटनाओं को तर्क संगत रूप में मान्य नियमों के अनुसार संख्या निरूपण को माप कहा जाता है। वर्तमान सामाजिक विज्ञानों में माप का अधिकाधिक प्रयोग किया जा रहा है। माप का अर्थ है कि सम्बन्धों की संख्यात्मक अभिव्यक्ति तथा जो इन समंकों के विभिन्न मानों के बीच तुलनात्मक संबंध स्थाजिपत करने में सक्षम हो। जब वैज्ञानिक मापन के संबंध में कोई कथन प्रस्तुत करते है तो उनका अर्थ प्रेक्षित आंकडों या समंकों का नियमबद्ध प्रस्तुतीकरण करना होता है।यह प्रस्तुतीकरण इस प्रकार किया जाता है जिसमें कि एक नि"चत नियम के अंतर्गत यह संख्याएं दक्षतापूर्वक विष्ले"ाणकरने में सक्षम हो तथा यह **विश्लेषण**, मापन के उद्दे"य से संबंधित अर्थपूर्ण परिणाम और सूचना प्रदान कर सके। आंकड़ों में इस प्रकार की वि"ोषता का विष्ले"ाणकरने के लिए एक मापन यन्त्र का होना आव"यक है जिससे कि विभिन्न वस्तुओं के निर्दिष्ट संख्याओं में अन्तर प्राप्त किया जा सके।

10.3 मापन के प्रकार

सांख्यिकीय आंकड़ों का विष्ले"ाणकरने वाले वैज्ञानिकों ने आंकड़ों के आधार पर किये जाने वाले परीक्षण में आंकड़ों के मापन के लिए विभिन्न सांख्यिकीय पैमानों का प्रयोग किया। यह पैमाने, मापन के विभिन्न स्तर पर प्रयोग किए जा सकते है। इसके चार मुख्य प्रकार हैं–

10.3.1 नामीय या अंकित मापनी (nominal scale)

जब वस्तुओं के समूह को दो या अधिक श्रेणियों में विभेद करने के लिए गुणात्मक अन्तर को आधार बनाए तो नामीय माप का प्रयोग करते हैं। यह सबसे निम्न स्तर का माप होता है, जैसे किसी शहर की जनसंख्या को हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाईयों में बांट कर सारणी बना दे तो इसे नामीय या नियत मापनी

का प्रयोग कहा जाता है अर्थात् यह अनुमाप व्यक्तियों को दो या दो से अधिक वर्गों में वर्गीकृत करता है जिनके सदस्य अलग–अलग वि"ोषताऐं रखते हैं। यह स्केल आदिकाल की माप है और गिनती पर आधारित सांख्यिकी तकनीक इस प्रकार के माप में अनुमेय है।

उदाहरण– महाविद्यालय के समाज"ाास्त्र विभाग में 100 व्यक्तियों के समूह को, इसमें दो अलग अलग गुणों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है।

लिंग (sex)	संख्या (number)
स्त्री पुरूश	72 28
क्ल	100

10.3.2 क्रम सूचक मापनी (Ordinal scale)

क्रम सूचक मापनी द्वारा हम न केवल व्यक्तियों को वर्गों में विभाजित करते हैं वरन् इन वर्गों का क्रम भी निर्धारित करते हैं। जैसे सर्वोच्च से निम्नतम, महानतम से तुच्छतम, प्रथम से अंतिम आदि में कोटिबद्व किया जाता है। उदाहरणार्थ– जब व्यक्तियों को सामाजिक, आर्थिक स्थिति पर उच्च वर्ग, मध्य वर्ग तथा निम्न वर्ग में विभाजित करते हैं।

कोटि अक्षीय अनुमाप या क्रम सूचक वर्ग की श्रेणियां बनाता है और वस्तुओं को व्यवस्थित सम्बन्धों में उनकी तीव्रता के अनुसार व्यवस्थित करता है। फिर भी यह अन्तर की मात्रा का पता नहीं लगाता। जैसे उच्च वर्ग की आय, ि"ाक्षा या सामाजिक, आर्थिक स्थिति मध्य वर्ग से अधिक है यह नहीं बताती की कितनी अधिक है।

मान निर्धारित किये गए मदों को प्रदत्त की गई संख्या को मान मूल्य कहते हैं। कोटि संख्याऐं केवल मान क्रम बताती हैं। सामान्य अंकगणितीय क्रियाऐं जोड़, घटाना, गुणा, भाग क्रमसूचक मापनी से वैध रूप से प्रयोग नहीं किए जा सकते परन्तु कोटियों पर आधारित सांख्यिकी विधियाँ संगत हैं। नामीय पैमाना और क्रम सूचक पैमानों में मौलिक अन्तर यह है कि नामीय पैमानों में गुण और इसके प्राप्त समंक के बीच बराबर (=) का चिन्ह होता है जबकि क्रम सूचक पैमाने में गुण और प्राप्तांकों के बीच बराबर (=) के चिन्ह के अतिरिक्त 'से अधिक' (>) 'से कम' (<) का चिन्ह प्रयुक्त किया जा सकता है।

उदाहरणः व्यक्तियों के समूह को मासिक आय के आधार पर हम उन्हें उच्च आय वर्ग, कर्मचारी वर्ग तथा मजदूर वर्ग में विभाजित करते हैं।

वर्ग	मासिक आय
उच्च वर्ग कर्मचारी वर्ग मजदूर वर्ग	25000 से अधिक 15000 से कम 15000 से अधिक 5000 से कम 5000 से अधिक 2000 से कम

10.3.3 अन्तराल मापनी (Interval scale)

इस अनुमाप में न केवल चीजों को क्रम में रख सकते हैं वरन् उनके बीच का ठीक–ठीक अन्तर भी बता सकते है। इसका अर्थ है कि इस अनुमाप में इकाईयों को प्रत्येक संख्या के बीच अन्तर अनुमाप समान होता है और दि"ाा ज्ञात हो जाती है। अन्तराल मापनी के लिए माप को भौतिक इकाई की आव"यकता होती है। उदाहरणार्थ–दो व्यक्ति हैं, एक की आय 25000 और दूसरे की आय 20000 रू0 है। नियत मापनी के अनुसार इनकी आय अलग–अलग है। क्रम सूचक मापनी के अनुसार पहले की आय दूसरे की आय से अधिक है। अन्तराल मापनी में पहले व्यक्ति की आय दूसरे व्यक्ति की आय से 5000 रू0 अधिक है।

अन्तराल मापनी पर हम जोड़ व घटाने की संक्रियाएं कर सकते हैं। इन अंकगणितीय संक्रियाओं पर आधारित सांख्यिकी तकनीक अनुज्ञेय है। गुणा व भाग की संक्रियाएं अन्तराल स्केल के साथ वैध रूप से प्रयोग नहीं की जा सकती क्योंकि इन संक्रियाओं में वास्तविक शून्य बिन्दु के अस्तित्व की पूर्वकल्पना की जाती है।

अन्तराल स्केल में दो क्रमागत बिन्दुओं के बीच का अन्तर पूरे स्केल पर एक समान होता है परन्तु उसमें वास्तविक शून्य बिन्दु नहीं होता। पानी जमने का तापमान सेंटीग्रेड मापनी में शून्य है जबकि फारेनहाइट मापनी में 32 डिग्री। इससे स्पष्ट होता है कि शून्य स्वेच्छ है। इसी प्रकार सामाजिक विज्ञान में भी आदर, स्थिति, अभिवृत्ति आदि के शून्य होने का कोई निरपेक्ष अर्थ नहीं है। उदाहरणार्थ– यह सच है कि कोई विद्यार्थी यदा–कदा सामान्य विज्ञान में शून्य अंक पाए परन्तु इस का यह अभिप्राय नहीं कि वह सामान्य विज्ञान में कुछ भी नहीं जानता।

अतः अन्तराल पैमाने में प्राप्त समंकों को न केवल श्रेणी बद्ध किया जा सकता है बल्कि मानों के मध्य अन्तर भी ज्ञात किया जा सकता है। अधिकतर सांख्यिकीय मापन में इस पैमाने का प्रयोग किया जाता है।

10.3.4 अनुपाती मापनी (Ratio scale)

चौथा और सर्वोच्च माप स्तर अनुपाती मापनी होती है। यह पैमाना अन्तराल पैमाने के सभी गुणों को समायोजित करने के साथ–साथ अपने मूल बिन्दू से वास्तविक अन्तर प्रदर्"ात हो तो इस प्रकार के पैमाने को अनुपाती पैमाना या मापनी के रू" में द"ार्ाया जा सकता है। यदि दो मापन यन्त्रों से प्राप्त मानों के बीच गुणात्मक संबंध हो तो विभिन्न वस्तुओं के लिए दोनों ही मापन यन्त्रों से प्राप्त मानों में समान अनुपात प्राप्त होगा। इस मापनी के साथ जोड़, घटाना, गुणा व भाग की चारों संक्रियाऐं प्रयोग की जा सकती हैं। ऐसी मापनी के साथ समस्त सांख्यिकी तकनीकि अनुज्ञेय है। इसमें पूर्ण शून्य बिन्दु मूल में होता है और जो एक मूल्य के अनुपात की व्याख्या दूसरे मूल्य से करता है। इसमें शून्य निरपेक्ष होने के कारण हम अनुपात लेकर भी तुलना कर सकते हैं। भार, लम्बाई आदि का माप अनुमाप मापनी द्वारा होता है।

अनुपात मापनी के अंक आनुपातिक संबंधों में व्यक्त किए जा सकते है। उदाहरण के लिए, 4 ग्राम का भार 8 ग्राम का आधा है। 10 सेमी0 की ऊँचाई 30 सेमी0 की तिहाई है। अनुपाती स्केल हमें मात्राओं की समानता अन्तरों की समानता तथा अनुपातों की समानता संक्रियाएं करने की अनुमति देते हैं।

यहाँ ध्यान देने योग्य है कि प्रत्येक उच्च स्तर मापनी को निचली मापनी में परिवर्तित किया जा सकता है परन्तु निचली मापनी को उच्च मापनी में नहीं बदला जा सकता। उच्च श्रेणी में अनुज्ञेय

सांख्यिकी में निचली श्रेणी के स्केल पर अनुज्ञेय साांख्यिकी भी सम्मिलित है। मापनी का स्तर जितना ऊँचा जाता है उतनी अधिक प्रासंगिक सूचना प्राप्त होती है।

बोध–प्रश्न 1

(i) अन्तराल मापनी को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....
.....
.....
.....
.....
.....

10.4 अच्छे माप की कसौटी

माप के मूल्यांकन के लिए तीन कसौटियां है–

1. वि"वसनीयता
2. वैधता
3. संवेदन"ाीलता।

10.4.1 वि"वसनीयता

आंकड़े एकत्र करने का परीक्षण वि"वसनीयता होना चाहिए अर्थात् समान स्थितियों व इन ही व्यष्टियों पर बार–बार परीक्षण करने पर वही परिणाम मिलने चाहिए। उदाहरण के लिए यदि कोई व्यापारी एक मीटर से कपड़े की सही लम्बाई जानता है इसलिए माप के इन साधनों के लिए वि"वसनीयता आव"यकता है। वि"वसनीयता शब्द के परीक्षण में, दो परस्पर संबंधित परंतु भिन्न–भिन्न अर्थ निहित हैं।

पहला प्रदर्"ात करता है कि परीक्षण किस सीमा तक आन्तरिक रूप से संगत है अर्थात् एक बार के माप में कितनी संगति है। दूसरा वि"वसनीयता यह बताती है कि माप युक्ति किस सीमा तक बार–बारा परीक्षण के संगत परिणाम देती है।

किसी भी उपकरण की वि"वसनीयता का परीक्षण करने की चार विधियाँ है–

1–परीक्षण पुनर्परीक्षण वि"वसनीयता।

2–अन्तराल स्थायित्व वि"वसनीयता।

3–विच्छेदीय वि"वसनीयता।

4–समरूपी वि"वसनीयता।

1–परीक्षण पुर्नपरीक्षण वि"वसनीयता– इस रीति के एक परीक्षण के कुछ ही समय बाद वही परीक्षण दोबारा किया जाता है और दोनों बार के संमकों के सेटों के सहसंबंध से परीक्षण की वि"वसनीयता प्राप्त की जाती है।

परीक्षण पुनर्परीक्षण वि"वसनीयता में कुछ सीमाएं होती है।

1–इस रीति को अन्तर्गत यदि दोनों परीक्षणों के बीच अन्तराल कम होता है तो स्मृति का प्रभाव, अभ्यास व परीक्षण से परिचित होने का वि"वास सभी परीक्षण की वि"वसनीयता का अधिआकलन कर सकते हैं।

2– उत्तर द्वारा इन प्र"नों पर पुनः विचार कर सकते है और भिन्न लेकिन सही और सत्य उत्तर दे सकते हैं।

3– यदि अंतराल अधिक है तो व्यवहार में प्रगति के रूप में वास्तविक परिवर्तन परीक्षण की वि"वसनीयता का अवआंकलन कर सकते हैं। दूसरे परीक्षण में स्थितियों को यथावत नियंत्रित करने में कठिनाई के कारण, जिसका परिणामों पर प्रभाव पड़ता।

2– अन्तराल स्थायित्व वि"वसनीयता– अन्तराल स्थायित्व वि"वसनीयता इसका अर्थ है एक से प्र"न पूछना या एक से पैमाने के मदों को प्रस्तुत करना।

3– विच्छेदीय या अर्धन वि"वसनीयता– इसके अनुसार किसी उपकरण के मदों को दो तुल्य आधे भागों में विभाजित किया जाता है। आधी इकाईयों पर परीक्षण के समंको को दूसरी आधी इकाईयों के समंको से सहसंबंधित किया जाता है। सहसम्बन्ध की मात्रा माप की वि"वसनीयता की मात्रा को द"र्ायेगी। परीक्षण की इकाईयों को अनेक प्रकार से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

4– समरूपी वि"वसनीयता– इसका प्रयोग तब किया जाता है जब दो वैकल्पिक साधनों को हर सम्भव एक सा अभिकल्पित किया जाता है। दोनों में से प्रत्येक माप अनुमापक व्यक्तियों के एक ही समूह पर प्रयोग किया जाता है। यदि दोनों रूपों के बीच उच्च सहसम्बन्ध है तब अनुसंधानकर्ता मान लेता है कि अनुमापक वि"वसनीय है।

बोध–प्रश्न 2

(i) वि"वसनीयता के संदर्भ में संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

10.4.2 वैधता

किसी उपकरण से जो वस्तु जैसी है उसका उतना ही मापन करने को कहते हैं अर्थात् वैध सूचना प्रदान करनी चाहिए। सामान्य रूप से वही परीक्षण वैध है जो वही माप करे जिसका वह दावा करता है। कोई भी परीक्षण की वैधता वि"वव्यापी व अनन्त तक नहीं होती। वह एक स्थिति में प्रयोग हेतु वैध हो सकता है पर दूसरी स्थिति में अवैध।

माप के परीक्षण को वैधता का आकलन करने के लिए विविध तरीके हैं जैसे–

1–स्पष्ट वैधता

2–सामग्री वैधता/अंतर्वस्तु वैधता

3–कसौटी वैधता

4–रचना वैधता

1–स्पष्ट वैधता– स्पष्ट वैधता का अर्थ है वही मापन करना जो अपेक्षित है। लिंग भेद (स्त्री तथा पुरूष) का अध्ययन करने के उद्दे"य से बनाई गई एक प्र"नावली से स्पष्ट वैधता तभी होगी। यदि इसके प्र"न केवल लिंग भेद के कारण किए गए भेदभाव से सम्बद्ध हैं। यहाँ निर्णय के मानक साक्ष्य पर आधारित न होकर अनुसंधानकर्ता के आत्मपरक निर्णय पर है।

2–सामग्री/अन्तर्वस्तु वैधता– सामग्री वैधता का तात्पर्य यह है कि तर्कसंगत रूप में यह द"र्ाती मालूम पडती है कि यह क्या माना चाहती है क्योंकि वि"ोषज्ञों को सामग्री ऐसी द"र्ायी देती है कि यह मदों को पूर्ण रूप में समाहित करती है। वैधता का यह स्वरूप अनेक विषय शास्त्रियों तथा परीक्षण वि"ोषज्ञों के निर्णय व वास्तविक किए गए अध्ययन विषय के सावधानीपूर्वक विष्ले"णपर आधारित होता है। यह विष्ले"ण परिमेय व निर्णयात्मक होता है। अंतर्वस्तु वैधता को कभी कभी परिमेय या तर्कसंगत वैधता भी कहते हैं। एट एल. कैले के अनुसार अंतर्वस्तु वैधता एक प्रतिद"र्ा सामग्री के कु"ाल विष्ले"णपर और दूसरे प्रारम्भिक चुनी हुई मदों के शोधन हेतु उपलब्ध सांख्यिकी प्रक्रियाओं के उपयोग पर निर्भर करती है।

3– कसौटी वैधता– सामग्री वैधता का अर्थ एक समान रचना के मापों को अन्य मापों से सह सम्बन्धित करना। कसौटी वैधता का वर्गीकरण इस प्रकार किया जाता है।

1–समवर्ती वैधता– यह समय के अलावा अन्य बातों में पूर्वकथनीय प्रामाणिकता के समान होती यह प्रमाणिकता विभिन्न स्त्रोतों के मध्य अन्तर स्पष्ट करती है।

2–भविष्य **सूचक वैधता**– इस का अर्थ जो कसौटी और नवीन माप अनुमापक के जोड़ने के समय क्रम पर निर्भर करता है यह तब होती है जब अभिरूचि माप भविष्य की घटना को भविष्यवाणी करता है।

4–रचना वैधता– इसे सैद्धान्तिक वैधता भी कहते है क्योंकि इसका सम्बन्ध वैधता के मापन के साथ–साथ सिद्धान्त से भी होता है। अर्थात् यह उस स्तर तक स्थापित है जहां तक माप अवधारणाओं पर आधारित सिद्धांत से उत्पन्न प्राक्कल्पना की पुष्टि करती है।

वैधता अध्ययनों की वि"वसनीयता एवं वैधता के संबंध में दो बातें प्रमुख हैं– आन्तरिक वैधता तथा बाह्य वैधता। आन्तरिक वैधता का संबंध अनुसंधान की वि"वस्तता से है। कारण एवं प्रभाव संबंधी अध्ययनों में इस प्रकार की वैधता को ज्ञात करना अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। कारणत्व को द"र्ाने हेतु तीन द"ाायं होना अनिवार्य है।

1. कारण का परिणाम से पहले होना अनिवार्य है
2. प्रभाव का आकार कारण संबंधी तत्वों के आकार से प्रभावित होता है।
3. परिणाम की प्रतिद्वन्द्वी कारणत्व व्याख्याएं नियम विरूद्ध घोषित की जा सकती है।

वाह्य वैधता का संबंध परिणामों के अन्य निद"र्ानों के संदर्भ में सामान्यीकरण करने की सीमा से है। यह भी दो प्रकार की होती है।

1. **जनसंख्यात्मक वैधता**– जनसंख्यात्मक वैधता का संबंध निद"र्ान के अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर उस समग्र के बारे में सामान्यीकरण करने, जिसका कि वह भाग है।
2. **पारिस्थितिकीय वैधता**– पारिस्थितिकीय वैधता का संबंध निष्कर्षों के आधार पर अन्य पारिस्थितियों के बारे में सामान्यीकरण करने से है।

जिक्मण्ड ने वि"वसनीयता और वैधता के मध्य अन्तर स्पष्ट करने के लिए एक पुरानी राइफल तथा एक नयी राइफल का उदाहरण दिया। पुरानी राइफल से शूटर द्वारा मारे गये शॉट लक्ष्य काफी

इधर–उधर लगे लेकिन नयी राइफल से लक्ष्य पर मारे गये शॉट धन चित्र थे जो यह स्पष्ट करता है कि पुरानी रायफल कम वि"वसनीय है। लक्ष्य में नि"ाानेबाज के शॉट नयी राइफल से वि"वसनीय हो सकते है लेकिन यदि उसकी दृष्टि ठीक नहीं है तो शूटर सबसे सूक्ष्म लक्ष्य पर नि"ाना नहीं लगा सकता।

10.4.3 संवेदन"ीलता– संवेदन"ीलता का तात्पर्य यह होता है कि उत्तरों की विविधता के शुद्ध मापन की योग्यता। जैसे दो उत्तरों के वर्ग सहमत या असहमत अभिवृति परिवर्तन नहीं द"ार्ते। इस स्थिति मेकं अधिसंख्य मदों के साथ एक अधिक संवेदन"ील माप की आव"यकता हो सकती है। उदाहरण 5 बिन्दु अनुमापक (अति सहमत सहमत, न तो सहमत और न असहमत, असहमत और अति सहमत) अपुमापक की संवेदन"ीलता बढा देते हैं जैसे उक्त सारणी से समझा जा सकता है।

अनुमापक	अंक
1. अति सहमत	+2
2. सहमत	+1
3. न तो सहमत और न असहमत	0
4. असहमत	–1
5. अति सहमत	–2

इन पांच बिन्दु अनुमापक को उपरोक्त अंक देकर हम + अंक तथा – अंक को गिनती कर सकते हैं और इस प्रकार अभिवृति का माप कर सकते हैं।

10.5 अनुमापकों का मापन

आज अनेक अनुमापक यन्त्रों का विकास किया जा चुका है जिनके द्वारा मनोवृत्तियों जैसे अमूर्त तथ्यों एवं सामाजिक व्यवहारों का माप करना सम्भव हो गया है। पैमाने गुणात्मक तथ्यों को गणनात्मक तथ्यों में परिवर्तित करने की प्रविधियां हैं और क्रम का निर्धारण करने में इनका वि"ोष महत्व है। अतः पैमाना किसी घटना अथवा वस्तु को मापने का एक यन्त्र है। अध्ययन वस्तु की प्रकृति के अनुसार ही पैमानों का निर्माण किया जाता है। जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों में विभिन्न वस्तुओं को मापने के यन्त्र भिन्न भिन्न होते है, उसी प्रकार सामाजिक घटना की वि"िाष्ट प्रकृति को ध्यान में रखते हुए उसी के अनुसार पैमानों का निर्माण किया जाता है। पैमाने सामाजिक घटना को वस्तुनिष्ठ रूप में समझने तथा उनके विषय में नि"चत तथा सही ज्ञान प्राप्त करने के लिए आव"यक हैं। इनका उपयोग न होने के कारण अधिका"ातः गुणात्मक तथ्य एकत्रित हो पायेगें तथा केवल इसके आधार पर हम सामाजिक घटना को पूर्णतः वस्तुनिष्ठ रूप में नही समझ सकते। परन्तु किसी घटना का गणनात्मक वर्णन ही उसे समझने के लिए वस्तुनिष्ठ माप और नि"चतता ला सकता है। सामाजिक विज्ञानों में पैमानों के प्रयोग का उद्दे"य प्रमुख रू‍प से इन विषयों को अधिक परि"ाुद्धता द्वारा वैज्ञानिक बनाना, गुणात्मक तथ्यों को गणनात्मक तथ्यों में परिवर्तित तथा अध्ययन को अधिक सूक्ष्म बनाना है।

सरान्ताकोस के अनुसार अनुमापकों के प्रयोग का प्रमुख कारण है–

1– उच्च सीमा अवधारणा के सभी प्रमुख पद समाहित होते हैं।

2–उच्च संक्षिप्तता और वि"वसनीयता–इसमें उच्च किस्म की वि"वसनीयता और सूक्ष्मता होती है।

3–उच्च तुलनात्मक– अनुमापकों के प्रयोग से आधार सामग्री के विभिन्न समूहों में तुलना करना।

4–सरलता– अनुमापक आधार सामग्री के संग्रह और विष्ले"णको सरल बनाना।

किसी वस्तु के प्रति हमारी अभिवृत्ति उसके विषय में हमारी जानकारी, वि"वासों, भावनाओं और कर्म प्रवृत्तियों का तन्त्र है। अभिवृत्ति का एक महत्वपूर्ण लक्षण है कृषण शक्ति। कृषण शक्ति का अर्थ है अभिवृत्ति का धनात्मक तथा ऋणात्मक होना अर्थात् हमारी अभिवृत्ति इस वस्तु के पक्ष में है या विपक्ष में। अभिवृत्ति को मापने का अर्थ है कि उसको कर्षण शक्ति को नापना। माप द्वारा हम उसे मात्रात्मक रूप दे देते है और प्रकार विभिन्न लोगों की तुलना का सकते हैं। अनुमापन प्रविधियां का तात्पर्य उन प्रणालियों से हैं जिनके द्वारा शोधकर्ता गुणात्मक सामाजिक तथ्यों की माप करके उनकी गणना सांख्यिकी निष्कर्षों के रूप में प्रस्तुत करता है। किसी अभिवृत्ति और दूसरे किसी चर में साहचर्य है या नहीं । मान ले कि हम जानता चाहते है कि f"ाक्षा तथा धर्म को मानने में कोई संबंध है या नहीं। सर्वप्रथम हम एक निद"ान में आए लोगोंक की धर्म के प्रति अभिवृत्ति की नाप करेगें और प्रत्येक की f"ाक्षा को भी पता लगा लेगें। फिर सांख्यिकी के उपयोग से देखेगें कि इनमें साहचर्य है या नहीं। यदि साहचर्य ऋणात्मक हुआ तो हम कह सकते है कि जितने ही लोग f"ाक्षित होते है उतने ही धर्म को कम मानने वाले होते है। अतएव सामाजिक अनुसंधान के संदर्भ में अनुमापन का तात्पर्य पैमाइ"ा की उस विधि से है जिसे गुणात्मक तथा अमूर्त सामाजिक तथ्यों या घटनाओं को गणनात्मक या परिमाणात्मक स्वरूप दिया जाता है। गुडे तथा हाट ने लिखा है कि अनुमापन प्रविधियों में अन्तर्निहित समस्या इकाइयों की श्रेणियों को क्रम के अंतर्गत व्यवस्थित करने की है । अर्थात गुणात्मक तथ्यों की श्रेणियों को गणनात्मक श्रेणियों में बदलने की पद्धतियां हैं।

10.5.1 अनुमापों की उपयोगिता

अनुमापों की आव"यकता तथा उपयोगिता सभी विज्ञानों के लिए है और विकास"ाील सामाजिक विज्ञान के रूप में समाज"ाास्त्र के लिए तो अनुमापों की उपयोगिता और अधिक है।

1.वैज्ञानिक परिपक्वता की प्राप्ति के लिए– इसकी प्रथम उपयोगिता यह है कि ये विज्ञान को इस योग्य बना देते हैं कि वह अपने अध्ययन विषय के अंतर्गत आने वाली घटनाओं का सही व प्रामाणिक माप कर सके। इसके बिना कोई भी विज्ञान परिपक्वता तथा प्रगति की ओर नही बढ सकता। प्रगति"ाील व विकास"ाील होना प्रत्येक विज्ञान की एक उल्लेखनीय आव"यकता है और इसकी पूर्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक अनुमापन प्रविधियों की भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाए। गुडे तथा हाट ने लिखा है कि सभी विज्ञान अधिकतम परि"ाुद्धता की दि"ाा में अग्रसर होते हैं। इस परि"ाुद्धता के अनेक रूप होते हैं पर उसका एक आधारभूत क्रमबद्ध श्रेणियों की माप।

2. वस्तुनिष्ठ **माप के लिए**– सामाजिक अनुसंधान में सामाजिक घटनाओं की वास्तकिा अध्ययन और उस अध्ययन द्वारा यर्थाथ निष्कर्ष निकालना तभी सम्भव होता है जब हम घटना वि"ोष का वस्तुनिष्ठ माप कर सके। अनुमापन प्रविधियां अनुसंधान को वैषयिक बनाने में अत्यधिक सहायक होता है क्योंकि इसकी सहायता से वास्तविक स्थिति का पता लगाने के लिये गणनात्मक विवेचना की जा सकती है।

यदि सामाजिक घटनाओं का वस्तुनिष्ठ माप न किया जाए तो सदैव ही यह भय बना रहता है कि सामाजिक घटनाएं गुणात्मक होने के कारण प्रत्येक अनुसंधानकर्ता उनका अलग अलग वर्णन या अर्थ निकालता है जिससे घटनाओं के विष्ले"ाणमें किसी भी प्रकार की सुस्पष्टता पनप ही नही सकेगी। जबकि विभिन्न सामाजिक घटनाओं को मापने के सुनि"चत पैमाना हमारे पास है।

बोध–प्रश्न 3

(i) अनुमापकों की किन्ही दो उपयोगिताओं का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

10.5.2 अनुमापन की कठिनाइयां–

आज सामाजिक अनुसंधान में मनोवृत्तियों की माप करने में अनेक महत्वपूर्ण प्रणालियों का विकास हो चुका है तथा उन्ही के कारण सामाजिक अध्ययनों को विज्ञान की श्रेणी में रखा जाता है। पैमानों के निर्माण में अनेक कठिनाइयों का सामना भी करना पडता है। जो इस प्रकार हैं–

1. सामाजिक घटनाओं की जटिलता–जटिल प्रकृति के कारण सामाजिक घटनाओं का एक ओर आसानी से अध्ययन नहीं किया जा सकता और दूसरी ओर ऐसे अध्ययन से प्राप्त निष्कषों को प्रामाणिक नही कहा जा सकता। इसका कारण है कि किसी एक सामाजिक घटना के लिए अनेक कारक या चल उत्तदायी होते हैं और इसलिए यह नि"चत करना कठिन होता है कि पैमाने के निर्माण में इनमें से किस कारक को महत्व दिया जाय। साथ ही ये कारक एक दूसरे से इतने घुले मिले होते हैं कि अनका अलग माप नही की जा सकती।

2. सामाजिक घटनाओं की अमूर्तता– सामाजिक घटनाओं की अमूर्तता पैमाने निर्माएा में आने वाली दूसरी कठिनाई है। सामाजिक घटनाओं की प्रकृति अमूर्त होती है अर्थात गुणात्मक प्रकृति की होती है और इने परिमाणात्मक रूप में माप करना कठिन होता है। सामाजिक तथ्यों जैसे– प्रेम, दुख, विचार, घृणा, पक्षपात आदि अमूर्त या गुणात्मक होते हे और इसलिए यह समस्या हो जाती है कि इनको गुणात्मक रूप में कैसे अभिव्यक्त किया जाए।

3. सामाजिक घटनाओं की असमानता–सामाजिक घटनाओं की असमानता के कारण सामाजिक विज्ञान के पैमानों का निर्माण करना कठिन होता है। मानव समाज में अनेक समूह पाये जाते है। और प्रत्येक समूह की अपनी संस्कृति, धर्म जाति, मूल्य, वि"वास, भाषा आदि होती है इन्ही के कारण अनेक प्रकार के विभेद पाये जाते है। इसके अतिरिक्त एक ही समूह के विभिन्न सदस्यों के विचार, भावना, आद"ार्, वि"वास आदि के आधार पर विविधताएं होती हैं। इन सब के कारण किसी भी पैमाने पर पूर्णतया निर्भर नही किया जा सकता साथ ही एक समूह के लिए तैयार किया गए पैमाने को दूसरे समूह में लागू नही किया सकता।

4. मानवीय व्यवहार में परिवर्तन"ीलता– मानव के व्यवहार परिवर्तन"ील होते हैं और सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। एक परिस्थति वि"ोष में एक विचार तथा दूसरी परिस्थति वि"ोष में दूसरा विचार उत्पन्न होता है साथ ही एक विषय के संबंध में जो विचार आज है

कुछ दिनों बाद वह विचार स्थिर नही रहता। एक समय वि"ोष के लिए तैयार किया गया कोई भी पैमाने को दूसरे समय के पर लागू नही किया जा सकता।

5. सामाजिक मूल्यों के सार्वभौमिक माप का अभाव– आर्थिक मूल्यों के माप के लिए जहां एक और द्रव्य एक सार्वभैमिक माप है लेकिन सामाजिक मूल्यों को मापने के लिए कोई नि"चत पैमाना नही है।परिणाम यह होता है कि प्रत्येक समूह अपने अपने दृष्टिकोण से सामाजिक मूल्यों या तथ्यों का मूल्यांकन करते हैं। जिसके कारण पैमाने के निर्माण में कठिनाई उत्पन्न होती है।

पैमाने के निर्माण से संबंधित उपर्युक्त कठिनाइयों के अतिरिक्त भी कुछ अन्य कठिनाइयां है जो अनुसंधानकर्ता की कु"ालता तथा सामाजिक घटनाओं से संबंधित है। आज सामाजिक शोध के अंतर्गत विभिन्न पैमानों का जिस तेजी से विकास हो रहा है उसे ध्यान में रखते हुए भविष्य में सामाजिक घटनाओं की कहीं अधिक वि"ाुद्ध रूप में माप किया जा सकेगा।

10.6 अनुमाप के प्रकार

वर्तमान में सामाजिक अनुसंधानों में प्रमुख रूप से अभिवृत्ति के मापन के लिए प्रयुक्त चार महत्वपूर्ण प्रकार निम्नलिखित है

1. अंक पैमाने
2. मूल्य मापक अथवा तीव्रता मापक पैमाने
3. श्रेणी सूचक मापक
4. सामाजिक दूरी मापक पैमाने

1. **अंक पैमाने**– इस प्रकार के पैमानों का प्रयोग मनोवृत्तियों अर्थात व्यक्तियों की राय जानने के लिए किया जाता है। इनमें कुछ वि"िाष्ट शब्द या स्थितियां ले ली जाती है और फिर प्रत्येक को एक अंक प्रदान कर दिया जाता है। इसके प"चात् इन कथनो या स्थितियों के विषय में उत्तरणताओं की राय की जाती है। सूचनादाता से यह कहा जाता है कि वह जिस स्थिति या शब्द से सहमत हो उनके आगे सही () का नि"ाान लगा दे। इस प्रकार हमें पता चल जाता हे उन वि"िाष्ट शब्दों अथवा स्थितियों के पक्ष में कितने मत प्राप्त हुए, परन्तु इनसे गहनता अथवा तीव्रता का पता नही चलता है।
2. **मूल्य मापक या तीव्रता मापक पैमाने**– इस प्रकार के पैमानों का प्रयोग लोगों की मनोवृत्तियों, मनोभावों, विचारों तथा रूचियों की तीव्रता या गहनता को मापने के लिये किया जाता है। ऐंसे पैमानों का उपयोग तब अधिक लाभदायक होता है जब किसी वि"ोष तथ्य के प्रति व्यक्ति की रूचि केवल दो विकल्पों तक सीमित नहीं होती बल्कि अनेक श्रेणियों में विभाजित हो सकती है। इनमें एक कम के अनुसार मूल्यांकन किया जाता है। लिकर्ट का पैमाना संकलित तीव्रता अनुमाप का उदाहरण है।
3. **श्रेणी सूचक पैमाना**– निर्णायकों के ऊपर निर्भर होने के कारण यह भी निर्धारण मापनी के ही समान है। एक निरपेक्ष मापनी पर निर्णय किये जाते हैं। अन्तर केवल श्रेणी के कम में स्थान निर्धारण करने से ही संबंधित हैं। थर्स्टन अनुमान इस श्रेणी का प्रमुख उदाहरण है।
4. **सामाजिक दूरी पैमाने**– सामाजिक अन्तर की धारणा एक सातत्य को सूचित करती है। उदाहरणार्थ, व्यक्तिगत तथा सामाजिक संबंधों की वि"ोषताओं के स्तर एवं गहनता को प्रदर्"ित करने वाली मापनी को ले सकते है। जिस समूह का सामाजिक अन्तर मापन होता है, उसे एक सातत्य पर रखते हैं। बोगार्डस इसके प्रेणता थे। इसका प्रयोग विभिन्न समूहों में सामाजिक दूरी मापने के लिए किया जाता है।

सामाजिक अनुसंधान में सर्वाधिक प्रयुक्त पैमानों की ही संक्षिप्त वर्णन करते हैं। ये पैमाने निम्नलिखित हैं।

1. थर्स्टन पैमाने
2. लिकर्ट पैमाने
3. गटमैन पैमाने तथा
4. बोगार्डस पैमाने।

10.6.1 थर्स्टन पैमाना–

इस पैमाने का उपयोग किसी भी समूह के प्रति कुछ व्यक्तियों की मनोवृत्तियों रूचियों को जानने के लिए किया जा सकता है। थर्स्टन और उनके सहयोगियों ने अपनी मापनी चर्च के प्रति अभिवृत्ति से संबंधित थी। 1920 में अमेरिका में निर्मित थर्स्टन अनुमापक प्रदत्त चर के संकेतांकों के समूह बनाता है जो अनुभवाश्रय में प्रयोग किया जाता है।

इस विधि से अभिवृत्ति मापन के लिए मापन किये जाने वाले व्यक्ति, समूह, संस्था, विचार अथवा क्रिया के संबंध में 20 अथवा इससे अधिक कथन एकत्र किये जाते है जो उसके विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित होते है फिर इन कथनों की बहुत सी प्रतियां बना ली जाती हैं। इन कथनों को लगभग 50 निर्णायकों को दिया जाता है। प्रत्येक निर्णायक को सब कथनों की एक प्रति और 11 पर्चियां दी गई। एक पर्ची पर A लिखा था दूसरी पर B, तीसरी पर C और इसी प्रकार अन्तिम पर्ची पर K लिखा था। इन पर्चियों को A से k तक के क्रम में निर्णायकों के सामने रख दिया गया। निर्णायकों से कहा जाता है कि कथनों को एक–एक करके पढ़ता जाये तथा वे इनको 11 वर्गों या पर्चियों में व्यवस्थित कर दे जो उच्चतम से निम्नतम सीमा की ओर हो अर्थात् जो सबसे अधिक अनुकूल है उसे A वाली पर्ची के ऊपर रखा जाए तथा सबसे अधिक प्रतिकूल पर्ची को k के ऊपर। वो कथन तटस्थ हो या जिनके सम्बन्ध एकमत नहीं होता उन कथनों को निकाल दिया जाता या फिर f वाली पर्चों के ऊपर आय। इस प्रकार सभी कथनों की अनुकूलता तथा प्रतिकूलता की मात्रा के आधार पर क्रम से लगा दिया जाता है। यदि A को 1,B को 2 आदि माने तो K 11 के बराबर है इस प्रकार यहाँ एक 11 बिन्दुओं वाली मापनी बन जाती है।

प्रत्येक कथन को प्रत्येक निर्णायककर्ता द्वारा A से K तक किसी भी पर्ची पर रखा और इस पर एक मूल्य प्रदान किया जाता है, किसी कथन को बराबर मूल्य प्रदान नहीं किया जाता। प्रत्येक चुने गये कथन के मध्यांक मापन मूल्य प्राप्त करते हैं जो 1 से 11 के मध्य होता है। कथनों का मूल्य निकालने के प"चात उनमें से कुछ का चुनाव करके उन्हें मापनी में रखते हैं। कथन का चुनाव करने हेतु दो बातों का ध्यान रखना आव"यक होता है कि विभिन्न मूल्यों वाले कथन चुने गये जिसमें 1 से 11 तक सभी मूल्यों वाले कथन आ जाने चाहिए। अन्त में चुने गए 20 से 22 कथनों को अनुसंधनकर्ता को देते है यथा जिनसे व सहमत होते हैं उन पर उचित का चिन्ह लगाने को कहा तथा जिन कथनों पर असहमत रहे उन्हे अस्पष्ट कहकर अस्वीकार कर दिया जाएगा।

आजकल थर्स्टन पैमाने का प्रयोग अधिक नहीं किया जाता क्योंकि 10 से 12 निर्णायककर्ता की आव"यकता होने के साथ ही अत्यधिक समय लगता है।

बोध–प्रश्न 4

(i) थर्स्टन पैमाने का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

10.6.2 लिकर्ट पैमाना

इसे लिकर्ट की संकलित निर्धारण विधि कहते हैं। इसके अन्तर्गत थर्स्टन मापनी की भांति कथन होते हैं। दोनों में केवल यह अन्तर है कि जहाँ थर्स्टन मापनी में उत्तरदाता से कहा जाता है कि केवल उन कथनों पर नि"ाान लगा दे जिनसे वह सहमत हैं। लिकर्ट मापनी में उत्तरदाता प्रत्येक कथन के सम्बन्ध में यह बताता है कि वह उससे किस सीमा तक सहमत या असहमत है। लिकर्ट ने थर्स्टन प्रणाली को नवीन स्वरूप प्रदान किया साथ ही थर्स्टन मापनी की तुलना में अधिक सरल है तथा इसके बनाने में कम लगता है। इस विधि को बिना निर्णायकों के समूह के ही प्रयोग में लाने पर थर्स्टन के समान ही अंक प्राप्त हुए हैं। लिकर्ट ने एक प्रविधि विकसित की जिसमें केवल सहमत या असहमत के स्थान पर अत्यधिक सहमत या अत्यधिक असहमत का संकेतांक बनाकर सम्मिलित अंकों में भिन्नता बढ़ाकर किया। लिकर्ट मापनी के प्रणाली के आधार पर मनोवृत्ति पैमाने का निर्माण करने से सम्बन्धित मुख्य स्तर निम्न प्रकार के हैं–

1. सर्वप्रथम जिस विषय में अभिवृत्ति की माप की जानी है उससे संबंधित अनेक कथनों का संकलन किया जाता है। कथन का उचित होना वि"ोष महत्वपूर्ण नहीं बल्कि महत्वपूर्ण यह है कि वे किसी वि"ोष दृष्टिकोण के लिए नि"चित रूप से अनुकूल अथवा प्रतिकूल हो। प्रतिकूल तथा अनुकूल कथन लगभग समान होने चाहिए।

2. इन कथनों के संग्रह करने के प"चात इनका कुछ व्यक्तियों पर पूर्व परीक्षण किया जाता है तथा उन्हीं कथनों को रखा जाता है जो पूर्व परीक्षण से सम्बन्धित होते हैं। इस आन्तरिक स्थिरता की जांच द्वारा भ्रमपूर्ण तथा असम्बद्ध कथनों को निकाल देते हैं। प्रत्येक कथन के लिए एक अंक दिया जाता है तथा सभी अंकों का योग एक व्यक्तिगत अंक प्रदान करता है। इसके विष्ले"णके लिए सामान्यतः दो विधियां अपनाते हैं–

1–प्रत्येक कथन के लिए दिये गए अंको का प्रति"ात निकलना।

2–लिकर्ट को मूल विधि में प्रत्येक स्थिति के लिए एक मापन मूल्य नि"चित करते हैं और उसी के अनुसार अंक देते हैं।

कथन	**मापन मूल्य**	**विपरीत स्थिति संबंधी कथन में इसका उल्टा होगा**
पूर्णतया सहमत	5	1
सहमत	4	2
अनि"चित	3	3
असहमत	2	4
पूर्णतया असहमत	1	5

3. उपर्युक्त ढ़ग से पैमाने का निर्माण कर लेने के प"चात एक बड़ी संख्या में लोगों को संकलित कथनों की सूची देकर उन्हें निर्दे"ा दिया जाता है कि वे अपने दृष्टिकोण के अनुसार प्रत्येक कथन की श्रेणी निर्धारित करने के लिए उत्तरों के विकल्पों में से किसी एक पर नि"ाान लगाएं। इसके आधार पर उसे एक प्राप्तांक दिया जाता है।

4. अब प्रत्येक उत्तरदाता के सारे कथनों के प्राप्तांक जोड़ लिए जाते हैं और इसे उसका सम्पूर्ण प्राप्तांक कहा जाता है। इसे कथनों की संख्या से भाग देकर उसका सम्पूर्ण औसत प्राप्तांक निकाला जाता है।

5. इसके प"चात् एक–एक कथन को लेकर सब कथनों के बीच आंतरिक संगति पता लगाने के लिए विष्ले"ाणकिया जाता है। इसकी एक विधि यह है कि प्रत्येक कथन के लिए एक तालिका का निर्माण करते है जिसमें उत्तरदाताओं के उस पर प्राप्तांक एक स्तम्भ है और सामने उन्हीं उत्तरदाताओं के सम्पूर्ण औसत प्राप्तांक दूसरे स्तम्भ में लिख देते हैं। अब इन दोनों स्तम्भों के बीच सांख्यिकीय सहसंबंध निकाल लेते हैं। यदि सहसंबंध उच्चतम होता है तो कथन को मापनी मे रख लिया जाता है अन्यथा छोड़ दिया जाता है। इन चुने हुए प्र"नों से मापनी बन जाती है। अभिवृत्ति सदैव धनात्मक या ऋणात्मक होगी।

कथन का पैमाना मूल्य ज्ञात करना

कथन	भार	उच्चतम चतुर्थक			निम्नतम चतुर्थक		
	X	F	Fx	Fx^2	F	Fx	Fx^2
पूर्णतया सहमत	5	7	35	175	0	0	0
सहमत	4	8	32	128	1	4	16
अनि"चित	3	10	30	90	3	9	27
असहमत	2	11	22	44	21	42	84
पूर्णतया असहमत	1	0	0	0	7	7	7
योग	–	36	119	437	32	62	134
माध्य	–	3.30			1.94		

पैमाना मूल्य का अन्तर 3.30–1.94= 1.36

वर्तमान में मनोवृत्तियों की तीव्रता का माप करने में लिकर्ट पैमाने का कहीं अधिक प्रयोग किया जाता है क्योंकि इससे वि"वसनीयता की जांच की जाती है तथा उपयोग विधि थर्स्टन पैमाने से कहीं अधिक सरल भी है।

बोध–प्रश्न 5

(i) लिकर्ट मापनी का उहारण सहित संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

10.6.3. गटमैन पैमाना

लुई गटमैन पद्धति द्वारा यह पता लगाया जा सकता है कि विभिन्न कथन एक ही आयाम को नाप रहे हैं या नहीं। लिकर्ट अनुमापन के साथ–साथ अंक बनाने के दस या अधिक तरीके हो सकते हैं वहीं गाटमैन मापनी 2 अंक बनाने का केवल एक ही तरीका होता है।

गटमैन की पद्धति में अभिवृत्ति से सम्बन्धित कुछ कथन चुने जाते हैं। इनमे से प्रत्येक के प्रति सम्भव पाँच अनुक्रियाओं को 1 से लेकर 5 तक का मूल्य दे दिया जाता है फिर उत्तरदाताओं की अनुक्रियाऐं प्राप्त की जाती हैं। इसके प"चात् कथनों के प्राप्तांको को जोड़कर प्रत्येक उत्तरदाता का सम्पूर्ण प्राप्तांक निकाला जाता है।

यह अपेक्षा की जाती है कि जो व्यक्ति प्र"न 5 का सही उत्तर देता है तो वह प्र"न 1 से 4 तक के प्र"नों का भी उत्तर देगा। जो व्यक्ति 3 का उत्तर सही देगा तो वह प्र"न 1 से 2 तक भी उत्तर देगा। धन और ऋण चिन्हों के प्रयोग से इसे एक आरेख द्वारा द"र्ाया जा सकता है जिसे स्केलाग्राम कहते हैं।

गटमैन का स्केलोग्राम

1	2	3	4	5	स्कोर
+	+	+	+	+	5
+	+	+	+	–	4
+	+	+	–	–	3
+	+	–	–	–	2
+	–	–	–	–	1
–	–	–	–	–	0

यदि किसी उत्तरदाता का सम्पूर्ण प्राप्तांक किसी दूसरे उत्तरदाता से अधिक है किन्तु किसी कथन पर प्राप्तांक उसी उत्तरदाता से कम है तो माना जाता है कि वह कथन मापनी में नहीं आना चाहिए या उस पर प्राप्तांक दूसरी प्रकार दिए जाने चाहिए अर्थात् किसी उत्तरदाता के सम्पूर्ण प्राप्तांक के आधार पर सब कथनों के उसके प्राप्तांकों की पुनः प्रस्तुति सम्भव होनी चाहिए।

गाटमैन अनुमापन इस विचार पर आधारित है जो कोई किसी प्रकार के चर का मजबूत संकेत देता है वह सरल और कमजोर संकेत भी देगा। यह बात ध्यान देने योग्य है कि गाटमैन के अनुमापक में यदि सभी मद मापनीय हैं तो स्केलोग्राम में n+1 उत्तर स्वरूप निहित होंगे जिन्हें स्केल टाइप्स के नाम से जाना जाता है। व्यक्ति के प्राप्तांकों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह किस मद से सहमत या असहमत था।

10.6.4 बोगार्डस पैमाना

बोगार्डस ने इस मापनी को व्यक्ति, समूह या राष्ट्र के लोगों के प्रति अभिवृत्ति और उसकी तुलना करने के उद्दे"य से बनाया था इसके द्वारा हम कुछ व्यक्ति अथवा समूह के लोगों के साथ उत्तरदाताओं का सामाजिक अन्तर पाया जाता है। एक ही व्यक्ति से हम एक वि"ोष परिस्थिति में बहुत घनिष्ठता का अनुभव करते है जबकि दूसरे समय पर उसी व्यक्ति के प्रति हमारे मन में सन्देह की भावना उत्पन्न हो जाने के कारण पारस्परिक दूरी बढ़ने लग जाती है। इसका तात्पर्य है जितना हो हम किन्हीं लोगों से दूर रहना चाहते है उतना ही हमारे बीच सामाजिक अन्तर कहा जाता है।हम कितनी दूर रहना चाहते है या पास आना चाहते है यह हमारी कर्म प्रवृत्ति हुई। कर्म प्रवृत्तियों के आधार पर निकटता या दूरी को मापने के लिए जिस पैमाने का उपयोग किया जाता है उसे बोगार्डस का सामाजिक दूरी का पैमाना कहते है।

पैमाने के निर्माण के लिए बोगार्डस ने प्रारम्भिक चरण में 100 व्यक्तियों की राय के आधार पर कुछ ऐसी सामाजिक परिस्थितियों का चुनाव किया जिनके द्वारा विभिन्न समूहों के प्रति एक व्यक्ति वि"ोष या समूह की घटती हुई अथवा बढ़ती हुई सामाजिक दूरी को ज्ञात किया जा सके।

किसी राष्ट्रीयता के औसत व्यक्ति के साथ आप जिस प्रकार का व्यवहार रखना चाहते हैं उसके कथन के चारों ओर घेरा बना दें। प्रथम संवेगात्मक प्रतिक्रिया के अनुसार उत्तर दें, इसके प"चात् उपर्युक्त समूहों के प्रति अमेरिकनों की मनोवृत्तियों का माप करने के लिए इस अनुसूची को 1725 अमेरिकनों को वितरित किया गया।

प्रत्येक राष्ट्रीयता (अंग्रेज, पोल, स्वीडि"ा, कोरियन) के लिए सात प्रकार की कर्म प्रवृत्तियां सामने रखी जाती हैं।

1–वैवाहिक सम्बन्ध द्वारा निकट सम्बन्ध के लिए।

2–अपने क्लब में व्यक्तिगत मित्र बनाने की स्वीकृति।

3–अपनी गली में पड़ोसियों की तरह स्वीकृति।

4–अपने व्यवसाय में रोजगार के लिए।

5–अपने दे"ा में नागरिकता के लिए।

6–अपने दे"ा में केवल यात्री के रूप में आने के लिए।

7–अपने दे"ा से बाहर ही रखने योग्य।

उत्तर प्राप्त होते जाने के प"चात् प्रत्येक वर्ग तथा प्रत्येक समूह का योग निकालकर उसे प्रति"ात में परिवर्तित करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक वर्ग एवं समूह का जो प्रति"ात प्राप्त हुआ था वो इस प्रकार था।

वर्ग	विभिन्न वर्गो में अलग–अलग प्र"नों के उत्तरों का प्रति"ात						
	1	2	3	4	5	6	7
अंग्रेज	97.3	96.7	97.3	95.4	95.9	1.7	1.0
स्वीडिस	45.3	62.1	75.6	78.0	86.3	5.4	1.0
पोल	11.0	11.6	28.3	44.3	58.3	19.7	4.7
कोरियन	1.1	6.8	13.0	21.4	23.7	47.1	19.1

यदि उत्तरदाता उस प्रगति के व्यक्ति के साथ वैवाहिक संबंध बनाने को तैयार है तो दोनों के बीच सबसे कम सामाजिक अन्तर होगा। यदि उसे मित्र के तौर पर अपनाना चाहता है तो उससे कम सामाजिक अन्तर होगा। इसी प्रकार आने वाली कर्म प्रवृत्तियां अधिकाधिक सामाजिक अन्तर बताती है। बोगार्डस का मानना था कि यदि एक व्यक्ति पाँचवे प्रकार के सम्बन्धों को स्वीकारने को राजी है तो वह पहले चार प्रकार के सम्बन्धों के साथ रहना भी स्वीकार

बोगार्डस के पैमाने के द्वारा प्राप्त तथ्यों की माप गणितीय विधियों से करना भी सम्भव है। यह कार्य विभिन्न वर्ग के उत्तरों के लिए भार देखकर किया जाता है। बोगार्डस द्वारा प्रस्तुत उदाहरण में प्रारम्भ के पाँच वर्ग निकटता को और अन्तिम दो वर्ग पारस्परिक दूरी को प्रदर्"ात करते हैं। प्रारम्भ की पाँच परिस्थितियां जो काफी सीमा तक सामाजिक घनिष्ठता को प्रदर्"ात करती है गणितीय माप के लिए लिया जाता है। करेगा। यह मापनी आधार सामग्री कम करने के साधन के रूप में एक मितव्ययी साधन है।

बोध–प्रश्न 6

(i) बोगार्डस द्वारा चार राष्ट्रों की राष्ट्रीयता के लिए बनायी गई कर्म प्रवृत्तियां को लिखिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

10.7 सारांश–

अधिकतर विषयों, परिस्थिति आदि के प्रति मानव की मनोवृत्ति इतने जटिल रूप में प्रकट होती है कि उनको नि"चित पैमाने के अंतर्गत सीमित नही किया जा सकता है। यदि पैमाने को उसी अनुपात में जटिल बना देते हैं तो उत्तर दाता समझ नही पाता है और बिना समझे जो कुछ उत्तर वह दे देता है साथ ही उसकी वास्तविक मनोवृत्ति को कदापि अभिव्यक्त नहीं करता है। साथ ही सामाजिक मूल्य सभी स्थानों पर एक समान नही है अतएव एक ही पैमाना सभी समाजो में लागू नही किया जा सकता

है। इन गुणात्मक तथा परिवर्तन"ाील सामाजिक घटनाओं की परि"ाुद्ध माप करने के लिए अनेक अनुमापन की प्रविधियों का विकास हो चुका है जिनके माध्यम से गुणात्मक तथ्यों को गणनात्मक तथ्यों में परिवर्तित कर यथार्थ तथा वस्तुनिष्ठ निष्कर्ष निकालना आसान हो चुका है। आज सुविकसित अनुमापन पैमाने की सहायता से सभी प्रकार की मनोवृत्तियों का माप करना सम्भव हो जाने के कारण सामाजिक शोध कार्य भी वस्तुनिष्ठ बनते जा रहे हैं। भविष्य में जैसे जैसे अनेक नवीन अनुमापन प्रविधियां और अधिक विकसित होती जायेगीं, सामाजिक अध्ययनों में भी परिपक्वता आती जायेगी।

10.8 परिभाषिक शब्दावली–

अमूर्त– जिन्हें हम प्रत्यक्ष रूप से देख या छू नही सकते या उनकी माप तोल या सूंघ नहीं सकते। अमूर्त होते है।

समंक– तथ्यों का वह समूह जो अनेक कारणें से, पर्याप्त सीमा तक प्रभावित होते है, जो अंकों में प्रकट किए जाते हैं।

प्रमाणिकता– किसी उपकरण से जो वस्तु जैसी है उसका उतना ही मापन करना प्रमाणिकता कहलाती है।

वि"वसनीयता– वि"वसनीयता का अर्थ यह है कि शोध के निष्कर्ष वस्तुपरक होने के साथ साथ स्वतंत्र अवलोकनकर्ता उनका सत्यापन कर सके।

पैमाना–पैमाना वह साधन है जिसके द्वारा हम किसी वस्तु को माप सकते हैं।

10.9 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर मापनी के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये अन्तराल मापनी के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर वि"वसनीयता शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर अनुमापकों की उपयोगिता शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर थर्स्टन पैमाने शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर लिकर्ट पैमाने शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 6

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर बोर्गाडस पैमाने शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

10.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. कालेज बुक डिपो .जयपुर.

ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

Gardner, Lindzey and Elliott, (2nd ed.). (1975). The Handbook of Social Psychology. vol II. Amerind Publishing Co. New Delhi.

10.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Best J. W. (1959). Research in Education. Prentice-Hall Inc. Englewood Cliffs, New Jercy.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers

गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोंशियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरनेशनल. ऑकलैण्ड.

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

10.12 निबंधात्मक प्रश्न

- माप का अर्थ समझाते हुए माप के प्रकार का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।
- परिमाणत्मक अनुसंधान में विश्वसनीयता एवं वैधता की जांच किस प्रकार की जा सकती है ? विवेचना कीजिए।
- अनुमापन के अर्थ को समझाइए तथा थर्स्टन पैमाने की व्याख्या कीजिए।
- अनुमापन के अर्थ को समझाइए तथा लिकर्ट पैमाने की व्याख्या कीजिए।
- बोगार्डस तथा गाटमैन पैमाने की विवेचना कीजिए।
- पैमाने से आप क्या समझते हैं? इसके निर्माण की प्रमुख समस्याओं की विवेचना कीजिए।

इकाई 11 निद"र्न,निद"र्न के प्रकार- सम्भावना और असम्भावना निद"र्न
Samping, Types of Sampling-Probability & Non-Probability Sampling

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्दे"य

11.1 प्रस्तावना

11.2 निद"र्न का अर्थ व परिभाषाएं

- 11.2.1 निद"र्न के आधार
- 11.2.2 निद"र्न की वि"ोषताएं
- 11.2.3 निद"र्न के गुण
- 11.2.4 निद"र्न के दोष

11.3 निद"र्न के प्रकार

- 11.3.1 सम्भावना निद"र्न का अर्थ तथा प्रकार
- 11.3.2 असम्भावना निद"र्न का अर्थ तथा प्रकार

11.4 सम्भावना निद"र्न तथा असम्भावना निद"र्न में अंतर

11.5 निद"र्न की समस्या

11.6 निद"र्न की वि"वसनीयता की समस्या

11.7 सारां"ा

11.8 पारिभाषिक शब्दावली

11.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

11.10 बोध प्र"नों के उत्तर

11.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

11.12 निबंधात्मक प्र"न

11.0 उद्दे"य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- समग्र तथा निद"र्न में अतंर समझ पाना,
- निद"र्न के आधार, वि"ोषता तथा गुण व दोषों को बताना,
- निद"र्न के प्रकार को बताना,
- सम्भावना तथा गैर सम्भावना निद"र्न की चर्चा करना,
- सम्भावना तथा गैर सम्भावना निद"र्न में प्रयुक्त अनेक विधियों पर चर्चा करना,
- निद"र्न की समस्या तथा निद"र्न का वि"वसनीयता की समस्या बताना।

11.1 प्रस्तावना

सामाजिक अनुसंधान में निद"र्न प्रणाली का महत्वपूर्ण स्थान हैं जिसके अंतगर्त समाज या समग्र कि समस्त इकाइयो का चयन न करके कम से कम इकाइयों का चयन किया जाता है जो समूह की सभी

इकाइयों का प्रतिनिधित्व करता है। चुनाव की यह प्रक्रिया को प्रतिचयन /निर्द"ान कहते है। प्रतिदिन के जीवन में निद"ान का उदाहरण हैं गरम रेत में भूनी हुई मूंगफलियों का देखा जाना। जिस प्रकार मूंगफली भूनने वाला कुछ मूंगफलियों को चखकर यह अनुमान लगा देता है कि समस्त मूंगफली पक गई हैं या नही। उसी प्रकार किसी राज्य या जिले में कार्यरत अध्यापिकाओं की समस्याओं के विषय में अध्ययन करना हो तो राज्य में उनकी संख्या अत्यधिक होनें के कारण समस्त का अध्ययन कर पाना संभव नही हो सकता तो हम स्वीकृत प्रणाली के माध्यम से कुछ महिलाओं का चयन करते हैं जो समस्त महिलाओं का वास्तविक प्रतिनिधित्व करती हैं।

11.2 निद"ान का अर्थ व परिभाशाएं

जब किसी विषय पर सामाजिक अनुसंधान आरम्भ करता है, तब अध्ययन से सम्बंधित इकाईयों का चयन करना एक मुख्य समस्या होती है। अध्ययन विषयक समग्र सीमित हो अथवा व्यापक, सभी इकाईयों का अध्ययन करना साधारणतया सम्भव नहीं हो पाता है। समग्र के अपेक्षाकृत विस्तृत होने की द"ाा में "ाारीरिक रुप उनके पास तक पहुँचना कठिन होता है, तब अनुसंधानकर्ता केवल एक प्रतिद"ा का ही सर्वेक्षण करते हैं। अनुसंधानकर्ता के लिए सामाजिक अध्ययनों की वैषयिकता, वैज्ञानिकता एवं वस्तुनिष्ठता को बनाये रखने में प्रतिदर्श का चयन सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है जो समग्र का वास्तविक प्रतिनिधित्व करता है। **गुडे तथा हाट** के अनुसार ''निद"ान किसी वि"ााल समग्र का एक छोटा प्रतिनिधि है''। **हेनरी मेनहीम** के अनुसार ''एक प्रतिद"ा समग्रजन का अं"ा होता है जिसका अध्ययन पूर्ण समग्रजन के विषय में अनुमान निकालने के लिए किया जाता है''।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि किसी जनसंख्या में से कुछ इकाइयों को चुन लिया जाता है तो चुनने की क्रिया को न्याद"ान कहते है तथा चुनी हुई इकाइयों के समूह को न्याद"ा कहते हैं जो समस्त इकाई समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं। अर्थात निद"ान समग्र में से चयनित कुछ इकाईयों के समूह को कहते हैं। दूसरे "ाब्दों में निद"ान समग्र की समस्त इकाइयों में से चुनी गई ऐसी इकाईयाँ है जो सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करती है।

निद"ान को अधिक विस्तृत रूप से समझने में निम्नलिखित धारणाएं सहायक है।

1. **चर**– चर का तात्पर्य उस गुण, वि"ोषता या अवस्था से है जिसका अध्ययन किया जाता है।
2. **इकाई**– चर की मात्रा को जिस किसी छोटे से छोछे घटक में ज्ञात करत हैं उसे इकाई कहते है।
3. **जनसंख्या या समग्र**– समग्रजन वे चर है जिनकी सहायता से जनसंख्या में चर के विवरण का स्वरूप निर्धारित किया जाता है।
4. **निद"ा**– निद"ा समूचे इकाई समूह में से चुनी गई कुछ ऐसी इकाइंषें का समूह है जो समूचे इकाई समूह का प्रतिनिधित्व करें।

11.2.1 निद"ान के आधार

1. **समाज की सहभागिता** : निद"ान विधि द्वारा अध्ययन की सफलता जनसंख्या के तत्वों की समानता पर निर्भर करती है। यदि अध्ययन विषय की समस्त इकाइयों में समानता है भी अध्ययन के लिए चयनित इकाइयां प्रतिनिधित्वपूर्ण होगीं और निद"ान यथार्थ रूप में वि"वसनीय हो सकेगा। लुण्डवर्ग ने लिखा है कि यदि तथ्यों में अत्यधिक एकरूपता पायी जाती है अर्थात सम्पूर्ण तथ्यों की विभिन्न इकाइयों के अन्तर बहुत कम है तो सम्पूर्ण में से कुछ या कोई इकाई समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करेगी। अतः निद"ान में अत्यन्त आव"यक है कि समाज में

अधिकाधिक समानता हो तथा चुनी गयी इकाइयां समग्र की वि"ोषताओं का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हो सकें।

2. **प्रतिनिधित्वपूर्ण चुनाव की सम्भावना** : निद"ार्न की मान्यता यह है कि समाज मे से कुछ इकाइयों का चयन इस प्रकार किया जा सकता है कि वे समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकें किन्तु इसके लिये आव"यक है कि निद"ार्न की इकाइयों में वे सभी वि"ोषताएं हो जो समग्र में हो।
3. **पर्याप्त परि"ाुद्धता** : अध्ययन में यह नहीं माना जा सकता कि निद"ार्न शत प्रति"ात परि"ाुद्ध है क्योंकि इकाइयों का चयन कितना ही सावधानीपूर्वक क्यों न किया गया हो वे शत प्रति"ात प्रतिनिधित्व नहीं कर सकती। हमारा प्रयास होना चाहिए कि निद"ार्न में इकाइयों की संख्या पर्याप्त हो ताकि वह प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सके और उनके अध्ययन के निष्कर्ष यर्थाथ हों।

11.2.2निद"ार्न की वि"ोशताएं

1. **पर्याप्त आकार** : निद"ार्न प्रणाली के अर्न्तगत कम से कम लोगों का चयन होना आव"यक है। यदि निद"ार्न प्रणाली के अपनाने के प"चात भी ज्यादा से ज्यादा लोगों का चुनाव किया जाता है तो उससे सम्बन्धित समस्त इकाइयों का गहन और सूक्ष्म अध्ययन करना और कठिन हो जाता है अतः निद"ार्न करते समय ध्यान रखना चाहिए कि समस्या एवं समग्र की प्रकृति तथा आकार के अनुरूप ही हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि निद"ार्न में इकाइयों की संख्या पर्याप्त हो ताकि वे समस्त इकाइयों का प्रतिनिधित्व कर सके।
2. **पर्याप्त प्रतिनिधित्व** : एक श्रेष्ठ निद"ार्न के लिए यह आव"यक है कि वह सम्पूर्ण /समग्र का सही प्रतिनिधित्व करे ऐसा तभी सम्भव हो सकता है जब समाज की प्रत्येक इकाई को निद"ार्न में सम्मिलित होने के समान अवसर प्राप्त हों। कार्लिजर के अनुसार ''शोध में प्रतिनिधिक निद"ार्ा का अर्थ यह है कि निद"ार्ा में समाज की लगभग सभी वि"ोषताएं होनी चाहिए जो शोध किए जाने वाले प्र"न के लिए प्रासांगिक है।''
3. **अभिनति रहित** : एक श्रेष्ठ निद"ार्न को पक्षपात एवं मिथ्या सुझाव से स्वतंत्र होना चाहिए अन्यथा यह प्रतिनिधित्वपूर्ण होने का दावा नहीं कर सकता।
4. **स्वतंत्रता** : निद"ार्न की महत्वपूर्ण वि"ोषता यह भी है कि समाज के सभी इकाइयां आपस में स्वतंत्र होनी चाहिए अर्थात निद"ार्न में किसी इकाई का सम्मिलित होना किसी अन्य इकाई के सम्मिलित होन पर निर्भर न हो। इसमें समग्र की प्रत्येक इकाई को निद"ार्न में चुने जाने का स्वतंत्र व समान रूप से अवसर प्राप्त होता है।
5. **साधनों के अनुरूप** : निद"ार्न में प्रयुक्त होने वाली प्रणाली का अध्ययनकर्ता के पास उपलब्ध साधनों तथा अध्ययन के उद्दे"यों के अनुरूप होना अत्यन्त आव"यक है साधनों के अनुरूप निद"ार्न न होने पर उसमें पक्षपात आने की संभावना रहती है।
6. **अनुभवों पर आधारित** : उत्तम निद"ार्न का चयन करने के लिए अध्ययन करते समय सदैव अध्ययनकर्ता को स्वयं तथा अन्य विषय–वि"ोषज्ञों के अनुभवों का लाभ उठाना चाहिए। अनुभवों से व्यवहारिक ज्ञान अर्जित किया जा सकता है तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण निद"ार्न का चुनाव भी सरलता से हो पाता है।
7. **ज्ञान व तर्क पर आधारित** : एक उत्तम निद"ार्न वह है जो सामान्य ज्ञान एवं तर्क पर आधारित हो। निद"ार्न का चयन करते समय अध्ययनकर्ता को विभिन्न नियमों व सिद्धांतों का पालन करने के साथ–साथ स्वयं तथा अन्य विद्वानों के ज्ञान तथा तर्क का सही उपयोग करना चाहिए, जिससे परिणामों की सफलता के प्रति अधिक आ"ाान्वित हुआ जा सके।

बोध–प्रश्न 1

(i) निद"र्ान की किन्ही दो महत्वपूर्ण वि"ोषताओं का उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

11.2.3 निद"र्ान के गुण

1. **मितव्ययी विधि** : अनुसंधान की यह पद्धति काफी मितव्ययी है। क्योंकि इस पद्धति में समूह की कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का ही अध्ययन किया जाता है। जिसमें धन, समय तथा परिश्रम कम खर्च होता है। अतः सम्पूर्ण जनसंख्या का शत प्रति"ात अध्ययन करने का श्रम, समय व धन व्यय नहीं करना पड़ता। निद"र्ान की ऐसी विधि है जिसके द्वारा कम इकाइयों का अध्ययन करने के लिए कम अध्ययनकर्ताओं और कम साधनों की आव"यकता होती है।
2. **परिणाम की** शुद्धता : परिणामों की शुद्धता निद"र्ान के इकाइयों की संख्या सीमित होती तथा अध्ययन विस्तृत होता है अतः प्राप्त होने वाले परिणामों की शुद्धता और यर्थाथवादिता भी बढ़ जाती है।
3. **समग्र का प्रतिनिधित्व** : एक श्रेष्ठ निद"र्ान की सर्वप्रथम वि"ोषता यह है कि वह समग्र का प्रतिनिधित्व करें। ऐसा तभी सम्भव हो सकता है कि समग्र की प्रत्येक इकाई को निद"र्ान में सम्मिलित होने के समान अवसर होते हैं। इसका तात्पर्य है कि निद"र्ान का चुनाव इस प्रकार किया जाना चाहिए जिसमें अध्ययन .... से संबन्धित सभी वर्गों और समूहों की वि"ोषताओं को स्पष्ट करने वाली इकाइयों का समावे"ा हो।
4. **निश्पक्षता** : एक श्रेष्ठ निद"र्ान को पक्षपात एवं मिथ्या सुझाव से स्वतंत्र होना चाहिए अन्यथा वह प्रतिनिधित्वपूर्ण होने का दावा नही कर सकता। निद"र्ान का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान रहे कि वह अनुसंधानकर्ता की रूचि, स्वार्थ, सुविधा एवं स्वेच्छा पर आधारित न हो, न ही उसमें पूर्ण धारणा का कोई प्रभाव नहीं होता।
5. **व्यवहारिक अनुभवों पर आधारित** : अध्ययनकर्ता को अध्ययन करते समय सदैव स्वयं तथा अन्य विद्वानों के अनुभवों का लाभ उठाना चाहिए। अनुभवों से व्यवहारिक ज्ञान को अर्जित किया जा सकता था तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण निद"र्ान का चुनाव भी सरलता से हो जाता है।
6. **ज्ञान व तर्क पर आधारित** : निद"र्ान का चयन करते समय अध्ययनकर्ता को विभिन्न नियमों व सिद्धांतो का पालन करने के साथ–साथ स्वयं तथा अन्य विद्वानों के ज्ञान तथा तर्क का सही उपयोग करना चाहिए जिससे परिणामों की सफलता के प्रति अधिक आ"ाान्वित हुआ जा सके।
7. **स्वतंत्रता** : निद"र्ान की महत्वपूर्ण वि"ोषता यह है कि समाज की समस्त इकाइयां स्वतंत्र होनी चाहिए अर्थात एक इकाई अन्य इकाई पर आश्रित नहीं होनी चाहिए दूसरे शब्दों में समाज की प्रत्येक इकाई को निद"र्ान में चुने जाने का स्वतंत्र एवं समान अवसर प्राप्त होना चाहिए।
8. **गहन अध्ययन** : संगणना विधि में क्षेत्र विस्तृत एवं इकाइयां बिखरी हुई होती हैं अतः उनके बारे में मोटी मोटी बातें ही ज्ञात होती हैं जब किसी अध्ययन छोटे निद"र्ान का उपयोग किया

जाता है तो प्रत्येक इकाई का अत्यधिक गहन और सूक्ष्म अध्ययन करने के साथ ही प्राप्त सूचनाओं की यर्थाथता को जांच करना भी सम्भव हो जाता है।

9. **तथ्यों की पुर्नपरीक्षा** : निद"ान में सीमित इकाइयों का अध्ययन कियं जाने के कारण आव"यकता पड़ने पर तथ्यों की पुनःपरीक्षा संभव है, परंतु अन्य विधियों में ऐसा संभव नहीं है। अतः अपेक्षाकृत कम संसाधनो के उपयोग से तथ्यों को पुनः जांच कर अध्ययन की प्रमाणिता में बृद्धि की जा सकती है।

11.2.4 निद"ान के दोष

निद"ान की उपयोगिता के साथ–साथ अनेक सीमाएं इस प्रकार हैं –

1. **पक्षपात की अधिक संभावना** : प्रवोध का सबसे बड़ा दोष यह है कि निद"ान का चुनाव पक्षपात रहित नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में निद"ान प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह जाता है निद"ान के चुनाव करते समय किसी न किसी रूप में अध्ययनकर्ता का प्रभाव एवं पक्षपात आ ही जाता है और हमारा निष्कर्ष भ्रमपूर्ण हो जाता है।
2. **निद"ान चुनाव में कठिनाई** : प्रतिनिधित्वपूर्ण निद"ान का चयन अत्यन्त महत्वपूर्ण है जिसमें अनुसंधानकर्ता को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इस संबंध में सबसे बड़ी कठिनाई तो इस लिए होती है कि सामाजिक इकाइयों में भिन्नता और विविधताएं जितनी अधिक होती हैं प्रतिनिधित्वपूर्ण निद"ान का चुनाव उतना ही कठिन हो जाता है।
3. **वि"ोश ज्ञान की आव"यकता** : प्रतिनिधित्वपूर्ण निद"ान के चयन हेतु सूचना–संकलन के लिए पर्याप्त ज्ञान, प्रि"ाक्षण व अनुभव की आव"यकता होती है। हर सामान्य अध्ययनकर्ता के लिए यह एक सरल विधि है।
4. **निद"ान की असंभवता** : कई परिस्थितियों में निद"ान अनिवार्य है तो अनेक ऐसी स्थितियां भी हैं जब निद"ान अध्ययन के लिए असम्भव हो जाता है जब अध्ययन विषय छोटा हो, इकाइयों में भिन्नता हो, और सजातीयता का अभाव हो, तो भी निद"ान प्रविधि के द्वारा अध्ययन से यथार्थ निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।
5. **निद"ान को कायम रखने में कठिनाई** : निद"ान में इकाइयों की संख्या कम होन से चुनी गयी इकाइयों पर कायम रहना कई बार बहुत कठिन होता है क्योंकि कई बार चयनित लक्ष्य निद"ा सूचना या तो नहीं होते या मना कर देते हैं तो अध्ययन कठिन हो जाता है और अनुसंधानकर्ता का उस निद"ा पर टिके रहने में कठिनाई होती है।

11.3 निद"ान के प्रकार

1. सम्भावना न्याद"ा (Random sampling)
2. गैर सम्भावना न्याद"ा (Non Random sampling)

"ाब्दिक अर्थानुरुप सम्भावना न्याद"ा में समग्रजन का प्रत्येक इकाई की न्याद"ा में चयनित होने की समान सम्भावना होती है। ऐसी निद"ान प्रक्रिया में एकांगों का चयन संयोग पर आधारित होता है तथा इसमें अत्यधिक प्रतिनिधित्व होता है।

गैर सम्भावना निद"ान पद्धति अर्न्तगत प्रत्येक इकाई को चुने जाने का समान अवसर नहीं है तथा इसमें प्रतिनिधित्व नहीं होता है।

11.3.1 सम्भावित निद"र्न

सम्भावित निद"र्न वह निद"र्न है जिसके अन्तर्गत समग्र की समस्त इकाइयों के चुने जाने की समान सम्भावना होती है अर्थात् इकाइयों का चयन पूर्णतः संयोग पर निर्भर होता है। इसमें समग्र की इकाईयों के व्यक्तिगत महत्व को समाप्त कर उसके स्थान पर सम्भावना को प्रतिष्ठित कर दिया जाता है। इस निद"र्न प्रक्रिया के किसी न किसी स्तर पर चयन संयोगव"ा होता है।

सम्भावित निद"र्न में इकाइयों के चुनाव के अनेक प्रकार है। यहां पर हम मुख्य प्रकारों का वर्णन करेगें।

1. सरल दैव निद"र्न
2. स्तरीकृत दैव निद"र्न
3. व्यवस्थित निद"र्न
4. बहुचरणीय/बहुस्तरीय निद"र्न
5. गुच्छ निद"र्न

1.सरल दैव निद"र्न – इस निद"र्न को यादृच्छिकी न्याद"र्न भी कहते है यह विधि सर्वाधिक प्रचलित विधि है। इसके अर्न्तगत सम्पूर्ण समग्र में से कुछ इकाइयों का चयन अवस्थतित रूप से कर लिया जाता है । उदाहरण के रूप हम गोल बर्तन में 100 एक जैसे रंग के पत्थर रखे और फिर उनमें से कोई एक पत्थर निकाले तो प्रत्येक गोली के चयन की सम्भावना 1/100 होगी। इस प्रकार चुना हुआ निद"र्न दैव निद"र्न होगा क्योंकि प्रत्येक गोली के चयन की सम्भावना 1/100 है। दैव निद"र्न के लिये आव"यक है कि इन सभी संयोगो को चयन का बराबर अवसर दिया जाए। दैव निद"र्न में प्रतिद"र्ा इकाइयों का चयन अनेक विधियां द्वारा होता है उनमें से कुछ अधिक प्रचलित विधियां हैं–

1. लॉटरी विधि 2. टिपेट विधि 3. कार्ड प्रणाली 4. ग्रिड प्रणाली

1. लॉटरी विधि – यह विधि दैव निद"र्न की सबसे सरल विधि है इसके अर्न्तगत अनुसंधानकर्ता समग्र की समस्त इकाईयों की क्रम संख्या/नाम वाली पर्चियां बना लेते हैं इसके प"चात् इन्हे किसी बर्तन या जार में रखकर अच्छी तरह से हिला लेते हैं जब तक पर्चियां अच्छी तरह से नही मिल जाती है। फिर एक व्यक्ति की आंख में काली पट्टी बांध कर उनमें से एक पर्ची निकाल लेता है इस पर्ची में अंकित क्रमांक की इकाई को न्याद"र्ा में सम्मिलित कर लिया जाता है। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक उत्तरदाताओं की वांछित संख्या प्राप्त न कर लें। मान ले हमें 2500 छात्रों को लेपटॉप वितरित करने है। हम समग्र के प्रत्येक सदस्य का नाम समान आकार की कागज की पर्ची पर लिखकर बॉक्स में डाल लेगें और उन्हे मिला दिया जाता है फिर व्यक्ति या बच्चें को 100 कागज की पर्ची निकालने के लिए आमंत्रित किया जाता है इस प्रकार उन 100 चयनित छात्रों को लेपटॉप वितरित कर दिये जाते हैं

2. कार्ड प्रणाली– यह लाटरी विधि का सं"ाोधित रूप है। इस प्रणाली या विधि के अर्न्तगत समान आकार तथा रंग के कार्डो पर समग्र की समस्त इकाइयों का नाम अंकित कर लिया जाता हे फिर इन्हे एक बड़े से डम में डालकर जोर से हिलाया जाता है। इसके प"चात् डम में से एक कार्ड को निकाल दिया जाता है। जितनी इकाईयों का चयन करना होता है उतनी बार डम को हिलाकर निकाला जाता है। इस विधि के अर्न्तगत जितने कार्ड निकाल जाते है उनसे सम्बधित इकाइयों का "ाोधकर्ता द्वारा अध्ययन किया जाता है।

3. टिपेट विधि या रेंडम अंक– इस प्रणाली को प्रो0 टिपेट ने 1927 में गणितीय अंको के आधार पर तैयार किया था। टिपेट ने चार अंकों वाला 10400 संख्याओं की एक सूची अनेक दे"ाों के जनसंख्या

प्रतिवेदन के आधार पर तैयार की। यहां 5–5 के वर्गाकार खण्डों में यादृच्छिकी क्रम में अंक लिखे होते है ऐसी तालिकाएं बहुधा सांख्यिकी की पुस्तकों में भी दी रहती है।

	1		**3**			**6**		**8**		**10**
	1		0			2		1		3
	0		1			1		4		6
	4		5			6		1		2
	8		3			4		9		0
	0		6			5		4		7
	2		2			8		5		3
	2		5			9		3		4
	3		5			1		4		0
	8		9			9		0		9
	8		5			8		2		5
	2		2			6		2		3
	4		2			4		4		2
	1		5			8		8		0
	3		2			0		3		8
	0		7			9		0		1
	4		0			1		5		5
	2		6			6		3		7
	1		2			3		5		0
	6		4			7		3		0
	7		3			6		7		4
	3		8			9		6		6
	7		1			1		1		0
	5		8			7		3		6
	7		3			8		0		7
	0		7			2		5		2

मान ले हमें 900 की समग्र/जनसंख्या में से 100 व्यक्तियों का एक प्रतिद"ार्ी लेना है। इसके लिए सर्वप्रथम हम समग्र की सूची बनाकर प्रत्येक सदस्य को एक संख्या प्रदान करते है। निद"ार्न द्वारा जो संख्याएं हमे मिलेगी उन संख्याओं वाले सदस्य हमारे प्रतिद"ार्ी होगें। चूकि हमारी जनसंख्या में 900 सदस्य है इसलिए हमें 1 और 900 के बीच की यादृच्छिक संख्याएं चाहिए। कुछ संख्याएं 900 से अधिकतम क्रम संख्या से अधिक हैं जो उन्हे छोड़ दिया जाएगा और उनके आगे वाली संख्याएं ले ली जायेगी। टिपेट संख्याएं अधिक वैज्ञानिक मानी जाती है और उनका उपयोग बहुत अधिक होता है।

3. **ग्रिड विधि**– एस विधि का प्रयोग भौगोलिक क्षेत्र के चुनाव के लिये किया जाता है एस प्रणाली के अंतर्गत यह निर्धारित किया जाता है कि कोई वि"ोष अध्ययन किस क्षेत्र या किन क्षेत्रों के अंतर्गत किया जाएगा। इस प्रणाली के अंतर्गत सर्वप्रथम उस क्षेत्र का मानचित्र तैयार किया जाता है उस मानचित्र यस सेल्यूलॉइड की पारद"ार्क ग्रिड प्लेट यख दी जाती है। इस प्लेट में वर्गाकार खाने बने रहते है जिन पर नम्बर अंकित होते है। सर्वप्रथम यह तय कर लिया जाता है कि निद"ार्न हेतु कितनी इकाइयों का चयन करना है उतने ही वर्गो को पहले काट लिया जाता है। मानचित्र के जिन कटे हुए भागों पर

निर्धारित नम्बरों के वर्गाकार खाने आते हैं उन पर नि"ाान लगाा दिया जाता है। उन्ही क्षेत्रों को अध्ययन के लिए चुन लिया जाता है।

4. नियमित अंकन प्रणाली– इस विधि में सर्वप्रथम समग्र की समस्त इकाइयों को किसी वि"ोष ढ़ग, काल या स्थान आदि के अनुसार व्यवस्थित कर लिया जाता है। तत्प"चात यह नि"चय कर लिया जाता है कि समग्र में से कितनी इकाइयों का चयन निद"र्ान हेतु करना होता है। साथ ही एक इकाई से दूसरी इकाई के बीच की संख्सत्मक दूरी को भी तय कर लिया जाता है। यदि हमें 100 छात्राओं में से 10 छात्राओं का चयन करना है तो पहले हमें उन 100 छात्राओं की सूची बनानी होगी। तत्प"चात चंकि हमे 10 छात्राओं का चयन करना है अतः हर 10वी छात्रा हमारे चुनाव में आयेगी। तो पहला, दसंवा, बीसंवा, तीसंवा और इसी क्रम में दस छात्राओं का चयन किया जाता है।

5. अनियमित अंकन प्रणाली– इस विधि में भ्धी समग्र की समस्त इकाइयों की एक सूची तैयार करके इस सूची में से प्रथम तथा अंतिम अंक छोड़कर शेष इकाइयों की सूची में अनुसंधानकर्ता अनियमित ढंग से विभिन्न इकाइयों में उतने ही नि"ाान लगाता है जितनेकि निद"र्ान का उसे चुनाव करना है। इसमें अनुसंधानकर्ता से आ"ाा की जाती है कि वह प्रथम तथा अंतिम अंक छोड़कर बिना पक्षपात के अनियमित ढंग से निद"र्ानों को चुन लेगा। फिर भी इस विधि में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

दैव निद"र्ान के गुण या लाभ –दैव निद"र्ान प्रणाली के प्रमुख लाभ निम्नांकित हैं

1. इस विधि में समग्र की प्रत्येक इकाई के चुने जाने के समान अवसर होते हैं।
2. यह एक वैज्ञानिक विधि है।
3. यह निद"र्ान को सबसे सरल विधि है क्योंकि अध्ययनकर्ता को जटिल अथवा कठोर सिद्वांत का पालन नही करना पडता है।
4. यह विधि मितव्ययितापूर्ण है क्योंकि इस विधि मे समय, धन तथा श्रम की भी पर्याप्त बचत होती है।
5. निद"र्ान में त्रुटियां की संभावना कम ही होती है।
6. यह विधि इकाइयों के चयन संबंधी त्रुटि की पुनः परीक्षा करना सम्भव होता है।

दैव निद"र्ान की हानियां या दोश

1. इस विधि में सर्वप्रथम समग्र की सूची का होना आव"यक है व्यवहारिक रूप से यह कार्य बहुत कठिन होता है क्योंकि कई बार सूची की उपलब्धता नगण्य होती है।
2. इस विधि द्वारा विविधतापूर्ण समग्र में से इकाइयों का चयन करना असम्भव होता है। अतः असमान प्रकृति वाली इकाइयों के लिए यह विधि उपयुक्त नही होती।
3. इस विधि द्वारा समग्र की समस्त इकाइयों का चयन करने की समसन सम्भावना होती है। चयनित इकाइयां अगर दूर– दूर तक फैली हो अथवा विस्तार बहुत अधिक हो। तो उनसे सम्पर्क कर सकना कभी कभी असम्भव होता है। इस विधि द्वारा चयनित इकाइयों में परिवर्तन करने की स्वतन्त्रता प्राप्त नही होती है जिस कारण दैव निद"र्ान अवैज्ञानिक और पक्षपातपूर्ण हो जाता है।
4. इस विधि द्वारा अध्ययन हेतु महत्वपूर्ण इकाइयों का समावे"ा नही हो पाता जो अध्ययन के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण होती है क्योंकि इस विधि द्वारा समग्र में से इकाइयों का चयन पूर्णतयाः संयोग पर निर्भर होता है।

बोध–प्रश्न 2

(ii) दैव निद"ार्न की ग्रिड विधि को समझाइए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. स्तरीकृत या वर्गीकृत निद"ार्न विधि– निद"ार्न के इस स्वरूप में समग्र को विभिन्न स्तरों या उस समूहो में विभाजित किया जाता है और फिर प्रत्येक स्तर में से स्वतन्त्र प्रतिद"ार्श ले लेते हैं। प्रो0 सिन पाओ यांग ने लिखा है कि ''स्तरित निद"ार्न का अर्थ है कि समग्र में से उप–निद"ार्नों को लेना जिनकी कि समान वि"ोषताएं हैं जैसे खेती का प्रकार, खेतों का आकार, भूमि पर स्वामित्व, ि"ाक्षा स्तर, आय, लिंग, सामाजिक वर्ग आदि। उप–निद"ार्नों के अंतर्गत आने वाले इन तत्वों को एक साथ लेकर प्रारूप या श्रेणी के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।'' यह महत्वपूर्ण है कि परिभाषा इस प्रकार दी जाए कि समग्रजन को समजातीय स्तरों में बांट लिया जाता है फिर प्रत्येक स्तर से सरल दैव निद"ार्न की किसी भी उपयुक्त प्रणाली के द्वारा निर्धारित संख्या में इकाइयों को चुना जाता है। स्तरीकृत निद"ार्न का यह सबसे सरल तथा सबसे अधिक प्रयुक्त होने वाला ढग है। स्तरीकृत निद"ार्न में समग्रजन के विभिन्न स्तरों में से एक ही अनुपात में निद"ार्न का अनुपात बराबर न हो।

उदाहरणार्थ यदि महिला प्राध्यापकों की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए हम किसी जिले की 1000 महिला प्राध्यापकों में से 100 का चयन करना चाहते है तो सर्वप्रथम हम जिले की सभी महिला प्राध्यापकों को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित कर लेते हैं इसके लिए हम सभी महिला प्राध्यापकाओं को प्राइमरी, एल0 टी0, प्रवक्ता, प्रोफेसर आदि श्रेणियों में विभाजित कर लेते है। यदि इन चारों श्रेणियों में महिला प्राध्यापिकाओं की कुल संख्या 480, 220, 200, 100 है तो प्रत्येक श्रेणी में से 10:1 के अनुपात में क्रम"ाः 48, 22, 20 तथा 10 का चयन दैव निद"ार्न की उपयुक्त प्रणाली द्वारा किया जाता है। स्तरों में विभाजित होने के कारण इस प्रणाली को स्तरित निद"ार्न विधि कहते है।

स्तरीकृत निद"ार्न के तीन प्रकार होते हैं–

1. अनुपातीय या समानुपातिक स्तरीकृत निद"ार्न
2. गैर अनुपातीय या असमानुपातिक स्तरीकृत निद"ार्न
3. भारयुक्त स्तरीकृत निद"ार्न

1. अनुपातीय स्तीकृत निद"ार्न : निद"ार्न की इकाइयों का चयन उसी अनुपात में किया जाता है जिस अनुपात में विभिन्न श्रेणियों की कुल संख्या समग्र के अन्तर्गत होती है। इसमें किसी स्तर से किये गये प्रतिद"ार्श में इकाइयों की संख्या उसी अनुपात में होती है जिसमें उस स्तर में जनसंख्या या समग्र की इकाइयां। उदाहरण : यदि समग्र में स्तर अ, ब, स में क्रम"ाः 500, 700, 900 इकाइयां हैं तो न्याद"ार्श में तीन स्तरों से इकाइयां 5 : 7 : 9 के अनुपात में होंगी।

2. असमानुपातिक स्तरीकृत निद"ार्न : इस प्रविधि के अंतर्गत समग्र को विभिन्न श्रेणियों में से समान संख्या में इकाइयों को चुना जाता है तथा इस बात की कुछ परवाह नही की जाती कि सम्पूर्ण समग्र में विभिन्न श्रेणियों के अंर्तगत इकाइयां एक दूसरे की तुलना में कम है या अधिक। इस विधि का प्रयोग तब किया जाता है जब किसी एक उप समूह का आकार दूसरे उपसमूह की तुलना में बहुत छोटा है।

उदाहरण के रूप में मान लें किसी समग्र में कुल 1000 व्यक्ति हैं इनमें से 600 हिन्दू, 300 मुसलमान और 100 ईसाई हैं इनकी अभिवृत्ति की तुलना के दृष्टिकोण से यह अधिक प्रबल होगा कि सब धर्मों के लोग बराबर संख्या में हो इसके लिए हम निर्णय करते हैं कि प्रत्येक धर्म से 50 व्यक्ति लेंगे तब पहले स्तर का 12वां, दूसरे का 6वां और 3 का 1/2 भाग लेते हैं।

3. भारयुक्त स्तरीकृत निद"र्न : यह उक्त दोनों विधियों का सम्श्रिण है। इसमें पहले प्रत्येक वर्ग में से समान सख्याओं का चयन किया जाता है तत्प"चात अधिक संख्या वाले वर्गों की इकाइयों को अधिक मदद प्रदान करके उनका प्रभाव बढ़ा दिया जाता है। यह भार इसी अनुपात में प्रदान किया जाता है जिस अनुपात में समग्र में वर्ग की इकाइयां होती है।

बोध–प्रश्न 3

(i) स्तरित निद"र्न के प्रकार लिखिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

स्तरीकृत निद"र्न के लाभ या गुणः

स्तरीकृत निद"र्न के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं

1. इस प्रणाली के अंतर्गत शोधकर्ता को निद"र्न के चुनाव के ऊपर अधिक नियंत्रण होता है और प्रत्येक वर्ग की इकाइयों का प्रतिनिधित्व का अवसर मिलता है।
2. इकाइयों की संख्या का चुनाव होने पर भी प्रतिनिधि का निर्माण हो जाता है।
3. आव"यकता पड़ने पर किसी इकाई को त्याग कर दूसरी इकाई चुनने की सुविधा भी रहती है तथा भौगोलिक आधार पर वर्ग विभाजन भी सरलता से किया जा सकता है।
4. समाज में विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों के मानने वाले लोग रहते हैं वहॉ पर वर्गीय निद"र्न प्रणाली के आधार पर इस प्रकार के व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व संभव हो पाता है।
5. इस प्रणाली के माध्यम से सभी प्रकार के व्यक्तिय इसमें स्वतः ही आ जाते हैं चाहे व्यक्ति भौगोलिक दृष्टि से अलग–अलग स्थानों में या एक ही स्थान पर अलग–अलग दूरी पर क्यों न रहते हों।

स्तरीकृत निद"र्न की हानियां या गुण दोश :

1. स्तरित निद"र्न में यदि दो वर्गों का निर्माण उचित नहीं हुआ तो अभिनति उत्पन्न हो सकती है। उसी प्रकार चुने हुए निद"र्न में किसी वि"ोष वर्ग की इकाइयां बहुत अधिक या बहुत कम हो सकती है। ऐसा होने पर निद"र्न प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह जाता।
2. यदि भिन्न भिन्न वर्गों के आकार में बहुत अधिक अन्तर है तो समान अनुपात में इकाइयों का चयन करना कठिन हो जाता है और इस प्रकार यदि निद"र्न समानुपातिक नही होता तो वह प्रतिनिधित्वपूर्ण भी नही हो सकता।

3. यदि वर्गो से इकाइयों का चुनाव असमानुपातिक आधार पर किया गया है तो बाद में भार का प्रयोग करना पड़ता है। इस काम में अनुसंधनकर्ता का पक्षपात व मिथ्या–झुकाव अपना प्रभाव डाल सकते हैं।
4. इस प्रणाली को ऐसे समाज में लागू नहीं किया जा सकता जहां विभिन्न संस्कृतियों के लोग निवास करते हैं ऐसे समाज को विभिन्न उपभागों में बराबर प्रतिनिधात्मक इकाइयों का चयन करने में व्यवहारिक रूप से कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

3. व्यवस्थित प्रतिद"र्ान : यह विधि उपयोग करने में सरल तथा आसान है प्रतिद"र्ान के इस स्वरूप को अन्तराल प्रतिद"र्ान भी कहा जाता है इसके अन्तर्गत पूर्व निर्धारित व्यक्तियों की सूची में से नियमित अन्तराल के प"चात सदस्यों को चुन लेते हैं। सर्वप्रथम न्याद"र्ा का आकार एवं समग्र के आकार का अनुपात निर्"चत कर लिया जायेगा। माना यह अनुपात 1:15 है। जैसे लक्ष्यित समग्रजन 6000 है और प्रस्तावित प्रतिद"र्ा का आकार 400 लेना हो तो समग्र की सूची में से 15वे व्यक्ति को लिया जायेगा। पहली संख्या का चयन हेतु लॉटरी या अन्य विधियों का व्यवस्थित उपयोग कर सकते है। व्यवस्थित निद"र्ान सरल दैव निद"र्ान विधि से इस अर्थ भिन्न है कि सरल दैव निद"र्ान विधि में चयन संयोग पर निर्भर करता है जबकि व्यवस्थित निद"र्ान में प्रतिद"र्ा इकाइयों का चयन पूर्ववर्ती इकाई के चयन पर निर्भर होता है।

4. बहुचरणीय निद"र्ान : इस विधि का प्रयोग बहुत बड़े अध्ययन क्षेत्र से एक निद"र्ान निकालने के लिए किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत इकाइयों के चुनाव की प्रक्रिया अनेक स्तरों में से होकर गुजरती है। प्रत्येक अवस्था या स्तर में प्रतिद"र्ान दैव निद"र्ान प्रणाली द्वारा ही होगा। अतः ऐसे निद"र्ान में इकाइयों का चयन अनेक स्तरों द्वारा किया जाता है इसलिए इसे बहुचरणीय या बहुस्तरीय निद"र्ान कहते हैं।

अतः यह सामान्य तौर पर तब उपयोग किया जाता है जब अध्ययन क्षेत्र अधिक बड़ा हो और चयनित इकाइयों की भौतिक दूरी अधिक हो या समाज की पूर्ण सूची उपलब्ध नहीं हो यह निम्न चरणों में पूर्ण किया जाता है–

1. सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को कुछ सजातीय क्षेत्रों में बांट लिया जाता है। ये क्षेत्र समान क्षेत्रफल के होते हैं तथा क्षेत्रवासियों में अधिकतम समानता का प्रयास किया जाता है।
2. प्रत्येक क्षेत्र में से कुछ ग्राम दैव निदेणन प्रणाली के आधार पर चुने जाते हैं
3. चयनित प्रत्येक ग्राम में से कुछ घरों का समूह दैव निद"र्ान प्रणाली के आधार पर चुना जाता है।
4. अंतिम चरण में इन घरों के समूह में से कुछ परिवारों को दैव निद"र्ान प्रणाली से चुन कर अध्ययन किया जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि बहुस्तरीय निद"र्ान दैव निद"र्ान तथा स्तरीकृत निद"र्ान का सम्मिलित रूप है और यदि पर्याप्त सावधानी बाती जाय तो उनमें उक्त दोनो प्रणालियों के लाभ प्राप्त हो जाते हैं।

5. गुच्छ निद"र्ान : इसके अंतर्गत समग्र को बहुत से समूहों में विभाजित करके इनमें से केवल कुछ समूहों का निद"र्ा लेकर उनके तत्वों का अध्ययन किया जाता है तो इसे गुच्छ निद"र्ान कहते हैं। सामाजिक सर्वेक्षणों में इसका प्रयोग यात्रा व्यय को बचाने के उद्दे"य से होता है। गुच्छ जितने बड़े होंगे निद"र्ान की लागत उतना कम हो। विस्तृत भौगोलिक क्षेत्रों में लाभदायक है। निद"र्ान की इस विधि में गुच्छों या समूहों का ढ़ॉचा बनाया जाता है और इस ढ़ॉचे में से दैव प्रतिद"र्ा चुना जाता है फिर

चुने गये गुच्छों में पड़ने वाली स्वभाविक इकाई का अध्ययन किया जाता है समूह प्रतिद"र्ान में प्रतिचयन दो प्रकार से होता है

1. **एक पद प्रतिचयन** : गुच्छ प्रतिचयन में यदि हम केवल एक बार प्रतिचयन करें तो उसे एक पद प्रतिचयन कहते हैं।
2. **बहुपद प्रतिचयन** :यदि एक से अधिक बार प्रतिचयन करे तो बहुपद प्रतिचयन कहते है।

गुच्छ निद"र्ान के लाभ या गुण :

1. यह निद"र्ान उस समय लाभदायक होता है जबकि इकाई तक पहुॅचने का व्यय अधिक एवं इकाई के अध्ययन का व्यय कम होता है।
2. विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र पर बड़ी संख्या में समग्र का अध्ययन करना हो
3. इस निद"र्ान में लोच का गुण होता है । एक बार चयनित प्रतिद"र्ा को प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

गुच्छ निद"र्ान की हानियां या दोशः

1. इसमें प्रतिनिधिकता की कमी होती है।
2. चयनित समूहों की इकाई /व्यक्ति दो या दो से अधिक समूहों से सम्बद्ध हो सकता है जिस कारण उसका दो बार अध्ययन हो सकता है।

बोध–प्रश्न 4

(i)गुच्छ निद"र्ान के गुण व दोष लिखिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

11.3.2 गैर सम्भावना प्रतिद"र्ान

असम्भावित निद"र्ान में सम्भावना एवं संयोग का कोई महत्त्व नहीं होता है। इसमें शोधकर्ता अपने विवेक से इकाइयों का चयन करता है। यह प्रतिनिधित्व का दावा नहीं करता किन्तु न्याद"र्ा को प्रतिनिधि बनाने के लिए कुछ नियमों का उपयोग करता है। अतः इसमें न तो प्रत्येक इकाई के निद"र्ान में सम्मिलत होने की संभावना और न उसके चुने जाने की संभावना होते हैं शोधकर्ता विषय के उद्दे"यों के अनुरूप ही इकाइयों का चयन करता है।

असम्भावित निद"र्ान की तीन विधियां है जो निम्नांकित इस प्रकार हैं –

1. उद्दे"यपूर्ण निद"र्ान
2. सुविधात्मक निद"र्ान
3. कोटा या अभ्यं"ा निद"र्ान

1. उद्दे"यपूर्ण निद"र्ान : इस विधि को निर्णायत्मक निद"र्ान या सुविचार निद"र्ान से भी जाना जाता है। इसके अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता का प्रयास रहता है कि वह ज्ञान और विवके के आधार नत्रपर प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाइयों का चयन करता है। अनुसंधानकर्ता पहले से ही समग्र की इकाइयों के बारे में पूर्ण जानकारी रखता है। अनुसंधानकर्ता वि"ोष उद्दे"य ध्यान में रखते हुए समग्र में से उन्हीं इकाइयों का चयन जान बूझकर करता है जिसे वह पूर्व ज्ञान के आधार पर उस समग्र का प्रतिनिधि समझता है।

तो ऐसे निद"र्ान को उद्दे"य पूर्ण निद"र्ान कहा जाता है। उद्दे"यपूर्ण निद"र्ान के अन्वेषक को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान नहीं होती, सर्वप्रथम अन्वेषक समग्र की समस्त इकाइयों का गहन अध्ययन करता है तत्प"चात समग्र से उन्ही इकाइयों का चयन करता है जो समग्र की वि"ोषताओं का पूर्णतया प्रतिनिधित्व करे। इसमें अनुसंधानकर्ता समग्र की सभी इकाइयों की वि"ोषताओं तथा प्रकृति के संबंध में पूरा–पूरा ज्ञान हो। बड़े समग्र की समस्त इकाइयों के संबंध में ज्ञन इस विधि द्वारा संभव नहीं है इससे अनुसंधानकर्ता समग्र की प्रकृति, गुणों व इकाइयों की वि"ोषताओं से पूर्व परिचित या व्यक्ति होता है। जैन्सन के अनुसार ''उद्दे"यपूर्ण निद"र्ा से तात्पर्य इकाइयों के समूह को इस प्रकार चुनने से है कि चुने हुए वर्ग मिलकर जहां तक हो सके, वही औसत अथवा अनुपात प्रदान करें जो समग्र में है। '' इस प्रकार सविचार अथवा उद्दे"यपूर्ण निद"र्ान में अनुसंधानकर्ता अपने उद्दे"य को ध्यान में रखते हुए उन्हीं इकाइयों का चयन करता है जो क्षेत्र का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करती हों।

उदाहरण : किसी महाविद्यालय या वि"वविद्यालय के प्रोफेसर द्वारा छात्रों की समस्याओं से संबंधित शोध कार्य करना है तो वह महा0 में स्थित केन्टीन, पुस्तकालय, वाचनालय, मैदान तथा बारण्डा में जाकर शोध से संबंधित अध्ययन का लेता है।

उद्दे"यपूर्ण निद"र्ान के लाभ या गुण :

1. निद"र्ान का आधार बहुत छोटा होने क कारण यह विधि कम खर्चीला है।
2. यह विधि ऐसे अनुसंधान में वि"ोषरूप से उपयोगी होती है जिनमें समग्र की कुछ इकाइयों का चुना जाना वि"ोष रूप से उपयोगी होता है।
3. यह विधि पूर्वगामी अध्ययनों हेतु लाभकारी है।
4. यदि निद"र्ान का चुनाव में अभिनति को दूर करने की चेष्टा की गई तो छोटा निद"र्ान भी प्रतिनिधिपूर्ण हो जाता है।

उद्दे"यपूर्ण निद"र्ान के हानियां या दोष :

1. समग्र का ज्ञान न होने पर प्रणाली दोषपूर्ण है।
2. इसमें निद"र्ान संबंधी अ"ाुद्धता का अनुमान लगाना कठिन होता है।
3. इसमें इकाइयों के चुनाव में पक्षपात आने की पूरी पूरी सम्भावना बनी रहती है। अतः परिणाम अवैज्ञानिक और अ"ाुद्ध हो जाते है।
4. इस प्रणाली द्वारा निष्कर्षों में परि"ाुद्धता की मात्रा बहुत कम होती है।
5. इसके आधार पर समग्र की सम्पूर्ण वि"ोषताओं को नही समझा जा सकता।

बोध–प्रश्न 5

(i) उदृदे"यपूर्ण निद"र्ान पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

2. सुविधापूर्ण निद"र्ान :सुविधापूर्ण निद"र्ान में जो कोई भी इकाई को व्यक्ति सुविधापर्वक उपलब्ध होती है उसका अध्ययन कर लिया जाता है या जो शोध के दौरान अचानक शोधकर्ता के सम्पर्क में आ जाते हैं। समग्र में से यदृच्छ चयन को अवैज्ञानिक तथा अप्रमाणिक प्रणाली है किन्तु अनेक शोध कार्यों हेतु इसका प्रयोग किया जाता है। इसे आकस्मिक, अवसरवादी तथा लापरवाहीपूर्ण पूर्ण निद"र्ान भी कहते हैं। इस विधि के अवैज्ञानिक एवं पक्षपातपूर्ण होते हुए भी कई बार अध्ययन हेतु इसी का प्रयोग किया जाता है। इसका उपयोग तब किया जाता है–

1. समग्र पूर्णतया स्पष्ट न हो।
2. जब निद"र्ान की इकाइयां स्पष्ट न हो।

3. जब स्रोत सूची अप्राप्त हो।

यह विधि सरल, मितव्ययी, गहन अध्ययन एवं यथार्थ निद"र्ान की सम्भावना के गुण रखती है।

3. कोटा निद"र्ान : यह वर्गीय निद"र्ान का ही एक रूप है। इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम समाज को कई वर्गों में विभाजित किया जाता है तत्प"चात प्रत्येक वर्ग में से चुनी जाने वाली इकाइयों की संख्या तय कर ली जाती है इसके प"चात प्रत्येक स्तर से आव"यक अं"ा (कोटा) में इकाइयों का चुनाव अपने विवेक से करता है। इस पद्धति को भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उपयुक्त नही माना जाता क्योंकि इस प्रणाली में इकाइयों का चयन अनुसंधानकर्ता की स्वेच्छा पर निर्भर करता है। कोटा निद"र्ान का उपयोग करते समय अनुसंधानकर्ता यह ध्यान रखता है कि अध्ययन के दृष्टिकोण से किन–किन लक्षणों या वि"ोषताओं के आधार पर विभिन्न वर्गों में से इकाइयों का चयन करना उपयुक्त होगा तत्प"चात प्रत्येक वर्ग में से कितनी इकाइयों से तथ्यों का संकलन करना है। इस संख्या को ही अभ्यं"ा या कोटा कहा जाता है। प्रत्येक वर्ग से इकाइयों की संख्या का चयन करने के प"चात अनुसंधानकर्ता इन वर्गों में अपनी इचछानुसार इकाइयों का चयन करने हेतु पूर्णतः स्वतंत्र होता है।

कोटा निद"र्ान के लाभ या गुण :

1. यह विधि कम खर्चीली है।

2. यह बहुत कम समय में पूर्ण किया जा सकता है।

कोटा निद"र्ान की हानियां या दोश :

1. यह समाज का वास्तविक प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता है।

2. चयन में साक्षत्कारकर्ता का पूर्वाग्रह हो सकता है

3. त्रुटियों की गणना सम्मत नहीं हो पाती ।

11.4 सम्भावना निद"र्ान तथा असम्भावना निद"र्ान में अंतर

1. सम्भावित निद"र्ान की समस्त विधियों में निद"र्ान के चुनाव के समय समग्र की प्रत्येक इकाई को निद"र्ान में आने का समान अवसर मिलता है। जबकि असम्भावित निद"र्ान में चूंकि समस्त इकाइयों को निद"र्ान में सम्मिलित होने का अवसर नहीं मिलता।
2. सम्भावित निद"र्ान द्वारा चुनी गई इकाइयां समग्र की प्रतिनिधि होती है क्योकि समग्र में पाई जाने वाली सभी वि"ोषताओं का उसी अनुपात में प्रतिनिधत्व होना चाहिए जिस अनुपात में वे वि"ोषताएं उस समग्र में उपस्थित हो। इसी कारण निद"र्ान के अध्ययन के आधार पर जो परिणाम प्राप्त किये जाते हैं उन्हे समग्र पर लागू नहीं किया जा सकता, जबकि असम्भावित निद"र्ान से प्राप्त परिणाम उस निद"र्ान तक ही सही होते हैं, उन्हे समग्र पर लागू नहीं किया जा सकता।
3. सम्भावित निद"र्ान वैज्ञानिक होता है क्योंकि निद"र्ान की इकाइयों का चुनाव निष्पक्षता से होता है। जबकि असम्भावित निद"र्ान में महत्वपूर्ण इकाइयों को निद"र्ान में आव"यक रूप से सम्मिलित किया जाता है।
4. सम्भावित निद"र्ान में अपनाई गयी प्रणाली में इकाइयां वि"वसनीय होती है। अगर एक या एक से अधिक अनुसंधानकर्ता उसी समग्र में से निद"र्ान का चुनाव करें तो वे समस्त निद"र्ान एकसमान होगें। इसके विपरीत असम्भावित निद"र्ान में इकाइयों का चयन अनुसंधानकर्ता की इच्छा पर निर्भर होने के कारण वि"वसनीय नही होता।
5. सम्भावित निद"र्ान में इकाइयों के चयन दैव पर निर्भर रहता है अर्थात समग्र की समस्त इकाइयों के चयन की सम्भावना रहती है। लेकिन इसमें वह महत्वपूर्ण इकाइयां छूट जाती हैं जो अध्ययन के लिए उपयोगी होती हैं। जबकि असम्भावित निद"र्ान में महत्वपूर्ण इकाइयों को निद"र्ान में आव"यक रूप से सम्मिलित किया जाता है।
6. ऐसे सामाजिक अनुसंधान जिनका संबंध सिद्धांतों के निर्माण, सिद्धांतों की पुनर्परीक्षण, उपकल्पनाओं के परीक्षण आदि में सम्भावित निद"र्ान का उपयोग होता है क्योंकि यह

अनुसंधानकर्ता की इच्छा पर निर्भर नही होता। जबकि ऐसी किसी भी द"ाा में इस प्रकार के अध्ययनों में असम्भावित निद"र्न का उपयोग नहीं किया जा सकता।

11.5 निद"र्न की समस्या :

1. निद"र्न की आकार की समस्या : निद"र्न की सबसे सर्वप्रथम समस्या उसके उचित आकार की ही है। उत्तम निद"र्न के लिए पर्याप्त आकार का होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अध्ययनकर्ता को इस संबंध में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अगर निद"र्ा का आकार बड़ा है तो अधिक धन, समय और श्रम का व्यय अध्ययनकर्ता के लिए समस्या है और अगर निद"र्न छोटा होता है तो उसकी वि"वसनीयता एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण के संदर्भ में संदेह रहता है। अतः निद"र्न में सही आकार का होना अत्यन्त आव"यक है जिसे निम्न कारण प्रभावित करते हैं–

1. **समाज की प्रकृति** : समाज से एकरूपी इकाइयों की अधिकता से छोटे आकार का निद"र्न भी प्रतिनिधिपूर्ण और वि"वसनीय होता किन्तु अगर समग्र में विषमताएं अधिक है तो निद"र्न का आकार बड़ा होना चाहिए।
2. **वर्गों की संख्या** : अगर समग्र में विभिन्न प्रकार के वर्ग है या उनमें भिन्नताएं अधिक हैं तो निद"र्ा का आकार बड़ा है।
3. **उपलब्ध साधन** : धन, समय, श्रम व अन्य संसाधनों की पर्याप्तता की स्थिति से निद"र्न का आकार बड़ा हो सकता है अन्यथा छोटा आकार साधनों की उपलब्धता के आधार पर लिया जाना चाहिए।
4. **परि"ाुद्धता की मात्रा** : सामान्तयः ऐसा माना जाता है कि बड़ा निद"र्न अधिक परि"ाुद्ध और प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है। किन्तु यदि सही तरीके से चुनाव किया जाता है तो छोटा निद"र्न भी वि"वसनीय एवं प्रतिनित्वपूर्ण हो सकता है।
5. **अनुसंधान की प्रकृति** : अगर अध्ययन गहन तथा सूक्ष्म है तो निद"र्ा का आकार छोटा होना चाहिए अगर अध्ययन विषय विस्तृत है तो निद"र्न का आकार बड़ा होना चाहिए।
6. **अध्ययन के उपकरण** : अगर प्र"नावली द्वारा किसी क्षेत्र का अध्ययन करते है तो निद"र्न आकार बड़ा भी हो सकता है इसमें भी अगर प्र"न छोटा और सरल है तो निद"र्न में और वृद्धि की जा सकती है। किन्तु इसके स्थान पर यदि अनुसूची या व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित का सूचना एकत्र करनी है तो छोटा निद"र्न उपयुक्त रहता है।

2. पक्षपात निद"र्न की समस्या : निद"र्न के चयन से पक्षपातपूर्ण रवैया से निद"र्न प्रतिनिधित्वपूर्ण नही हो पाता।

अध्ययन के दौरान अभिमति मुक्त निद"र्न निम्न कारण से होता है–

1. **निद"र्न का छोटा आकार** : निद"र्न का आकार छोटा होने के कारण अनेक इकाइयों को चयन का अवसर नहीं मिलता और अनेक ऐसी इकाइयां भी हो सकती हैं जो महत्वपूर्ण हैं पर सम्मिलित न की गई हों, ऐसी स्थिति में निद"र्न प्रतिनिधित्वूर्ण नहीं हो सकता।
2. **उद्दे"यपूर्ण निद"र्न** : इस प्रकार के निद"र्न में अध्ययनकर्ता अपनी इच्छानुसार इकाइयों का चयन करता है। इसमें वह ऐसी ही इकाइयों का चयन कर सकता है जिनसे सम्पर्क करना सरल हो। वह असुविधाजनक और कठिनाई से मिलने वाली इकाइयों को छोड़ देता है। ऐसी स्थिति में निद"र्न अभिनतिपूर्ण होता है।

3. **सुविधानुसार निद"र्न** : अपनी सुविधानुसार इकाइयों का चयन करता है जो आव"यक नहीं कि वह प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाइयों का चयन ही करे। इसलिए अभिमति की सम्भावना बढ़ जाती है।
4. **दोशपूर्ण वर्गीकरण** : यदि वर्गीय निद"र्न में ऐसे वर्गों का चुनाव कर लिया जाता है। जो अस्पष्ट, असमान व अनुपयुक्त हों तब भी अभिनति आ सकती है। इसी तरह से यदि वर्ग में असमान संख्या वाली इकाइयों में से समान संख्या में इकाइयां चुन ली जाती हैं तब भी वह असंतुलित और दोषपूर्ण हो जाता है।
5. **अपूर्ण स्रोत सूची** : अगर स्रोत सूची पुरानी, अधूरी या अनुपयुक्त है तो भी निद"र्न पक्षपातपूर्ण होगा।
6. **कार्यकर्ताओं द्वारा चुनाव** : कई बार कार्यकर्ताओं को यह अनुमति दे दी जाती है कि वे निद"र्न की इकाइयों का चुनाव अपनी इच्छानुसार करें। ऐसी स्थिति में भी चयन में पक्षपात आ सकता है।
7. **त्रुटिपूर्ण देव निद"र्न** : त्रुटिपर्ण निद"र्न विधि द्वारा इकाइयों के चयन में भी पक्षपात की सम्भावना रहती है। अगर अध्ययनकर्ता जानबूझ कर कार्ड /पर्चियों का निर्माण इस प्रकार करता है कि वह पहचान बना सके तो सरलता से दैव निद"र्न भी अभिनति युक्त हो जाता है और इस स्थिति में निद"र्न पक्षपातपूर्ण हो जाता है क्योंकि उचित निद"र्न का चयन नहीं हो पाता।

बोध–प्रश्न 6

निद"र्न के आकार से संबंधित समस्याओं का उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

11.6 निद"र्न की वि"वसनीयता की समस्या :

चयनित निद"र्न के वि"वसनीयता की जॉच करने के लिए निम्न उपाय अपनाये जा सकते हैं –

1. **सामान्तर निद"र्न** : प्राप्त निद"र्न कहां तक वि"वसनीय है इसकी परीक्ष करने के लिए सामान्तर उप–निद"र्न को प्राप्त करना अक्सर बहुत उपयोगी होता है यदि दोनों में पर्याप्त सीमा तक समानता है तो निद"र्न वि"वसनीय माना जाता है, अर्थात सामान्तर निद"र्न के अन्तर्गत आने वाली इकाइयों की वि"ोषताएं मुख्य निद"र्न से सम्बंधित इकाइयों की वि"ोषताओं से मिलती जुलती हैं।
2. **समाज की तुलना** : शोधकर्ता अपने ज्ञान तथा अनुभव के आधार पर निद"र्न की तुलना करके निर्णय दे सकता है। पर्याप्त समानता के आधार पर उसे वि"वसनीय माना जाता है।
3. **निद"र्न का निद"र्न** : निद"र्न की वि"वसनीयता की जांच करने का एक तरीका यह है कि चयनित निद"र्न में से कुछ इकाइयां दैव निद"र्न द्वारा चुनी जाती हैं और उसकी तुलना मूल निद"र्न से की जाती है। यदि उपनिद"र्न में मूल निद"र्न के गुण हैं तो निद"र्न वि"वसनीय माना जाता है।

4. **महत्व का परीक्षण** : निद"ान की वि"वसनीयता क जांच करने के लिए यह वैज्ञानिक विधि है फिर भी इसका प्रयोग व्यवहारिक जीवन में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है निद"ान के उपयोग द्वारा प्राप्त सूचनाओं के प्रथम स्तर पर प्रमापीकरण किया जाता है अध्ययनकर्ता इस समय अपनी अर्न्तदृष्टि से ज्ञात करता है कि सूचनाएं किस सीमा तक उपयोगी हैं।
5. **सर्वेक्षण की पुनरावृत्ति** : यद्यपि यह एक कठिन कार्य है फिर भी सम्भव हो तो लगभग मिलते जुलते सर्वेक्षणों की पुनरावृत्ति करके उनमें लिए गये निद"ानों की तुलना करके वि"वसनीयता की जांच की जा सकती है।

11.7 सारां"ा

किसी समूह के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के उद्दे"य से उसमें से कुछ व्यक्तियों को अध्ययन के लिए चुन लेना निद"ान कहलाता है। निद"ान से धन, श्रम तथा समय की बचत होती है जिससे अध्ययन के निष्कर्ष यर्थाथ प्राप्त होते हैं। सम्भावित तथा असम्भावित निद"ान के उपयोग से यमग्र के प्राचलों का आकंलन तथा सांख्यिकीय परिकल्पनाओं का परीक्षण किसी नि"चत सार्थकता स्तर पर हो सकता है। अभिनति कम से कम तथा दक्षता अधिक से अधिक करने के उददे"य प्राप्ति के लिए समग्र कर सूची तथा निद"ान के आकार का नि"चय दृढ़ आधार पर किया जायें। निद"ान प्रणाली समग्र में से कुछ चुनी गई इकाइयों का अध्ययन करने के प"चात जो निष्कर्ष प्राप्त होते हैं वह सार्वभौमिक रूप से सब को मान्य होते हैं।

11.8 पारिभाषिक शब्दावली

चर– चर किसी अनुसंधान में प्रेक्षित की जाने वाली वह वि"ोषता है जिसके विभिन्न मान हो सकते है।

समग्र– किसी विचाराधीन अनुसंधान क्षेत्र की सभी इकाइयों का समुदाय है।

प्रतिद"र्ा– एक समग्र का वह अं"ा जो किसी अनुसंधान के लिए चुना जाता है, एक प्रतिद"र्ा कहलाता है।

तथ्य–तथ्य वह घटना है जिसको हम वास्तविक रूप में देख या सुन सकते है तथा इनका अनुभव इन्द्रियों के माध्यम से किया जा सकता है।

11.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** कालेज बुक डिपो .जयपुर.
राय, पारस नाथ. **2004. अनुसंधान परिचय.** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल. आागरा.
गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सो"ायल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरने"ानल. ऑकलैण्ड.

Manheim Henry L., (1977). Sociological Research : Philosophy & Methods. The Dorsey Press. Illinois.

Moser C .A. and G. Kalton. (2nd ed). (1980). Survey Methods in Social Investigation. Heinemann Educational Books . London.

11.10 बोध प्र"नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर निद"ान की वि"ोषताएं शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर सरल दैव निद"र्ान शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर स्तरित निद"र्ान शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर गुच्छ निद"र्ान शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर उद्दे"यपूर्ण निद"र्ान शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 6

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर निद"र्ान की समस्या शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

11.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.
Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers
Bailey, Kenneth D. (1982). Methods of Social Research. The Free Press. New York.
Mukundlal. (1958). Elementary Statistical Methods. Manoj Prakashan. Varanasi.
Sanders, Donald.(1955). Statistics. McGraw Hill. New York.
Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow

11.12 निबंधात्मक प्र"न

- निद"र्ान का अर्थ लिखते हुए एक अच्छे निद"र्ान की वि"ोषताओं तथा गुणों व दोषों का वर्णन कीजिए।
- निद"र्ान से आप क्या समझते हो? निद"र्ान के प्रकारों का संक्षिप्त में वर्णन कीजिए।
- सरल दैव निद"र्ान को परिभाषित कीजिए तथा सरल दैव निद"र्ान में चुनने की विधियों का उल्लेख कीजिए।
- असम्भावित निद"र्ान से आप क्या समझते हैं इनकी विधियों का सविस्तार उल्लेख कीजिए।
- निद"र्ान को परिभाषित कीजिए तथा सम्भावित निद"र्ान तथा असम्भावित निद"र्ान में अंतर द"र्ाइय।
- निद"र्ान के अर्थ तथा परिभाषा को स्पष्ट करते हुए निद"र्ान की वि"वसनीयता की जांच के उपाय बताइए।

इकाई 12 तथ्य के स्रोत - प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्य

Sources of Data- Primary & Secondary Data

12.0 उद्दे"य
12.1 प्रस्तावना
12.2 तथ्य का अर्थ एवं परिभाषा
12.3 प्राथमिक तथ्य
12.4 प्राथमिक सामग्री के संकलन के स्रोत
12.4.1 प्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत
12.4.2 अप्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत
12.5 प्राथमिक स्रोत के गुण व दोष
12.6 द्वितीयक तथ्य एवं स्रोत
12.6.1 व्यक्तिगत प्रलेख
12.6.2 सार्वजनिक प्रलेख
12.7 द्वितीयक स्रोत के गुण व दोष
12.8 प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर
12.9 सारांश
12.10 परिभाषिक शब्दावली
12.11 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर
12.12 संदर्भ ग्रंथ सूची
12.13 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
12.14 निबंधात्मक प्र"न

12.0 उद्दे"य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- प्राथमिक तथ्य तथा प्राथमिक तथ्य के स्रोत को बताना,
- प्राथमिक स्रोतों के गुणों और दोषों की चर्चा करना,
- द्वितीयक तथ्य तथा द्वितीयक तथ्य के स्रोत को बताना,
- द्वितीयक स्रोतों के गुणों और दोषों की चर्चा करना,
- प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर की चर्चा करना।

12.1 प्रस्तावना

सामाजिक "ोध कार्य की प्रथम आव"यक तथ्यों का संग्रहण करना है क्योंकि सम्पूर्ण अनुसंधान कार्य तथ्यों पर ही आधारित होता है। तथ्य ही अनुसंधानकर्ता के ज्ञान की कसौटी है। तथ्य–सूचनाओं को एकत्रित करने तथा संग्रहित करने के लिए "ोधकर्ता को कतिपय प्रमाण, सिद्ध तरीकों व प्रविधियों का चयन करना होता है क्योंकि सावधानी पूर्वक चयन तथा संकलन की प्रक्रिया ही अनुसंधान के लक्ष्यों

तक पहुँचाने में सहायक सिद्ध होती है। समाज"ाास्त्रीय अध्ययन में सूचनाओं एवं तथ्यों का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। अध्ययन विषय से सम्बंधित अधिकतम वास्तविक सूचनाओं एवं तथ्यों का सफल एकत्रीकरण अनुसंधान की सफलता का मुख्य निर्धारक है। तथ्य संग्रहण के स्रोत के अर्न्तगत वह सभी भौतिक सूचनाएं अथवा आँकड़े, सम्मिलित किए जाते हैं जिन्हें अध्ययन क्षेत्र में जाकर तत्संबंधी इकाइयों अथवा उत्तरदाताओं से प्राप्त करना होता है।

12.2 तथ्य का अर्थ एवं परिभाशा

अवधारणा के भांति तथ्य भी सामाजिक अनुसंधान में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। विज्ञान तथ्यों के आधार पर आगे बढते हैं क्योंकि सामाजिक विज्ञान सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है। अर्थात वैज्ञानिक ज्ञान की सीमाओं के विस्तार हेतु "ाोध प्रयतनों के आधार पर संकलित की गई साधारण सी लगने वाली छोटी छोटी सूचनाएं भी काफी लाभदायक होती है। इन्ही संकलित सूचनाओं को तथ्य या सामग्री के नाम से पुकारते हैं। ऐसे ही तथ्यों के आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाले जाते है तथा नियमों का प्रतिपादन एवं सिद्धांतों का निर्माण किया जाता है। तथ्य संकलन से ही घटनाओं के कार्य कारण संबंध को जाना जा सकता है, गारण प्रभाव संबंधों का पता लगाया जा सकता है। अमेरिकन "ाब्दकोष के आधार पर तथ्य का अर्थ का तात्पर्य जो घटना वास्तव में घटित हुई है, जो कृछ घटा है, उसे तथ्य कहते हैं। तथ्यों को एकत्रित करने के सम्बंध में **कार्ल पियर्सन (1911)**[8] का कथन है कि ''सत्य तक पहुँचने का कोई संक्षिप्त मार्ग नहीं है। वि"व की घटनाओं के बारे में ज्ञान अर्जित करने के लिए वैज्ञानिक अध्ययन के द्वार से गुजरने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है।''

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि तथ्य का तात्पर्य ऐसे समस्त सूचनाओं, सामग्री व आंकड़ों से है जो क्षेत्रीय कार्य और द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से प्राप्त किये जाते है।

सामाजिक "ाोध के क्षेत्र में "ाोधकर्ता मुख्यतः दो प्रकार के तथ्यों का संकलन करता है।

1. प्राथमिक तथ्य
2. द्वितीयक तथ्य

12.3 प्राथमिक तथ्य

प्राथमिक तथ्य वे मौलिक सूचनाएं हैं जिन्हे अनुसंधानकर्ता प्रथम बार स्वयं मूल्य तथ्यों या सूचनाओं को प्राप्त करता है। एक अनुसंधानकर्ता वास्तविक अध्ययन स्थल में जाकर विषय या समस्या से सम्बन्धित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अथवा अनुसूची या प्र"नावली की सहायता से आव"यकतानुसार तथ्यों को एकत्रित करता है। यह कहा जा सकता है कि जो तथ्य पूर्णतया नवीन होते हैं और किसी भी विधि द्वारा तथ्यों का संकलन क्षेत्र में जाकर स्वयं अनुसंधानकर्ता द्वारा किया जाता है उसे हम प्राथमिक तथ्य कहते हैं। इसे क्षेत्रीय सामग्री भी कहा जाता है। सामाजिक सर्वेक्षणों में द्वितीयक तथ्यों की अपेक्षा प्राथमिक तथ्यों पर अधिक प्रयोग किया जाता है क्योकि इसका मुख्य कारण सामजिक घटनाओं की परिवर्तन"ाीलता है।

12.4 प्राथमिक सामग्री के संकलन के स्रोत

प्राथमिक तथ्यों को जिन स्रोतों द्वारा एकत्रित किया जाता है, उन्हें प्राथमिक या क्षेत्रीय स्रोत कहते हैं। **पी0 वी0 यंग के अनुसार** प्राथमिक स्रोतों का तात्पर्य उन सभी मौलिक सूचनाओं अथवा आंकड़ों से है जिन्हें स्वयं अनुसंधानकर्ता प्राथमिक स्रोतों द्वारा प्राप्त करता है।'' इस संदर्भ में **पीटर मान** ने प्राथमिक स्रोत को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''प्राथमिक स्रोत वे स्रोत हैं जा प्राथमिक स्तर पर हमें विभिन्न प्रकार की आधार सामग्री प्रदान करते हैं।'' इन दोनो परिभाषाओं के आधार पर यह स्पष्ट रूप

से कहा जा सकता है कि प्राथमिक स्रोत वे साधन हैं जो अध्ययनकर्ता एवं उत्तरदाता के बीच में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके मौलिक सूचनाओं को एकत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। पी0 वी0 यंग ने प्राथमिक स्रोत को दो उप–भागों में विभाजित किया।

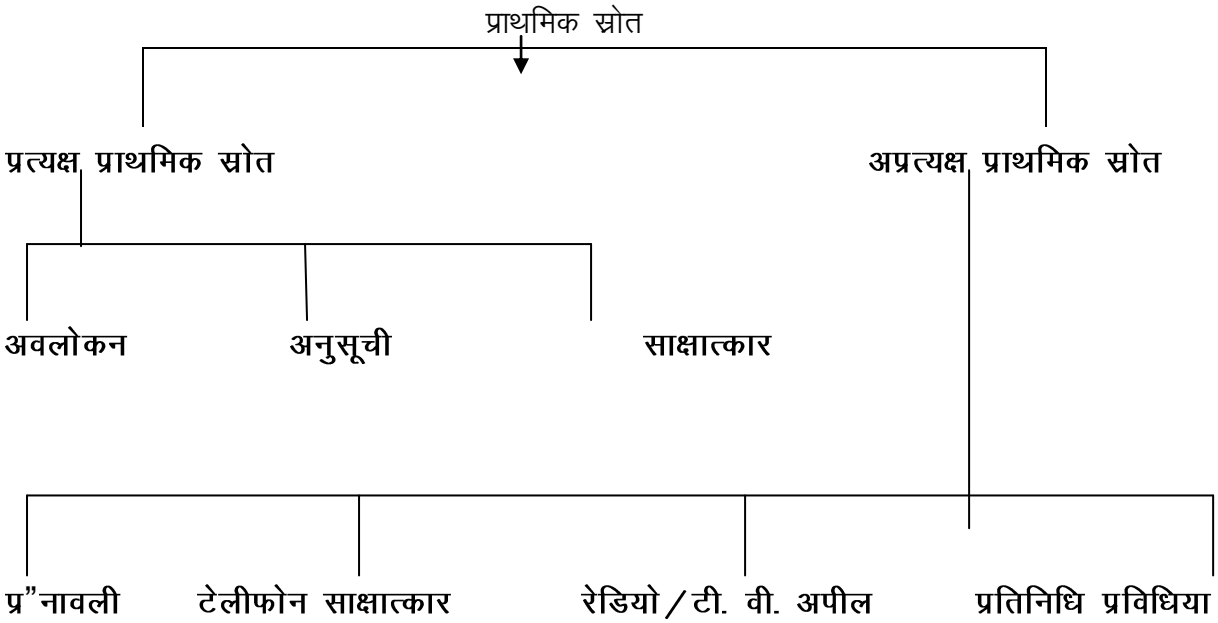

बोध प्रश्न–1

(i)- प्राथमिक तथ्य से आप क्या समझते है, तीन पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए?

.....

.....

.....

12.4.1 प्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत

प्रत्यक्ष स्रोत का तात्पर्य है कि अध्ययनकर्ता घटनाओं का स्वयं अवलोकन करके उनका संग्रह करता है अथवा अनुसूची के आधार पर उत्तरदाताओं से सम्पर्क सीापित विभिन्न प्रकार की सामग्री को एकत्रित करते हैं।

प्रत्यक्ष स्रोत की प्रविधियां– प्रत्यक्ष स्रोत में अनुसंधानकर्ता द्वारा कुछ प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है, जैसे कि अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची आदि। इन प्रविधियों के माध्यम से अध्ययनकर्ता प्रसथमिक तथ्य संकलित करता है। ये प्रविधियां जिनके द्वारा प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करता है, उन्हें हम सामग्री संकलन के प्रत्यक्ष स्रोत कहते हैं। पी0 वी0 यंग के अनुसार प्राथमिक सूचना के स्रोत निम्नलिखित हैं।

(i) अवलोकन– सामाजिक अनुसंधान की सर्वाधिक प्रचलित और प्राच्य प्रविधि अवलोकन के नाम से जानी जाती है। यह मानव द्वारा सहज ही में की जाने वाली एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत वह अपने आस–पास के पर्यावरण में घटित होने वाली क्रियाओं एवम् घटनाओं का सूक्ष्म या स्थूल अवलोकन करता रहता है। यह सभी ज्ञान–विज्ञान के प्रस्फुटन का एक महत्वपूर्ण आधार है उदाहरण स्वरूप न्यूटन

के द्वारा गुरूत्वाकर्षण का नियम और मैडम क्यूरी द्वारा रेडियोधर्मिता के सिद्धान्त को अवलोकन विधि के द्वारा ही अन्वेषित किया गया।

अवलोकन का अर्थ तथा परिभाषा– अवलोकन तथ्य संकलन की एक विधि है, जिसमें दृष्टि आधारित सामग्री संग्रह होता है। यह एक साधन प्रक्रिया है जिसमें कानों तथा ध्वनि की तुलना में नेत्रों का प्रयोग निहित होता है। यह विधि घटनाएं कैसे घटित होती है, उनका घटने का क्रम कारण तथा प्रभावों और उनके पारस्परिक संबंधों को देखती है और उन्हें आलेखित करती है। अवलोकन शब्द अंग्रेजी शब्द आब्जरवे"ान (observation) का पर्याय है। शाब्दिक दृष्टि से इसका अर्थ है निरीक्षण करना, देखना, विचार करना। यह आब्जर्व शब्द से बना हुआ है जिसका अर्थ परीक्षा करना, ध्यान देना आदि। इस प्रकार इसका सीधा अर्थ है आँखों से देखना। सामान्य शब्दों में अवलोकन का तात्पर्य हे कि किसी वि"ोष विषय से संबंधित घटनाओं को व्यवस्थित रूप से देखना तथा घटनाओं के कार्य कारण संबंध को समझाना। किन्तु सामाजिक अनुसंधान की एक व्यवस्थित पद्धति के रूप में अवलोकन का अपना एक पृथक अर्थ है।

पो0 गुडे एवं हॉट के अनुसार, ''विज्ञान अवलोकन से प्रारम्भ होता है तथा उसे सत्यापन के लिए अन्ततः आवश्यक रूप से अवलोकन पर ही पुनः लौटना पड़ता है।

पी० वी० यंग के अनुसार "घटनाओं को स्वतः घटित होने के समय आँखों द्वारा एक व्यक्ति तथा सुविचारित रूप से अध्ययन करने को अवलोकन कहते हैं। " उपरोक्त परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि, अवलोकन की प्रक्रिया में नेत्रों का मुख्य रूप से प्रयोग होता है। असामाजिक अनुसंधान में द्वैतीयक स्रोतो का भी उतना ही महत्व होता है जितना कि तथ्य संकलन में प्राथमिक स्रोतों का है।

उपरोक्त परिभाषाओं से इस बात की पुष्टि होती है कि, अनुसंधान–सामग्री संग्रह करते समय प्राथमिक सूचनाओं को एकत्र करने हेतु अवलोकन प्रविधि एक प्रत्यक्ष और मुख्य विधि है। अवलोकन प्रणाली के अन्तर्गत अनुसंधानकर्त्ता घटनाओं को प्रत्यक्षतः नेत्रों की सहायता से देखता है, श्रवण करता है और जो कुछ भी ग्रहण करता है, उस समस्त सामग्री का संचयन करता है। इस प्रकार दृष्य एवम् श्रव्य दोनों प्रक्रियाओं द्वारा अवलोकनकर्त्ता प्रत्यक्ष एवम् अप्रत्यक्ष, दोनों ही प्रकार से अवलोकन की क्रिया कर सकता है। पर यह आवष्यक है कि, सभी स्थितियों मे अवलोकन की प्रक्रिया का व्यवस्थित रीति से किया जाना अनिवार्य है।

अवलोकन के प्रकार –समाज में घटित होने वाली घटनाओं की विविधता को दृष्टिगत रखते हुए अवलोकन को केवल एक विधि के माध्यम से क्रियान्वित किया जा सकता है। सामाजिक घटनाओं की जटिलता को समझने हेतु अवलोकन के अनेक प्रकारों का निर्माण हुआ, जिनको इस प्रकार प्रदर्षित किया जा सकता है–

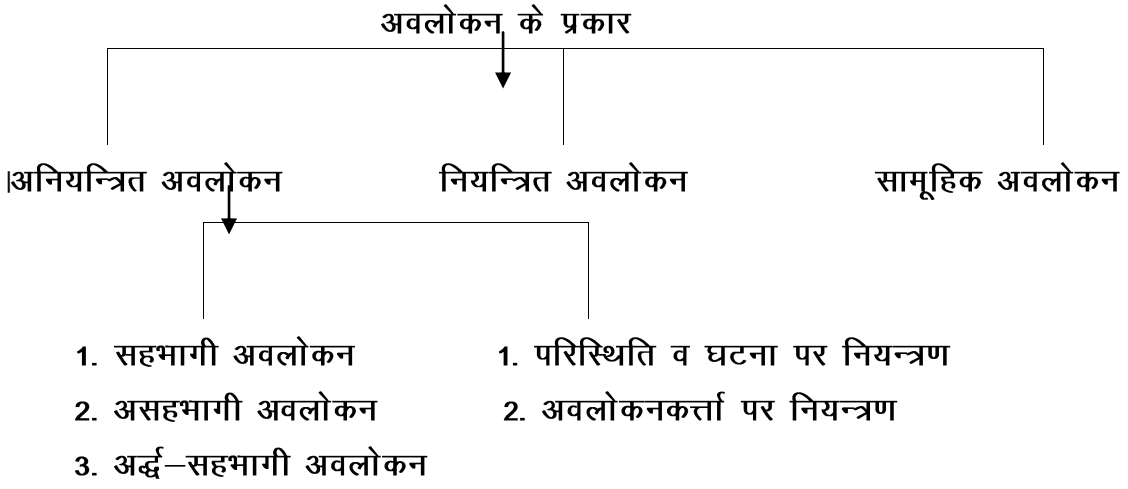

1. अनियन्त्रित अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा – जब अवलोकन इस प्रकार किया जाए कि अध्ययन–विषय या अनुसंधानकर्त्ता पर अवलोकन की प्रक्रियान्तर्गत कोई नियन्त्रण करने का प्रयास न किया जाए, तब इसे अनियन्त्रित अवलोकन के नाम से सम्बोधित किया जाता है। घटनाओं को उनके प्राकृतिक एवम् यथार्थ स्वरूप में अध्ययन करना इस प्रविधि का अभिप्रेत होता है। यह अनौपचारिक रूप से नियोजित और साधारण संरचना युक्त होता है। गुडे एवम् हाट ने इसे साधारण अवलोकन की संज्ञा प्रदान की।

जहोदा एवम् कुक द्वारा इसे असंरचित अवलोकन कहा गया है। **पी वी यंग** के अनुसार अनियन्त्रित अवलोकन में हम वास्तविक जीवन से सम्बन्धित परिस्थितियों की सतर्कतापूर्वक जाँच करते हैं। इस अवलोकन में वास्तविकता उत्पन्न करने वाले यन्त्रों को प्रयुक्त किया जाता है और निरीक्षित घटना की जाँच करने का कोई प्रयास नहीं किया जाता।

उक्त परिभाषा से अनियन्त्रित अवलोकन की तीन विशेषताएं स्पष्ट होती हैं–

1) अनुसंधानकर्त्ता या अध्ययनकर्त्ता पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखा जाता।

2) परिस्थितियों या घटनाओं का प्राकृतिक रूप से अध्ययन करता है एवम्

3) इस विधि में अनुसंधानकर्त्ता द्वारा घटनाओं की शुद्धता को अन्वेषित करने का प्रयत्न नहीं किया जाता।

अनियन्त्रित अवलोकन की प्रकृतिगत विशेषताओं को दृष्टिगत रखते हुए इसे मुख्यतया निम्न स्वरूपों में विभाजित किया गया है–

क. सहभागी अवलोकन– अवलोकन की इस प्रणाली के अन्तर्गत अध्ययनकर्त्ता पहले स्वयं अवलोकन हेतु चयनित समूह का एक सदस्य बन जाता है तत्पश्चात् समूह के सदस्य रूप में ही सबके साथ मिलकर रहते हुए उस समुदाय अथवा समूह की दिन–प्रतिदिन के व्यवहारों और अन्य कार्यों, व्यवस्थाओं एवम् क्रियाकलापों में सक्रिय प्रतिभागिता करता है और साथ ही साथ उनका निरीक्षण करते हुए अध्ययनकार्य की सामग्री संकलित करता है। उस समूह या समुदाय के सदस्यों को अध्ययनकर्त्ता का वास्तविक उद्देश्य ज्ञात नहीं होता।

अर्थ एवम् परिभाषा– सहभागी अवलोकन को कई समाजशास्त्रियों और मानवशास्त्रियों द्वारा प्रयुक्त किया गया है। प्रसिद्ध भारतीय समाजशास्त्री एम एन श्रीनिवास द्वारा मैसूर में संस्कृतीकरण की प्रक्रिया का अध्ययन करने हेतु इस विधि को माध्यम बनाया गया। इसी क्रम में तंजौर गांव के ग्रामीण क्षेत्रों में वर्ग प्रस्थिति और शक्ति को आधार मानते हुए सामाजिक असमानता का आन्द्रे बेतई द्वारा अध्ययन इस विधि का प्रयोग करते हुए किया गया। इसके अतिरिक्त जॉन हॉवर्ड द्वारा कैदियों, लीप्ले तथा बूथ द्वारा श्रमिक परिवारों और नेल्स एण्डसन द्वारा होबो समुदाय के व्यक्तियों पर किए गए अध्ययनों में भी सहभागी अवलोकन विधि की सहायता ली गई। सर्वप्रथम **लिण्डमैन** द्वारा सन् 1924 में अपनी पुस्तक '**सोशियल डिस्कवरी**' में सहभागी अवलोकन शब्द को प्रयुक्त किया गया।

गुडे एवम् हाट ने सहभागी अवलोकन कों इस प्रकार स्पष्ट किया है "इस कार्य प्रणाली का प्रयोग उस समय किया जाता है जबकि अनुसंधानकर्त्ता अपने को समूह के सदस्य के रूप में स्वीकृत हो जाने योग्य बना लेता है। "

लुण्डबर्ग के अनुसार ''अवलोकनकर्त्ता अवलोकित समूह के प्रति यथासंभव पूर्णतया घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करता है अर्थात् वह समुदाय में बस जाता है तथा उस समूह के दैनिक जीवन में भाग लेता है।''

उपरोक्त परिभाषाएं इस तथ्य को रेखांकित करती हैं कि सहभागी अवलोकन में अवलोकन करने वाला चयनित समूह का एक भाग बनकर उसमें वास करते हुए तथ्यों को एकत्र करता है।

ख–असहभागी अवलोकन– असहभागी अवलोकन के अन्तर्गत चयनित अध्ययन–समूह का स्थायी सदस्य न बनकर अवलोकनकर्त्ता समूह के बीच केवल उपस्थित रहकर उनकी गतिविधियों में प्रतिभाग नहीं लेता है। वह समूह में दीर्घ अवधि तक निवास न करके केवल अवलोकन करता है। वह उनके क्रियाकलापों को मौन रहकर देखता है और गहनतापूर्वक तथ्यों के विषय में जानकारी प्राप्त करता है। अवलोकनकर्त्ता यह अवलोकन उन्हें बिना सूचित किए घटनाओं के घटित होने के समय उपस्थित होकर उनके व्यवहारों का अध्ययन कर सूचनाओं को संकलित कर लेता है। ऐसी अनेक परिस्थितियाँ सामाजिक जीवन में घटित होती हैं जोकि, सहभागी अवलोकन द्वारा नहीं ज्ञात की जा सकती अपितु वहाँ अवलोकन की असहभागी प्रविधि ही सर्वथा उपयुक्त होती है। परन्तु पूर्ण रूप से असहभागी अवलोकन करना असंभव है।

ग. अर्द्धसहभागी अवलोकन– इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता है कि, पूर्णतया सहभागी अथवा असहभागी अवलोकन करना सम्भव नहीं है। इसकी सीमाओं को देखते हुए गुडे एवम् हाट ने अर्द्ध सहभागी अवलोकन का सुझााव सामने रखा जोकि, दोनों प्रविधियों की सीमाओं के बीच स्थित हो और जिसमें उपरोक्त दोनों प्रविधियों की विशेषताऐं विद्यमान हों।

अर्द्ध सहभागी आन्दोलन के अन्तर्गत अवलोकनकर्त्ता उस समूह की कुछ दिन–प्रतिदिन की क्रियाओं का अंग बनता है, जिसका चयन अध्ययन हेतु किया गया हो। परन्तु समूह के विशेष सांस्कृतिक उत्सवों, संस्कारों , घटनाओं और समारोहों में वह भाग न लेकर दूर से उनका अवलोकन कर अध्ययन करता है। यह अवलोकन सहभागी व असहभागी दोनों प्रकार के अवलोकनों के गुणों से समन्वित होता है और दोनों के लाभ प्रदान कर सकता है।

बोध प्रश्न–2

(i)- सहभागी अवलोकन से आप क्या समझते है, पाँच पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

(ii) अनुसूची–अनुसूची सूचना एकत्र करने की आधुनिक विधियों में से एक प्रमुख विधि हैं, जिसके अन्तर्गत उत्तरदाताओं के समक्ष कुछ चयनित प्र"नों को प्रस्तुत किया जाता है और उनके उत्तरों के माध्यम से प्राप्त जानकारी के द्वारा अध्ययन कार्य को प्रमाणिक बनाने का प्रयत्न किया जाता हैं। यह मुख्यतः प्राथमिक सूचनाएं एकत्र करने की एक महत्वपूर्ण प्रविधि हैं। यह प्राथमिक तथ्य प्राप्त करने का एक वि"वसनीय और उपयोगी माध्यम हैं क्योकि, अनुसूची में किसी समस्या को प्रत्यक्ष तौर पर अवलोकन करते हुए सूचनाओं का संकलन किया जाता हैं। अनेक आधुनिक विधियों और यन्त्रों द्वारा सूचना प्रदान करने वालों से सामग्री संग्रहीत की जाती हैं, अनुसूची भी एक ऐसा ही यंत्र है जो कि अपनी वि"वसनीयता के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण विधि हैं।

अध्ययनकर्त्ता के द्वारा उत्तरदाताओं के समीप जाकर स्वयं सूचना एकत्र करने हेतु सर्वप्रथम एक सूची जिसमें अनेक प्र"नों को पहले से नि"चत करने लिखित रुप में सुरक्षित कर लिया जाता हैं और इन प्र"नों के उत्तर को स्वंय ही शोधकर्ता द्वारा भरा जाता हैं। यह साक्षात्कार का एक सरल माध्यम है जिसमें आमने सामने बैठकर सूचना एकत्र करनी होती है और इसे सूचनादाताओं को डाक के द्वारा नहीं भेजा जाता हैं। इस दृष्टि से प्र"नावली भी एक प्रकार की अनुसूची ही होती हैं यद्यपि दोनो के प्रयोग करने के तरीके में अन्तर निहित हैं। प्र"नावली विधि का प्रयोग तब किया जाता है जब सूचनाओं को विस्तृत क्षेत्र से एकत्र करना होता हैं, ऐसी स्थिति में प्र"नावली को डाक के द्वारा भी भेजा जाता हैं। जब सूचनाएं समीप स्थित क्षेत्र से एकत्र करनी होती हैं तब अनुसूची को प्रयोग करते हुए स्वंय उस क्षेत्र में जाकर अध्ययन से सम्बन्धित सूचना की प्राप्ति की जाती हैं।

गुडे तथा हाट के अनुसार अनुसूची प्र"नों के एक समूह के लिए प्रयुक्त किया जाने वाला नाम है जो साक्षात्कार करने वाले के द्वारा अन्य व्यक्तियों से आमने सामने की स्थिति में पूछा और पूर्ण किया जाता हैं।

बोगार्डस के अनुसार संक्षिप्त प्र"नों की रचना को अनुसूची कहते है जिसे सामान्यतः सर्वेक्षणकर्त्ता अपने पास रखता हैं और अपने अन्वेषण कार्य में आगे बढ़ने के साथ साथ उसे पूर्ण करता जाता हैं।

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि अनुसूची अनेकानेक प्र"नों से युक्त ऐसी सूची है जिसमें व्यवस्था और नि"चत क्रम आदि गुण समाहित होते हैं। उत्तरदाताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित कर साक्षात्कार की प्रक्रिया के माध्यम से अध्ययनकर्त्ता द्वारा सूचनाओं का संकलन अनुसूची का उपयोग करके किया जाता हैं।

अनुसूची के प्रकार– अध्ययनकर्ता के द्वारा चयनित अध्ययन एवम् कार्य–क्षेत्र की प्रकृति–वि"ोष एवम् कार्य के उद्दे"यों और लक्षित समूह में भेद होने के कारण उनके निमित्त निर्मित अनुसूचियों के प्रकारों में भी भिन्नता परिलक्षित होती हैं। उपरोक्त भिन्नताओं को दृष्टिगत रखते हुऐ भिन्न भिन्न प्रकार की बनी हुई अनुसूचियों को अध्ययन की सुविधानुसार अधोलिखित भागों में बॉटा जा सकता हैं लुण्डबर्ग ने अनुसूचियों को तीन मुख्य भागों में विभक्त किया हैं।

1. ऐसी अनुसूचियां जिनके अन्तर्गत अभिवृत्तियों तथा मतों का निर्धारण और उनकी माप की गई हो।
2. ऐसी अनुसूचियां जो कि वस्तुनिष्ठ तथ्यों का आलेख करने हेतु प्रयुक्त हो।
3. ऐसी अनुसूचियां जो सामाजिक संगठनों तथा संस्थाओं की स्थिति और कार्यो की जानकारी रखने से सम्बन्धित हैं।

पी0 वी0 यंग ने अनुसूची को 5 भागों में विभाजित किया हैं।

1. अवलोकन अनुसूची
2. साक्षात्कार अनुसूची
3. मूल्यांकन अनुसूची
4. प्रलेख अनुसूची
5. संस्था सर्वेक्षण अनुसूची

उपरोक्त विद्वानों द्वारा उल्लिखित अनुसूची के प्रकारों को आधार मानते हुए अनुसूची को पॉच प्रमुख भागों में बॉटा जा सकता हैः–

1. **अवलोकन अनुसूची**– सामाजिक अनुसंधान की एक प्रमुख पद्धति है अवलोकन। अनुसूची के इस प्रकार के अन्तर्गत प्र"नों का पहले से निर्धारण नहीं किया जाता हैं। अवलोकन अनुसूची का मुख्य लक्ष्य अध्ययन किये जाने वाले विषय से सम्बन्धित पक्षों को अधिक स्पष्ट करना होता हैं। इस प्रकार की

अनुसूची के अन्तर्गत प्र"नों के उत्तर न प्राप्त कर, प्रत्यक्ष रुप में स्वयं वस्तुस्थिति का आकलन और विष्ले"णकरके सूचनाओं को एकत्र कर लिया जाता हैं। अतः अवलोकन अनुसूची में सूचनादाताओं से पूछकर सामग्री का संग्रह न करके प्रत्यक्ष अवलोकन के द्वारा सूचना संग्रहण कर लिया जाता हैं।

2. **साक्षात्कार अनुसूची**– इस अनुसूची के अन्तर्गत उत्तरादाताओं से साक्षात्कार के द्वारा सूचना एकत्र की जाती हैं। जब तथ्यों की विस्मृति की सम्भावना अधिक हो तथा आँकड़ों की प्रकृति गुणात्मक हो, तब ऐसी स्थिति में साक्षात्कार अनुसूची को प्रयुक्त किया जाता हैं। यह अनुसूची साक्षात्कार के लिए प्रयोग की जाती हैं। सामाजिक अनुसंधानों में यह पद्धति वि"ोष रुप से प्रचार में हैं। साक्षात्कार अनुसूची को बनाते समय अध्ययन विषय के समस्त संभावित पक्षों को समन्वित करते हुए तत्सम्बन्धी प्र"नों को इसमें इस प्रकार समाविष्ट कर लिया जाता है कि सभी प्रकार के आँकड़े स्पष्ट रुप में प्राप्त हो सकें। इसमें प्र"नों का निर्धारण करने के प"चात् प्रत्येक प्र"न के समक्ष रिक्त स्थान होता हैं जिसकी पूर्ति साक्षात्कारकर्त्ता के द्वारा स्वयं सुव्यवस्थित रीति से की जाती हैं। तथ्यों को वर्गीकृत करने और उनका सारणीयन करने हेतु यह विधि सर्वाधिक लाभप्रद सिद्ध होती हैं, यही इसका सबसे बड़ा गुण हैं।

3. **संस्था सर्वेक्षण अनुसूची**:– विभिन्न संस्थाओं यथा धर्म, परिवार विवाह, ि"ाक्षा आदि के विविध पक्षों को मूल्यांकित करने हेतु संस्था सर्वेक्षण अनुसूची को प्रयुक्त किया जाता हैं। इसके नाम से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि, जिन अनुसूचियों के माध्यम से किसी संस्था वि"ोष का मूल्यांकन करने का प्रयत्न किया जाता हैं, वह संस्था सर्वेक्षण अनुसूची कहलाती हैं। जितने जटिल प्रकार की संस्था को सर्वेक्षण हेतु चयनित किया जाएगा उसके निमित्त निर्मित अनुसूची को भी तुलनात्मक रुप से विस्तृत आकार युक्त बनाया जाता हैं।

4. **प्रलेख अनुसूची** :– प्रलेख अनुसूची के अन्तर्गत ऐसी अनुसूची निर्मित करते है जिसे व्यक्तिगत जीवन अध्ययन पद्धति की सहायता से सामाजिक अनुसंधान में प्रयोग किया जाता हैं। प्रलेख अनुसूची में अन्य अनुसूचियों से कुछ भिन्न होती है, क्योकि, इसमें अन्य अनुसूचियों की भॉति आँकड़े या सूचनाएं प्राप्त करने हेतु प्र"न बनाने का प्रावधान नहीं होता हैं अपितु अनेकानेक प्रलेख अनुसूची का उपयोग अधिकतर ऐतिहासिक, विकासात्मक तथा सर्वेक्षण प्रकार के अनुसंधानों में सामग्री प्राप्ति हेतु किया जाता हैं। पत्रों, अभिलेखों, पुस्तकों, पुस्तिकाओं एवं पत्रिकाओं के अध्ययन द्वारा प्राप्त सूचनाओं, सामग्री और आँकड़ों के आधार पर सूचनाओं का संग्रहण कर लिया जाता हैं।

5. **मूल्यांकन अनुसूची**:– जब अनुसूची को मुख्य आधार बनाकर मूल्यांकन, गुण निर्धारण तथा उसकी तुलनात्मक समता को निर्धारित किया जाता है तब मूल्यांकन अनुसूची प्रयुक्त होती है। जब अध्ययन कार्य का विषय क्षेत्र अभिवृत्ति, मत, प्रथा, फै"ान इत्यादि के अन्तर्गत आता हो तब मूल्यांकन अनुसूची सफलतापूर्वक प्रयोग में लाई जाती हैं।

मूल्यांकन अनुसूची के अन्तर्गत अध्ययन हेतु चयनित समस्या अथवा घटना को निर्धारक करने वाले चरों या कारकों के मूल्य को सुनि"चित या उनको मूल्यांकित किए जाने का कार्य संपादित किया जाता हैं। यथा परिवार नियोजन, सामुदायिक विकास और विद्यालय संगम इत्यादि के सम्बन्ध में समाज के व्यक्तियों का मत व दृष्टिकोण जानने और समझने हेतु इस अनुसूची को आसानी से प्रयोग किया जाना सम्भव हैं।

(iii) साक्षात्कार– जिन सामाजिक समस्याओं का सर्वपक्षीय अध्ययन प्रायः अवलोकन प्रविधि से सम्भव नहीं हो पाता है, अनका अध्ययन सूचनादाताओं के साक्षात्कार के माध्यम से उत्तरदाताओं की मनोवृत्तियों एवं प्रवृत्तियों इत्यादि की वास्तविक जानकारी भी प्राप्त होती है, साथ ही "ोधकर्ता तथ्यों से

भिज्ञ हो जाता है। इस विधि के द्वारा अध्ययनकर्ता तथा सूचनादाता के बीच आमने–सामने की स्थिति उत्पन्न होती है जो परस्पर सूचनाओं के आदान–प्रदान में सहायक होती है।

पी० वी० यंग (1960) के अनुसार ''अनुसंधानकर्ता कल्पनात्मक रूप से सूचनादाता के जीवन में प्रवे"ा करता है तथा उसके जीवन के भूत, वर्तमान तथा भविष्यकाल की सूचना एकत्र करता है।''

लिंडसे गार्डनर (1968) के अनुसार ''साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्ता द्वारा अनुसंधान से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करने के वि"ोष उद्दे"य के लिए चलाया जाने वाला व्यक्तियों का वार्तालाप होता है।'' सभी विद्वानों के द्वारा प्रस्तुत विचारों एवं परिभाषाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट किया जा सकता है कि किसी भी सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में वह अनुसंधान जिनकी प्रकृति वैज्ञानिक होती है, उनके अध्ययन में साक्षात्कार एक महत्वपूर्ण तथा आव"यक यंत्र है।

ध्यातव्य है कि साक्षात्कार की प्रकृति के संबंध में वैज्ञानिकों ने कहा है कि इसमें आमने–सामने बैठकर प्राथमिक तथ्य एकत्रित करने में सहायता मिलती है, वहीं दूसरी तरफ इसका एक महत्वपूर्ण लाभ यह भी है कि साक्षात्कार के समय उत्तरदाता एवं उसके आस–पास के वातावरण व निरीक्षण करने का अवसर भी प्राप्त होता है।

12.4.2 अप्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत

प्राथमिक तथ्यों के संकलन के लिए कभी–कभी अध्ययनकर्ता अध्ययन क्षेत्र में जाये बिना ही अध्ययन सामग्री एकत्रित कर लेता है। पार्टेन ने इसक अंतर्गत रेडियो/टी. वी., अपील, टेलीफोन द्वारा साक्षत्कार तथा प्रतिनिधि प्रविधियों को अप्रत्यक्ष स्रोत माना है। अप्रत्यक्ष स्रोत चार प्रकार के होते हैं। अप्रत्यक्ष स्रोत का तात्पर्य है कि अध्ययनकर्ता विषय से संबंधित व्यक्तियों से स्वयं न मिले लेकिन डाक द्वारा भेजी गयी प्र"नावली, मतपत्र अथवा किसी प्रकार की अपील के द्वारा तथ्यों का संग्रह करने का प्रयत्न करता है।

(i) प्र"नावली

प्र"नावली विधि अनुसंधान कार्य करते समय आँकड़ों का संकलन करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है, जिसका प्रयोग अनुसन्धानकर्ता द्वारा सामाजिक अनुसन्धान करते समय सूचना एकत्र करने हेतु किया जाता है। जब सामाजिक अनुसन्धान करते समय ऐसे अध्ययन क्षेत्र को चयनित किया जाता है। जिसकी प्रकृति व्यापक होती है तब ऐसी स्थिति में अध्ययनकर्त्ता हेतु यह सम्भव नहीं होता कि, वह विस्तृत क्षेत्र में जाकर अनेक व्यक्तियों से व्यक्तिगत और आत्मीय सम्बन्ध स्थापित कर सके। ऐसी स्थिति में प्र"नावली ही वह प्रविधि है जिसके माध्यम से उत्तरदाताओं से प्राथमिक सामग्री का संकलन किया जाता है। प्रस्तुत अध्याय में हम प्र"नावली प्रविधि की प्रकृति, प्रारूप, प्रयोग की विधि और रचना का अध्ययन करेगें।

प्र"नावली का अर्थ और परिभाषा–जब अनेक प्रकार के प्र"नों को एक नि"चित क्रम से सूचीबद्ध कर दिया जाता है तब यह विधि प्र"नावली कही जाती है, इसके अन्तर्गत अध्ययन विषय से सम्बद्ध विभिन्न पहलुओं के विषय में पूर्व निर्धारित/निर्मित प्र"नों को सम्मिलित कर अनुसंधान किया जाता है। अनुसंधानित, विषय के समस्त पक्षों को समेटकर सम्बन्धित विषय की वांछित सूचना व ऑकड़े एकत्र करने में प्र"नावली सहायक होती है। प्र"नावली विधि का प्रयोग अनुसंधानकर्त्ता द्वारा अन्वेषित विषय से सम्बन्धित प्र"नों की सूची को डाक द्वारा उत्तरदाताओं को प्रेषित करके किया जाता है। शोधित विषय के महत्व को उत्तरदाताओं को समझाने हेतु एक व्याख्या पत्र भी डाक द्वारा उत्तरदाताओं को भेजा जाता है। प्र"नावली के माध्यम से संचालित विषय को समझते हुए उत्तरदाताओं द्वारा स्वयं पढकर, समझकर उसके प्र"नों के उत्तर को पूरित कर डाक द्वारा पुनः अनुसंधानकर्त्ता को भेजा जाता है।

अध्ययनकर्त्ता डाक द्वारा प्राप्त प्र"नावली एवं उस पर आधारित उत्तरों से प्राप्त सूचनाओं को व्याख्यातित एवं वि"लेषित कर अनुसंधानित विषय से सम्बन्धित निष्कर्ष निकलता है। अतः अनुसंधान की गुणवत्ता प्र"नावली के प्र"नों एवम प्राप्त उत्तरों की गुणवत्ता पर बहुक कुछ निर्भर करती है।

गुडे तथा हाट के अनुसार ''प्र"नावली एक प्रकार का उत्तर प्राप्ति का साधन है जिसका स्वरुप ऐसा होता है कि, उत्तरदाता उसकी पूर्ति स्वयं करता है।''

लुण्डवर्ग के अनुसार ''मूलतः प्र"नावली प्रेरणाओं का एक समूह है, जिसे ि"ाक्षित लोगों के सम्मुख उन प्रेरणाओं के अन्तर्गत उनके मौखिक व्यवहारों का अवलोकन करने के लिए प्रस्तुत किया जाता है।''

बोगार्डस के अनुसार ''प्र"नावली विभिन्न व्यक्तियों को उत्तर देने के लिए दी गई प्र"नों की एक तालिका है।''

उपरिलिखित परिभाषाओं का सार यह है कि, प्र"नावली विषय से सम्बन्धित आँकड़ों व तथ्यों को एकत्र करने हेतु एक प्रभाव"ाली माध्यम है जो अनुसंधानकर्त्ता एवं उत्तरदाताओं के मध्य प्रत्यक्ष एवं व्यक्तिगत सम्बंधों के आधार पर न बनकर सुदूरवर्ती क्षेत्रों में स्थित उत्तरदाताओं के द्वारा प्र"नावली को भरकर अनुसंधानकर्त्ता को प्रेषित करने के द्वारा क्रियान्वित होती है। उत्तरदताओं द्वारा प्रदत्त उत्तरों के आधार पर व्यवस्थापन की प्रक्रिया एवम आँकड़ों पर आधारित सांख्यिकीय विष्ले"ाणकिया जाता है।

प्र"नावली के प्रकार–लुण्डवर्ग ने प्र"नवली को मुख्यतः दो प्रकारों में विभाजित किया है।

1. **तथ्य संबन्धी प्र"नावलीः**– जिस प्र"नावली के निर्माण का मुख्य उददे"य किसी समूह वि"ोष की सामाजिक–आर्थिक पक्षों से सम्बन्धित सूचना–सामग्री व तथ्यों का संकलन करना होता है, वह तथ्य सम्बन्धी प्र"नावली कहलाती है।
2. **मत और मनोवृत्ति सम्बन्धी प्र"नावलीः**– जिस प्र"नावली का लक्ष्य किसी विषय वि"ोष पर उत्तरदाताओं के अंतर्मन में विद्यमान विचारों, रुचियों अथवा अभिवृत्तियों को ज्ञात करना होता है वह मत और मनोवृत्ति सम्बन्धी प्र"नावली कहलाती है।

पी. वी. यंग ने भी प्र"नावली के दो प्रकारों को उल्लिखित किया हैः–

1. **संरचित प्र"नावलीः**– जब शोधकार्य में प्रयुक्त करने हेतु प्र"नावली को पहले से ही निर्मित कर लिया जाता है तब इसे संरचित प्र"नावली कहते हैं। इस प्रकार की प्र"नावली में अधिकां"ातया किसी प्रकार के परिवर्तन की संभावना नहीं रहती है। संरचित प्र"नावली वि"ाल क्षेत्र में फैले व्यक्तियों से उत्तर प्राप्त कर प्राथमिक तथ्यों व आँकडों को एकत्र करने के प"चात् संग्रहीत तथ्यों का पुर्नविष्ले"ाणकरने में उपयोगी होती है। इसमें संकलित प्र"नों की प्रकृति स्पष्ट, पूर्व–निर्धारित और एक वि"ोष क्रमानुसार होती है जिसके परिणामस्वरुप प्र"नावली प्रत्येक उत्तरदाता के लिए बोधगम्य और एकसमान होती है।
2. **असंरचित प्र"नावलीः**– असंरचित प्र"नावली के अन्तगर्त अध्ययन–विषय के विषय में सूचनाएं एकत्र करने हेतु पूर्व निर्धारित प्र"नों को समाविष्ट नहीं किया जाता है अपितु अनुसंधानित विषय का केवल उल्लेख कर उसे स्पष्ट कर दिया जाता है। अनुसंधान कार्य करते समय यह अनुसंधानकर्त्ता एवं उत्तरदाता का अपेक्षित सूचनाओं को एकत्र करने हेतु मार्ग–निद"ान का कार्य करती है।
3. **खुली प्र"नावलीः**– खुली प्र"नावली के अन्तर्गत सूचनादाता व्यक्ति को इतनी स्वतन्त्रता प्राप्त होती है कि, वह प्र"नों को पढ़कर उसके सम्बन्ध में अपने व्यक्तिगत विचारों को अपने शब्दों में प्रकट कर सके। खुली प्र"नावली में प्रत्येक प्र"न के रिक्त स्थान दिया गया होता है, जिससे कि, उत्तरदाता व्यक्ति उस रिक्त स्थान की पूर्ति अपने विचारानुसार करने हेतु युक्त होता है।

4. प्रतिबन्धित/बन्द प्र"नावली:– बन्द प्र"नावली में खुली प्र"नावली के विपरीत प्रत्येक प्र"न के सम्मुख प्र"न से संबन्धित कुछ सम्भावित उत्तरों को पहले से ही निर्धारित करके अंकित कर दिया जाता है जिससे यह स्पष्ट होता है कि, उत्तरदाता को अपना व्यक्तिगत मत अपने शब्दानुसार न व्यक्त करके दिए गए सम्भावित उत्तरों में से एक चुनकर अपने मत को प्रकट करना होता है। अर्थात सूचनादाता द्वारा प्रदत्त सूचना नियन्त्रित होती है, मुक्त नहीं।

उदाहरण–परिवार के सदस्यों द्वारा सहयोग किस रूप में दिया जाता है–

1. उत्पादन कार्यों में
2. बाजार में
3. गृह कार्यों में
4. बच्चों की देखभाल में
5. कोई अन्य

प्राप्त आकड़ों को सांख्यिकीय दृष्टि से वि"लेषित करने एवम अनुसंधानकर्ता के उददे"य–पूर्ति में सहायक होने के कारण यह प्र"नावली अनुसंधान कार्य हेतु सुविधाजनक होती है।

5. **चित्रमय प्र"नावली**:– चित्रमय प्र"नावली के अन्तर्गत सीधे प्र"न न देकर प्र"नों को विषयानुसार चित्र रूप में ढालकर क्रमबद्ध रूप में सूची में दिया जाता है, उत्तरदाता को विषय के लिए मौखिक या वाचिक रूप में निर्दे"ा देकर दिए गए चित्रों में से अपना उत्तर चयनित करना होता है। इस प्रविधि का प्रयोग वि"ोष रुप से बालको और अल्प–ि"ाक्षित व्यक्तियों से सूचना प्राप्ति हेतु किया जाता है।

6. **मिश्रित प्र"नावली**:– मिश्रित प्र"नावली के अन्तर्गत एक ही प्रकार प्र"नों के स्थान पर अनेक प्रकृति के प्र"नों का समावे"ा किया जाता है यथा कुछ प्र"नों का उत्तर अपने मतानुसार दिया जाता है और कुछ प्र"नों का उत्तर कुछ सम्भावित उत्तरों में से किसी एक को चयनित करना होता है। बन्द और खुली दोनों प्रकार की प्र"नावली के समन्वय से मिश्रित प्र"नावली का निर्माण होता है।

(ii) **रेडियो अथवा टेलीविजन अपील** : प्राथमिक सामग्री संकलन में रेडियो अथवा टेलीविजन का महत्वपूर्ण स्रोत है वर्तमान में विकसित तथा विकासशील देशों इन उपकरणों का उपयोग किया जाता है। इनके द्वारा किन्हीं विशेष अवसरों पर विभिन्न कार्यक्रमों का प्रसारण करके स्रोताओं से अपील की जाती है कि सम्बन्धित विषय से अपने विचारों अथवा प्रतिक्रियाओं का अमुक पते पर भेज दें इसके फलस्वरूप निश्चित अवधि के अन्दर विषय से सम्बन्धित बहुत अधिक उत्तर प्राप्त हो जाते हैं।

(iii) **टेलीफोन साक्षात्कार** : टेलीफोन साक्षात्कार में सूचनादाताओं से अप्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित कर प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया जाता है वर्तमान समय में महानगरों शहरों तथा विस्तृत क्षेत्र के कारण उनके पास पहुंचना आसान नहीं होता टेलीफोन के द्वारा चुने गये सूचनादाताओं से सम्पर्क स्थापित करके एक विशेष विषय से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करने का प्रयत्न किया जाता है। इनके द्वारा प्राप्त सूचनाओं से प्राप्त निष्कर्षो का सत्यापन करना सम्भव नहीं होता।

(iv) प्रतिनिधि प्रविधियां– इस प्रविधि का प्रयोग विस्तृत अध्ययन क्षेत्र में किया जाता है। इस प्रविधि के अन्तर्गत समग्र में से कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का चयन कर लिया जाता है और यह माना जाता है कि इनके द्वारा दी गई सम्पूर्ण समूह के विचारों, मनोवृत्तियों आदि का प्रतिनिधित्व करेगी।

बोध प्रश्न–3

(i)- प्र"नावली के प्रकारों का संक्षिप्त में उत्तर दीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

12.5 प्राथमिक स्रोत के गुण

तथ्य संकलन के प्राथमिक स्रोतों के गुण इस प्रकार हैं –

1. **विस्तृत एवं गहन सूचनाएं** : प्राथमिक तथ्यों के संकलन में अध्ययनकर्ता उत्तरदाता से सीधे सम्पर्क के माध्यम से सूचनाएं संकलित करता है। अवलोकन विधि में अध्ययनकर्ता सहभागी अवलोकन की सहायता से उस समुदाय या समूह का अभिन्न अंग बनकर अध्ययन विषय के बारे में विस्तृत एवं गहन सूचनाएं प्राप्त कर लेता है।
2. **अध्ययन में लोच के गुण** : चूंकि अध्ययनकर्ता स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाता है इसलिए यदि सामग्री संकलन के समय किसी प्रकार के परिवर्तन की आव"यकता अनुभव की जाती हे तो यह परिवर्तन सम्भव है जिससे निष्कर्ष अधिक प्रभाविक बन सके। यह प्रति परिस्थिति के अनुरूप प्र"नों में भी परिवर्तन करने का अवसर प्रदान करता है।
3. **वस्तुनिश्ठ एवं वि"वसनीय सूचना** : इसके द्वारा प्राप्त तथ्य अधिक यथार्थ एवं वि"वसनीय होते हैं क्योंकि अनुसंधानकर्ता स्वयं उपस्थित होने के कारण सूचनादाताओं पर सामान्यतः नियंत्रण रहता है और वे गलत सूचनाएं नहीं दे पाते। यहां पर प्राप्त सूचनाओं का सत्यापन की संभावना भी रहती है।
4. **समय एवं धन में कम खर्चीली** : प्राथमिक तथ्यों के माध्यम से तथ्यों का संकलन करने पर समय एवं धन दोनों की बचत होती है। इसमें उत्तरदाता एवं अध्ययनकर्ता के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क होने के करण सरलता एवं सहजता से सही एवं यथार्थ सूचनाओं को कम समय में एकत्रित किया जा सकता है।

प्राथमिक स्रोत के दोश

तथ्य संकलन के प्राथमिक स्रोतों में निम्नलिखित दोष हैं–

1. **पक्षपातपूर्ण अध्ययन की सम्भावना** : अध्ययनकर्ता की इसमें प्रमुख भूमिका रहती है। यदि अध्ययनकर्ता अपने व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों को नहीं छोड़ सकता या नियंत्रण पाने में असमर्थ रहता है तो अध्ययन में व्यक्तिगत पक्षपात की पूर्ण सम्भावना रहती है।
2. **वस्तुनिश्ठता में कमी** : प्राथमिक स्रोत द्वारा तथ्य संकलन में सबसे कमी यह है कि इसके अन्तर्गत अध्ययनकर्ता को स्वतंत्रता मिली होती है जो अध्ययन की वस्तुनिष्ठता को प्रभावित करती है क्योंकि अनुसंधानकर्ता तथ्यों को तोड़–मरोड़ कर अपनी सुविधानुसार उनका प्रयोग करता है।
3. **अतीत की घटनाओं के अध्ययन संभव नहीं** : इस स्रोत द्वारा वर्तमान से संबंधित तथ्यों का संकल नही सम्भव है क्योंकि इसमें जीवित व्यक्तियों से सूचनाओं को एकत्रित किया जाता है परंतु इसमें अतीत की घटनाओं का अध्ययन करना सम्भव नहीं है।

प्राथमिक स्रोत की इन कमियों के बावजूद भी यथार्थ एवं वि"वसनीय सूचनाओं के संकलन के लिए प्राथमिक स्रोत की अहम भूमिका का निर्वाह करते हैं।

12.6 द्वितीयक तथ्य एवं स्रोत

द्वितीयक स्रोत या प्रलेखनीय स्रोत वे होते है जो कि प्रकाि"ात या अप्रकाि"ात समस्त लिखित सामग्री का प्रतिनिधित्व करते हैं और जिसके माध्यम से अनुसंधानकर्ता को अपने विषय से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं आंकडें आदि प्राप्त हो जाते है। द्वितीयक तथ्य से अभिप्राय उन सभी सूचनाओं से है जो इस अध्ययन के पूर्व किसी अन्य व्यक्ति या संस्था द्वारा एकत्रित किये गये हों तथा ऐसे विवरणों अथवा प्रलेखों से है जो अध्ययनकर्ता के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति या संगठन द्वारा प्रस्तुत किये जाते गये होते है। पी0 वी0 यंग ने भी द्वितीयक स्रोत के संदर्भ में लिखा है कि '' द्वितीयक स्रोत ऐसे तथ्य प्रदान करने वाले स्रोत होते हैं जो किसी पूर्व स्तर पर प्राथमिक स्रोतों द्वारा आलेखित अथवा संकलित होते हैं तथा जिनका उपयोग करने वाला व्यक्ति उनका संकलन करने वाले व्यक्ति से भिन्न होता है।'' अतः सरल शब्दों में द्वितीयक सामग्री वह है जिसका संकलन एक व्यक्ति करता है और प्रयोग अन्य व्यक्जि भी करता है।किसी भी ऐतिहासिक अध्ययन में द्वितीयक सामग्री का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इनकी प्रकृति बृहत होती है।

द्वितीयक सामगी के संकलन के स्रोत–

द्वितीयक तथ्यों को जिन माध्यमों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है, वे द्वितीयक स्रोत कहलाते हैं। इनके द्वारा प्राथमिक तथ्यों का परीक्षण किया जाता है जिस से अध्ययन की दि"ाा का निर्धारण करने मे सहायक होता है। तथ्य संकलन के द्वितीयक स्रोतों को प्रमुखतः दो भागों में विभाजित किया जाता है –

1. व्यक्तिगत प्रलेख
2. सार्वजनिक प्रलेख

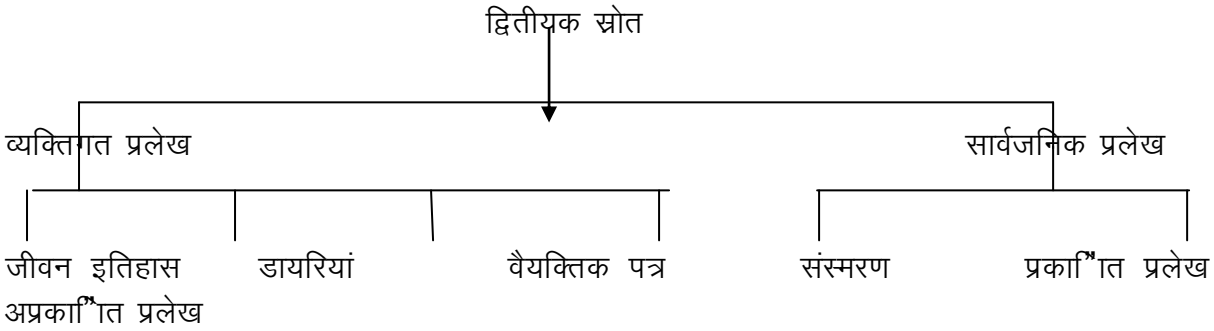

इस पर विचार करने से स्वतः ही स्पष्ट हो जायेगा कि शोधकर्ता किन–किन स्रोतों से द्वितीयक तथ्य एकत्रित कर अपने अध्ययन हेतु उपयोग में ले सकता है।

12.6.1 व्यक्तिगत प्रलेख

प्रत्यक्ष एवं लिखित सामाग्री के रूप में अभिलेखों का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अन्तर्गत व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास सम्बन्धी जानकारी विद्यमान होती है व्यक्तिगत प्रलेख के अन्तर्गत वह सम्पूर्ण लिखित सामग्री या व्यक्ति अपने सम्पूर्ण जीवन में अपने स्वयं के बारे में या सामान्य घटनाओं की वि"ोष प्रकृति के अनुसार लिखित रूप में प्रस्तुत करता है। व्यक्तिगत प्रलेखों से अभिप्राय आत्मकथाओं, डायरियों, पत्रों तथा स्मरण आदि में लिखे गये कुछ लेखों से है इनके निम्न लक्षण हैं–

1. ये लिखित होते हैं।
2. इनकी रचना पूर्णतया लेखक की इच्छानुसार होती है।
3. इनमें लेखक अपने अनुभवों का वृतान्त करता है

अभिलेखों के अन्तर्गत विभिन्न कार्यालयों की कार्यवाही है। आयोगों की कार्यवाही, न्यायालयों के अभिलेख की सामाग्री प्रकाि"ात सामाग्री के अन्तर्गत केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकरों के प्रका"ाासन अनुसंधान संस्थाओं के प्रका"ान, अभिलेख के प्रकार।

(i) **व्यक्तिगत पत्र** : भावपूर्ण अभिलेखों में व्यक्तिगत पत्रों का प्रथम स्थान है इनके माध्यम से व्यक्ति की आन्तरिक भावनाओं को सफलता से ज्ञात किया जा सकता है। पत्र वैयक्तिक होते हैं तथा अध्ययन के दृष्टिकोण से इतिहासकारों तथा लेखकों द्वारा लिखित पत्रों का वि"ोष उपयोग किया गया है। पत्र के माध्यम से व्यक्ति अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करता हैं। अतः इसमें व्यक्ति अपने महत्वपूर्ण विचारों, भावनाओं, जीवन के अनुभव, घृणा, प्रेम, योजनाओं आदि को व्यक्त करता है। उदहारणार्थ भारत के स्वतंत्रता संग्राम के समय दे"ा के बड़े–बड़े नेताओं के जो पत्रचार हुआ था आज उसके आधार पर अनेक महत्वपूर्ण राजनीतिक घटनाओं को समझ सकना सम्भव हुआ है। एक ओर व्यक्तिगत पत्र अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण सामग्री है लेकिन व्यक्तिगत पत्रों को प्राप्त करना कठिन है क्योंकि यह व्यक्तिगत तथा गोपनीय होते हैं साथ ही इनको समझना तथा अर्थ ज्ञात करना एक कठिन प्रक्रिया है। पत्रों की कठिनाइयां किसी सीमा तक पैदा होती हैं पत्र दूसरों को प्रभावित करने की उद्दे"य से लिखे जाते हैं। इसलिए इनमें भी केवल घटनाओं का सत्य वृतान्त नही होता। पत्र की अर्न्तवस्तु लेखक तथा जिसे पत्र लिखा जा रहा उसके बीच के संबंध पर निर्भर करता है। इनके द्वारा व्यक्ति की उन सभी गुप्त सूचनाओं को प्राप्त करते हैं जिन्हें वह स्वयं किसी के समक्ष प्रकट नही करता, किन्तु शोध कार्य की दृष्टि से वे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

(ii) **डायरियां** : डायरियां एक ऐसा व्यक्तिगत प्रलेख है जिसमें एक व्यक्ति अपने दिन प्रतिदिन की घटनाओं को डायरी के रूप में लिखता है इसके अन्तर्गत वह सभी प्रकार के अनुभुतियां या कटु अनुभवों एवं व्यवहारों को स्पष्ट रूप से लिखता है। **जॉन मेज ने लिखा है** '' डायरियां सबसे ज्यादा रहस्योद्घाटन करने वाली होती हैं क्योंकि एक व्यक्ति को इनका जनता के समाने प्रदि"ार्त होने का भय नहीं होता एवं दूसरी और घटनाओं एवं क्रियाओं के घटित एवं संपन्न होने क समय उनको बहुत स्पष्ट रूप में लिख दिया जाता है।'' डायरी व्यक्ति की पूर्णतः गोपनीय दस्तावेज है जिसमें बिना संकोच के नितान्त गोपनीय घटनाओं तथा महत्वपूर्ण तथ्यों को ज्यों का त्यों लिखता है। यही कारण है डायरियां अध्ययन कार्य में काफी सहायक सिद्ध होती हैं। डायरियों द्वारा वास्तविक सूचनाएं मिल जाती हैं क्योंकि इनमें सामान्यतः घटनाओं को यर्थाथ रूप से प्रस्तुत किया जाता है। डायरी गोपनीय एवं वि"वसनीय तथ्यों को प्राप्त करने का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। सामाजिक अनुसंधान में डायरी की कुछ सीमाएं भी हैं व्यक्ति तनाव तथा संघर्ष के समय पर घटनाओं को बहुत विस्तार से प्रस्तुत करता है परन्तु कई महीनों के शान्तिपूर्ण एवं सुखद क्षणों को इनमें उचित मात्रा में स्थान नहीं देता। इसमें क्रमबद्ध विवरण नहीं मिलता। यदि डायरी को प्रकाि"ात करने की लेखक की अप्रकट इच्छा भी है तो उसमें अकल्पना"ाीलता एवं घटनाओं को बढ़ा चढ़ा कर लिखने का भाव आ जाता है। कभी–कभी डायरी प्रका"ानार्थ के उद्दे"य से भी लिखी जाती है और तब उनमें भी प्रभाव उत्पन्न करने के प्रयत्न के कारण विकृति आ जाती है। ऐसे में डायरियों के माध्यम से प्राप्त तथ्यों के आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना कठिन होता है।

(iii) **जीवन इतिहास** : इनका प्रयोग ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ताओं द्वारा किया जाता है जीवन इतिहास किसी व्यक्ति द्वारा स्वयं लिखा जाता है या किसी व्यक्ति के जीवन सम्बन्धी घटनाओं के बारे में अन्य व्यक्ति द्वारा लिखा जाता है। जान मेज इसे परिभाषित करते हुए स्पष्ट करते है कि '' वास्तविक अर्थ में जीवन इतिहास शब्द का तात्पर्य किसी व्यापक आत्मकथा से होता है। परन्तु सामान्य अर्थों में इसका प्रयोग किसी भी जीवन संबंधी सामग्री के लिए किया जा सकता है।'' इसमें किसी महापुरूष के जीवन इतिहास के माध्यम से किसी वि"ोष समय की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा धार्मिक

घटनाओं को समझना भी सम्भव हो जाता है। जीवन इतिहासों से एक वि"ोष काल की सामाजिक परिस्थितियों एवं समस्याओं को भली प्रकार से समझा जा सकता है। सामाजिक अनुसंधान में जीवन इतिहास के अनेक प्रकारों का प्रयोग किया जाता है।

1. **स्वतः लिखित जावन इतिहास**– यह व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से अपने बारे में लिखी लिखी जाती है।
2. **प्रेरित जीवन इतिहास**– आत्मकथा के रूप में यह अभिलेख व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति या किसी सरकारी अथवाा गैर सरकारी संगठन प्ररेणा के फलस्वरूप प्रस्तुत किये जाते है। इसमें व्यक्ति अपने बारे में लिखता है।
3. **संकलित जीवन इतिहास**– इसका तात्पर्य एक ऐसे जीवन इतिहास से है जिसकी रचना एक व्यक्ति द्वारा किसी अन्य महापुरूष के जीवन से संबंधित महत्वपूर्ण घटनाओं अथवा विवरणों को लेकर की जाती है।

जीवन इतिहास व्यक्ति के जीवन की वि"िष्ट घटनाओं का संकलन मात्र नहीं होता है, अपितु यह उस व्यक्ति के काल के सभी सामाजिक पहलुओं को समझाने में मदद करता है। इसके साथ उस समय की सामाजिक समस्या के कारण एवं समाधान को जानकर वर्तमान परिस्थितियों को समझने में सहायक सिद्ध होते हैं। जीवन इतिहास के इस महत्व के प"चात भी सामाजिक अध्ययनों में इनके उपयोग की कुछ सीमायें भी हैं। सच तो यह है कि आत्मकथाएं बहुदा प्रका"ान हेतु लिखी जाती हैं और उनका उद्दे"य प्रचार, सुधार या अपने कार्यों का औचित्य साधन हो सकता है और इससे विकृति आती है। दूसरे आत्मकथाओं में बहुत सी पुरानी घटनाएं होती हैं और जिस समय लेखक द्वारा लिखी जाती हैं हो सकता है कि लेखक को उनके विषय में ठीक से याद न हो लेखक अपने लम्बे जीवन में से कुछ घटनाओं का चयन करता है यह चुनाव उसके विचारों से प्रभावित होता है इन सब कारणों से जीवन इतिहास से प्राप्त ऐतिहासिक जानकारी विकृत हो जाने की सम्भावना बनी रहती है।

(iv) **संस्मरण** : संस्मरण व्यक्ति द्वारास्वयं के जीवन के रोमांचक अनुभव, यात्रा आदि पर लिखे जाते हैं। ये संस्मरण सामाजिक अनुसंधान में तथ्यों को संकलित करने के महत्वपूर्ण प्रति होते हैं। इतिहास में ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं जहॉ संस्मरण अध्ययन के लिये आधारभूत रहे हैं। कोलम्बस, फाहियान, जैसे व्यक्तियों के लिखित सस्मरणों से अत्यधिक उपयोगी सूचनाओं को प्राप्त किया जा सका। ब्रिटि"ा काल में अनेक अधिकारियों द्वारा लिखे जाने वाले जनपद संस्मरण ऐतिहासिक पद्धति के आधार पर लिखे जाने के प"चात भी आज तथ्य संकलन का महत्वपूर्ण स्रोत है।

इनके माध्यम से लोगों के रहन सहन, रीति रिवाजों, धर्म, संस्कृति एवं सम्पूर्ण जीवन विधि आदि को समझने में मदद प्राप्त होती है संस्मरण में कुछ दोष भी व्याप्त हैं वह यह है कि इनमें क्रमबद्धता एवं वस्तुनिष्ठता का अभाव पाया जाता है जिससे यर्थाथ निष्कर्ष प्राप्त करने में कठिनाई होती है इसके प"चात भी संस्मरण जीवन संकलन में द्वैतीयक प्रति के रूप में उपयोगी साबित होते हैं।

बोध प्रश्न–4

(i)- जीवन इतिहास से आप क्या समझते हैं, पाँच पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

12.6.2 सार्वजनिक प्रलेख

सार्वजनिक प्रलेखों के अन्तर्गत ऐसी समस्त प्रकाि"ात तथा अप्रकाि"ात सामाग्री सम्मिलित की जाती है जिसका संकलन किसी सरकारी तथा गैरसरकारी संस्था द्वारा सार्वजनिक उपयोग के लिए किया जाता है। सार्वजनिक प्रेलख तथ्यों के संकलन का एक प्रमुख द्वितीय स्रोत है।

(i) **प्रकाि"ात प्रलेख** : इसके अन्तर्गत वे प्रलेख आते हैं जिनका प्रका"ान सार्वजनिक उपयोग के लिए किया जाता है अनेक सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन जब प्राथमिक रूप से तथ्यों का संकलन करते हैं तथा अन्त में उन्हें जनसामान्य के उपयोग हेतु प्रकाि"ात किया जाता है। जब इन तथ्यों का अन्य अनुसंधानकर्ता द्वारा उपयोग किया जाता है तो उनके लिये ये तथ्य प्रकाि"ात प्रलेखों के रूप में तथ्य संकलन का द्वितीयक स्रोत बन जाते हैं। उदाहरण के लिए भारतीय योजना आयोग, लोक सेवा आयोग द्वारा प्रस्तुत प्रतिवंदन महत्वपूण्र स्रोत हैं। वर्तमान में अनेक गैर–सरकारी /सरकारी संस्थाओं द्वारा शोध कार्य किये जा रहा है इन शोध कार्यों का प्रका"ान भी सार्वजनिक प्रलेख का अंग है, ये प्रकाि"ात प्रलेख सामाजिके अनुसंधान में सहायक सिद्ध होते हैं। साथ ही परिकल्पना के निर्माण में सहायक होते हैं।

(ii) **अप्रकाि"ात प्रलेख** : अनेक शोध संस्थानों, अर्धसरकारी संस्थानों और सरकारी संस्थानों, सार्वजनिक प्रतिष्ठानों, वि"वविद्यालयों, महाविद्यालयों आदि में योग्य एवं अनुभवी व्यक्तियों द्वारा एकत्र बहुत से आंकड़े अप्रकाि"ात रह जाते हैं। यदि ये आंकड़े उपलब्ध हो जाये तो इन्हें द्वितीयक आंकड़ों के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। कुछ सरकारी तथा गैरसरकारी संस्थाओं द्वारा एकत्रित कुछ सामग्री उनकी गोपनीयता भी बनाये रखने हेतु प्रकाि"ात नहीं करायी जाती, तथा कुछ सामग्री आर्थिक या अन्य कारणों से प्रकाि"ात नहीं हो पाती। रक्षा मंत्रालय से सम्बन्धित दस्तावेजों की गोपनीयता बनाये रखने के उद्दे"य ही उनका प्रका"ान नहीं कराया जाता। अर्थात इसके अन्तर्गत ऐसे सभी प्रलेख आते हैं जो सार्वजनिक होते हैं पर प्रकाि"ात नहीं होते हैं या नहीं हो पाते। चूंकि प्रकाि"ात न होने के कारण सहजता से प्राप्त नहीं होते।

अप्रकाि"ात प्रलेख के अन्तर्गत द्वितीयक सामग्री के निम्नलिखित स्रोत आते हैं–

1. **अभिलेख** : अप्रकाि"ात प्रलेख में अभिलेख महत्वपूर्ण है। अभिलेख वे सूचनाएं हैं जो सरकारी एवं गैरसरकारी संस्थाओं द्वारा प्र"ाासनिक कार्य के लिए संकलन की जाती हैं। ये अभिलेख किसी भी अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं।
2. **पाण्डुलिपियां** : कई बार स्थानीय समाज सुधारक, नेता, महापुरूष आदि अत्यधिक उपयोगी गहन सूचनाओं का समावे"ा करते हुए पाण्डुलिपियां तैयार करते हैं जिनका प्रका"ान कारणव"ा नहीं हो पाता है, जिन्हें सार्वजनिक उपयोग के लिए संग्रहालयों में रख दिया जाता है।
3. **अनुसंधानकर्ता के प्रतिवेदन** : अनेक शोधकर्ता अनुसंधान कार्यों के आधार पर महत्वपूर्ण प्रतिवेदन तैयार कर लेते हैं। अनुसंधान लेख तो लिख लेते हैं परंतु सभी शोध कार्य पाण्डुलिपियों की तरह प्रकाि"ात नहीं होते। शोध विद्यार्थी द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है।
4. लोकगीत तथा लोक गाथाएंः अप्रकाि"ात लोक गीत, लोक संस्कृति, ि"ालालेख, लोकगाथा में द्वितीयक तथ्य संकलन क महत्वपूर्ण प्रति हैं। मानव"ाास्त्रियों द्वारा अनेक अध्ययन में इनका काफी उपयोग किया जाता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि द्वितीयक प्रति हर रूप में अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, लेकिन इनका उपयोग सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

12.7 द्वितीयक स्रोत के गुण

तथ्य संकलन के द्वितीयक स्रोतों के गुण इस प्रकार हैं

1. अध्ययन प्रारम्भ करने से अध्ययन विषय का ज्ञान, परिकल्पना निर्माण, मार्गद"ान, प्राथमिक तथ्यों के संकलन के प"चात विष्ले"णआदि में द्वितीयक सामग्री महत्वपूर्ण होती है।

2. द्वितीयक सामग्री की सहायता से किसी भी समाज, उसकी संरचना के इतिहास का को समझा जा सकता है।

3. द्वितीयक तथ्य तटस्थ और पक्षपातरहित होते हैं। द्वितीयक तथ्य जिस रूप में संकलित किये जाते हैं उनका उसी रूप में उपयोग किया जा सकता है।

4. गोपनीय सूचनाओं का संकलन करने के लिए भी द्वितीयक सामग्री का महत्व बहुत अधिक है जिन सूचनाओं को व्यक्ति कभी भी दूसरों को देना नहीं चाहता उन्हें सुरक्षित छोड़ जाता है जो बाद में एक वि"ोष अध्ययन के अन्तर्गत ऐसी सूचनाओं के आधार पर अत्यधिक उपयोगी निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

द्वितीयक स्रोत के दोष

तथ्य संकलन के द्वितीयक स्रोतों में निम्नलिखित दोष इस प्रकार हैं–

1. द्वितीयक स्रोत के आधार पर वैज्ञानिक सामान्यीकरण निकालना काफी कठिन होता है क्योंकि व्यक्ति, पत्र, डायरी, संस्मरण आदि लिखते समय अत्यधिक भावुक होने के कारण बढ़ा चढ़ा कर लिख देता है कई बार संस्मरण आदि में कल्पनाओं का उपयोग होता है।

2. द्वितीयक तथ्य अतीत से संबंधित होने के कारण इनकी पुनः परीक्षा करना संभव नहीं है।

3. द्वितीयक तथ्यों द्वारा प्राप्त तथ्यों से वैज्ञानिक निष्कर्ष दे पाना कठिन होता है क्योंकि द्वितीयक तथ्य क्रमबद्ध नहीं होते।

4. द्वितीयक स्रोतों में सार्वभौमिकता का अभाव होता है क्योंकि ऐतिहासिक प्रलेखों का लेखन इतिहासकार अपने दृष्टिकोण से करता है।

द्वितीयक स्रोत प्राथमिक स्रोत का स्थान तो नहीं ले सकती परंतु प्राथमिक स्रोत के रूप में अव"य काम कर सकती है यह प्राथमिक स्रोत से प्राप्त तथ्यों के सत्यापन में योग दे सकती है।

बोध प्रश्न–5

(i)- द्वितीयक स्रोत के तीन गुणों और दोषों को बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

12.8 प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर

अनुसूची और प्रश्नावली दोनों में साक्षात्कार एवं व्यक्तिगत सम्पर्क का समान महत्व है। यद्यपि प्रश्नावली में यह सम्पर्क दूर का भी विद्यमान हो सकता है जो कि अनुसूची में सम्भव नहीं तद्यपि बाह्य तौर पर दोनों के मध्य कोई स्पष्ट भिन्नता परिलक्षित होना असंभव सी प्रतीत होती है।

क्र.सं.	प्राथमिक स्रोत	द्वितीयक स्रोत
1	प्राथमिक तथ्य अधिक मौलिक होते है क्योंकि इनका संकलन स्वयं भाोधकर्ता के द्वारा अध्ययन की आव"यकता के अनुसार किया जाता है।	द्वितीयक तथ्यों में मौलिकता का सापेक्ष रूप से अभाव पाया जाता है।
2	अनुसंधानकर्ता द्वारा स्वयं एकत्र किये जाते है।	ये अन्य के द्वारा एकत्रित एवं उपयोग किये जाते हैं।
3	प्राथमिक स्रोतों का उपयोग सीमित अध्ययन क्षेत्र में तथ्यों के संग्रह के लिए किया जाता है	द्वितीयक स्रोतों का उपयोग दूर–दूर फैले या विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए बहुत बड़ी संख्या वाले उत्तरदाताओं से सूचनाएं एकत्रित की जाती है
4	प्राथमिक तथ्य क्षेत्रीय कार्य के आधार पर प्रथम बार एकत्रित किये जाने के कारण नवीन होते है।	द्वितीयक तथ्य पूर्व में किये गये अन्वेशणों के अंतर्गत संकलित किये जाने के कारण पुराने होते हैं।
5	ये अधिक वि"वसनीय होते है क्योंकि इन्हें भाोधकर्ता अपनी प्राक्कल्पनाओं के परीक्षण हेतु स्वयं अपने निद"ैन में संकलित करता है।	ये कम वि"वसनीय होते हैं।
6	यह एक महँगी प्रविधि है। इसके उपयोग में समय और धन दोनो अधिक लगते है।	समय और धन दोनो कम लगते है।
7	प्राथमिक स्रोतों के अर्न्तगत उत्तरदाता और अध्ययनकर्त्ता के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क होने के कारण गोपनीय सूचनाओं का संकलन कर सकना बहुत कठिन होता है।	द्वितीयक स्रोतों के द्वारा अतः वह गोपनीय सूचनाएं भी दे सकते है।

बोध प्रश्न–6

(i)- प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर में स्पष्ट कीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

12.9 सारां"ा

सामाजिक अनुसंधान में प्राथमिक एवं द्वैतीयक स्रोतो अपना अलग–अलग महत्व होता है। प्राथमिक स्रोतों द्वारा प्राथमिक सामग्री संकलित की जाती है, जबकि द्वितीयक स्रोतों द्वारा ऐतिहासिक सामग्री का संकलन किया जाता है।

12.10 परिभाषिक शब्दावली

अनुसूची: प्रश्नो की सूची है जिसे अनुसंधानकर्ता स्वयं उत्तरदाताओं के पास ले जाकर भरता है।
प्रश्नावली: प्रश्नो की सूची है जिसे डाक द्वारा सूचनादाता के पास भेजे जाती है तथा सूचनादाता इस पर प्रश्नों के उत्तर देकर अनुसन्धानकर्ता को वापस दे देता है।
अवलोकन: अवलोकन तथ्य संकलन की एक विधि है, जिसमें दृष्टि आधारित सामग्री संग्रह होता है।

12.11 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध– प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्राथमिक तथ्य शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर अप्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर व्यक्तिगत प्रलेख के आधार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर द्वितीयक स्रोत के गुण और दोष शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 6

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर के आधार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

12.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** कालेज बुक डिपो .जयपुर.
राय, पारस नाथ. **2004. अनुसंधान परिचय.** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल. आगरा.

गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोि"ायल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरने"ानल. ऑकलैण्ड.

ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

12.13 सहायक उपयोगी पाठ्य साम्रगी

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.
Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers.

Young P.V. (1960). Scientific Social Surveys and Research. Asia Publishing House. Bombay.

12.14 निबंधात्मक प्रश्न

1– प्राथमिक तथ्य किसे कहते हैं ? प्राथमिक तथ्य के संकलन के प्रमुख स्रोतों की विवेचना कीजिए।

2– द्वितीयक तथ्य का उल्लेख करतें हुए द्वितीयक सामग्री के संकलन के स्रोतों का वर्णन कीजिए।

3– द्वितीयक स्रोत का उल्लेख करतें हुए द्वितीयक स्रोत के गुण और दोषों का वर्णन कीजिए।

4– प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

इकाई 13 केन्द्रित समूह साक्षात्कार

Focussed Group Discussion

13.0 उद्दे"य

13.1 प्रस्तावना

13.2 केन्दित समूह साक्षात्कार का अर्थ

13.3 केन्दित समूह साक्षात्कार के चरण

13.4 केन्दित समूह साक्षात्कार की वि"ोषता

13.5 केन्दित समूह साक्षात्कार के उद्दे"य

13.6 केन्दित समूह साक्षात्कार के लाभ

13.7 केन्द्रीय समूह साक्षात्कार की सीमाएं

13.8 सारांश

13.9 परिभाषिक शब्दावली

13.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

13.11 बोध–प्रश्नों के उत्तर

13.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

13.13 निबंधात्मक प्र"न

13.0 उद्दे"य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- केन्द्रित समूह साक्षात्कार के अर्थ को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कार के चरण को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कारकी वि"ोषता को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कार के उद्दे"य को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कार के लाभ को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कार की सीमाओं को बताना।

13.1 प्रस्तावना

इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग सामान्यतः किसी सामाजिक घटना या परिस्थिति, फिल्म, रेडियो, या टेलीविजन प्रोग्राम का सूचनादाताओं पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। संचार अनुसंधान में इसका अधिकतर प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए किसी रेडियो प्रोग्राम के सुनने अथवा किसी फिल्म को देखने के प"चात उसके प्रभाव को जानने के लिए स्रोताओं एवं द"र्कों का साक्षात्कार लिया जाता है। चूंकि इसमें किसी वि"ोष घटना, अवस्था या परिस्थिति के प्रभाव पर ही साक्षात्कार केन्द्रित होता है फिर सूचनादाताओं से उनका वर्णन करने को कहा जाता है। अलग अलग लोग उसी अनुभव का अलग अलग वर्णन करते हैं और इस प्रकार कुछ परिकल्पनाओं का निर्माण करता है।

13.2 केन्द्रित समूह साक्षात्कार का अर्थ

केन्द्रिया समूह साक्षात्कार तथ्य संकलन की एक प्रविधि है जिसे माध्यम से वर्णनात्मक अध्ययनों का गहन अध्ययन कर गुणात्मक तथ्यों को एकत्रित करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। जैसे वैयक्तिक अध्ययन तथा नृजाति वर्णन आदि। इस प्रकार के साक्षात्कार का उपयोग सर्वप्रथम मर्टन तथा उनकी सहयोगी पेट्रीसिया केण्डाल ने 1946 में व्यक्तियों पर सार्वजनिक सन्दे"ावाहन के साधनों जैसे रेडियो, टी0वी0, समाचार पत्र आदि के सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभाव मापने के लिए गया इसका प्रधान उद्दे"य परिकल्पना के उस औचित्य का परीक्षण करना होता है जिसकी प्रतिस्थापना मानव व्यवहार की पूर्व वि"लेषित अवस्था के आधार पर हुई हो। इसके अन्तर्गत प्रेरणा के प्रति तथा अन्य गहन तथ्यों पर ध्यान केन्द्रित होता है। किस मूल प्रेरणा ने किसी व्यक्ति को एक वि"ोष प्रकार का व्यवहार करने के लिए प्रेरित किया।

ये अन्य साक्षात्कार से निम्नवत भिन्न होता है।

1. उन पर प्रयोग होता है जो परिस्थिति वि"ोष से पूर्व संबंध रखते हैं।
2. उन्ही स्थितियों से संबंधित है जिका पूर्व विष्ले"ाणप्राप्त है।
3. साक्षात्कार निर्दे"िका से सम्पन्न कराया जाता है।
4. इसका संबंध आन्तरिक अनुभूतियों से होता है। इसके आधार पर नवीन परिकल्पनाओं का निर्माण करता है, साथ ही शोधकर्ता अपनी परिकल्पना की वैधता की परीक्षा करता है।

केन्द्रित साक्षात्कार वह है जो एक वि"ोष विषय पर केन्द्रित होता है तथा इसमें सभी घटना, परिस्थिति, समस्या आदि उत्तरदाताओं को एक सा अनुभव दिया जाता है। यह साक्षात्कार उत्तरदाओं के वास्तविक अनुभवों के प्रभाव पर केन्द्रित रहता है साक्षात्कार की प्रक्रिया में वह अध्ययन विषय से संबन्धित उन पक्षों को ध्यान में रखते हुए किसी भी क्रम में और किसी भी ढ़ंग से प्र"न करने के लिए स्वतंत्र होता है। ऐसे साक्षात्कार में उत्तरदाता को उपने विचारों को एक वि"ोष ढ़ंग से व्यक्त करने की पूरी स्वतंत्रता होती है लेकिन प्र"नकर्ता का प्रयत्न यह रहता है कि उत्तरदाता अध्ययनरत विषय पर केन्द्रित रहते हुए ही प्र"नों का उत्तर दें। इस दृष्टिकोण से इसका उद्दे"य उत्तरदाताओं के अनुभवों के सन्दर्भ में परिकल्पनाओं को विकसित करना तथा कुछ नवीन पहलुओं का समावे"ा करने का अवसर प्राप्त करना होता है। उसी से संबन्धित प्र"न पूछे जाते हैं।

उदाहरणार्थ विपणन के क्षेत्र में केन्द्रीय समूह नये उत्पादों के पृष्ठपोषण से संबंधी जानकारी प्राप्त करने के साथ–साथ अन्य विभिन्न विषयों हेतु एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में प्रयुक्त होते हैं। जब कोई संगठन अपने सम्पूर्ण विपणन नेतृत्व हेतु दि"ाानिर्दे"ा तैयार कर रहे होते हैं तो केन्द्रीय समूह मुख्यतया उत्पाद या सैद्धांतिक विकास के प्राथमिक चरण में उपयोगी सिद्ध होते हैं। वि"िाष्टतया केन्द्रीय समूह किसी भी कम्पनी को उसके विकास, व्यय, किसी नये उत्पाद की बाजार में जांच के संदर्भ में दृष्टिकोण अथवा ग्राहक या आम जनता के सामने उस उत्पाद के जाने से पूर्व सलाह देता है तथा उसे बाजार में उतारने या ना उतारने हेतु अपनी अनुमति प्रदान करता है।

केन्द्रीय समूह के विचार विर्म"ा हेतु मार्गद"ार्न के लिए अनुसंधानकर्ता एक दि"ाा निर्दे"िका साक्षात्कार प्रारम्भ करने से पूर्व ही तैयार कर लेता है। सामान्यतया यह विचार विर्म"ा किसी वस्तु या उत्पाद श्रेणी की संपूर्ण अवधारणाओं से प्रारम्भ होता है तथा अपनी सम्पूर्णता तक पहुचते पहुचते एक नि"चत धारणा को प्राप्त होता है। केन्द्रीय समूह में सूचनादाताओं का चयन जनांकिकी, समान मनोवृत्ति तथा समान विचार व व्यवहार वाले व्यक्तियों के आधार पर किया जाता है।

अतः केन्द्रीय समूह एक साक्षात्कार है जो छोटे छोटे उत्तरदायी समूहों में प्रि"ाक्षित मध्यस्थों द्वारा सम्पन्न कराया जाता है। यह साक्षात्कार एक अनौपचारिक तथा सामान्य तरीके से सम्पन्न होता है जहां हर सूचनादाता किसी भी पक्ष पर अपने विचार व्यक्त करने हेतु स्वतन्त्र होता है।

बोध–प्रश्न 1

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार के अर्थ को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....
....

13.3 केन्द्रित समूह साक्षात्कार के चरण

मर्टन के अनुसार इस साक्षात्कार को निम्नलिखित चरणों में सम्पन्न कराया जाता है–

1. **प्रथम चरण** : प्रथम चरण के अन्तर्गत उन व्यक्तियों का साक्षात्कार के लिए चयनित किया जाता है जिन्हें किसी वि"ाष्ट परिस्थिति या समस्या से ग्रसित देखा जाता है अर्थात वि"ाष परिस्थिति से पूर्व सम्बंध रखते हों। इसके अन्तर्गत व्यक्तियों से सामाजिक परिस्थितियों में आने वाले बदलाव का जांच करना होता है।
2. **दूसरा चरण** : प्रायेगिक कारक के प्रभाव को लेकर कुछ उपकल्पनाएं बना लेना तथा उन उपकल्पनाओं की जांच के लिए साक्षात्कार के लिए कुछ निर्दिष्ट प्र"न तैयार किया जाना, साक्षात्कार करने से पहले ही काल्पनिक स्तर पर वार्तालाप का आधार इस प्रकार तैयार किया जाता है कि परिकल्पनाओं के सत्यापन में सहायक सिद्ध हो सके।
3. **तीसरा चरण** : इसका प्रयोग साक्षात्कार निर्दे"ाका के आधार पर होता है अर्थात साक्षात्कार निर्दे"ाका की रचना करने के प"चात उसी अनुरूप में वार्तालाप को आगे बढ़ाया जाता है फिर संबन्धित प्र"नों के बार–बार घुमा फिरा कर उसी समस्या पर लाया जाता है जिसके बारे में विस्तार से जानना है। यह अन्वेषक के प्रमुख क्षेत्रों पर परिकल्पनाओं के दिग्द"ान करता है।
4. **चतुर्थ चरण** : इस चरण के अन्तर्गत संकेन्द्रित साक्षात्कार को आगे बढ़ाया जाता है और समाप्त भी होता है। इसमें वि"ाष्ट परिस्थितियों को प्रस्तुत करके प्र"न पूछे जाते हैं। नवीन परिवर्तनों के अन्य कारण भी पूछे जाते हैं। प्राप्त उत्तरों का विष्ले"ाणकिया जाता है तथा जिस चर के मूल्य पर और जानकारी प्राप्त करनी है उसे भी उत्तरदाता से पूछा जाता है। यह अध्ययन वि"ाष एवं नि"चत स्थितियों के संबंध में आत्मनिष्ठ अनुभवों , आत्मकृतियों तथा भावनात्मक प्रति उत्तरों पर केन्द्रित होता है।

बोध–पश्न 2

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार के चरण का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

13.4 केन्दित समूह साक्षात्कार की वि"ोशता :

1. संकेन्द्रित साक्षात्कार की यह वि"ोषता है कि इसके द्वारा वास्तविक परिस्थितियों का अनुभव करने वाले व्यक्तियों की व्यक्तिगत प्रक्रियाओं वि"ाष्ट संवेगों तथा उत्तेजनाओं से उठने वाले नि"चत मानसिक साहचर्यी इत्यादि का पता लगाया जा सकता है क्योंकि इस प्रकार के साक्षात्कार में उत्तरदाता इन बातों को छिपा नहीं पाता क्योंकि साक्षात्कारकर्ता ने परिस्थिति का पूर्व विष्ले"ाणकरके यह ज्ञात किया होता है कि उत्तरदाता को क्या–क्या बतलाना चाहिए इसलिए यदि उत्तरदाता के उल्टे सीधे उत्तरों को साक्षात्कारकर्ता तुरन्त पकड़ लेता है।
2. संकेन्द्रित साक्षात्कार इस प्रकार की वि"ोषता के कारण तनाव की परिस्थितियों का अध्ययन करने में वि"ोष रूप से उपयुक्त सिद्ध होता है।
3. यह साक्षात्कार केवल उन्ही व्यक्तियों का लिया जाता है जो उस विषय वि"ोष से संबंधित रह चुके हैं।
4. साक्षात्कार पथ प्रदर्"ाका का सहारा साक्षात्कार हेतु लिया जाता है। जिसमें विषय से संबंधित ज्ञात की जाने वाली बातों का उल्लेख किया जाता है।
5. उस प्रकार का साक्षात्कार एक वि"ाष्ट परिस्थिति के प्रति सूचनादाता के अनुभवों, मनोवृत्तियों एवं भावनाओं को जानने के लिये किया जाता है।
6. इसमें सूचनादाता अपने विचार व्यक्त करने हेतु स्वतन्त्र होता है इसमें साक्षात्कारकर्ता सूचनादाताओं के उत्तरों को प्रभावित नही करता
7. इसमें घटना का पूर्व विष्ले"ाणकर प्र"नों की एक सूची तैयार कर ली जाती है।
8. संकेन्द्रित साक्षात्कार इस प्रकार की वि"ोषता के कारण तनाव की परिस्थितियों का अध्ययन करने में वि"ोष रूप से उपयुक्त सिद्ध होता है।
9. मानव व्यवहार के संबध में कुछ परिकल्पनाओं की प्रमाणिकता की जांच के लिए केन्द्रित साक्षात्कार का प्रयोग किया जाता है।
10. संकेन्द्रित साक्षात्कार में प्र"न एवं प्र"न पूछने के ढ़ंग में लचीलापन होता है।
11. इसमें बंद वाले प्र"नों के स्थान पर खुले प्र"न साक्षात्कारकर्ता से पूछे जाते हैं जिनमें उत्तरदाता जो भी महसूस करता, उत्तर दे सकता है।

बोध–प्रश्न 3

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार की किन्ही चार वि"ोषताओं को लिखिए ?

....
....
....
....

.....

.....

13.5 केन्दित समूह साक्षात्कार के उद्दे"य

मर्टन ने 1968 में संकेन्द्रित साक्षात्कार के उद्दे"य प्रतिपादित किए।

1. इसका प्रथम उद्दे"य यह है कि प्रचार माध्यमों तथा उपकरणों के प्रभावी पहलुओं को निर्धारित करने एवं जानने का प्रयास किया जाता है। श्रोतागण या द"र्काकगण द्वारा देखे गये अनेक प्रकार के प्रचार माध्यमों से विज्ञापन के प्रति उनके विचारों को जानने का प्रयास रहता है।
2. द"र्काकगणों तथा श्रोतागणों को उन प्रतिक्रियाओं के बहुआयामी पक्षों की प्रकृति का निर्धारण करना।
3. श्रोतागणों तथा द"र्काकगणों के विज्ञापन के प्रति जो प्रभाव उत्पन्न होते हैं उनसे संबन्धित परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है तथा उनसे संबन्धित जानकारी व्यक्तियों से प्राप्त की जा सकती है या नहीं।
4. ऐसी नवीन जानकारी या तथ्य ज्ञात करना जो सर्वेक्षण के प्रारम्भ में उपकल्पना के निर्माण के समय तक ज्ञात नहीं होते हैं।

मर्टन के अनुसार समकालीन समाजों में प्रचार प्रसार के माध्यमों की विविधता और अप्रत्या"ित विस्तार के कारण सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक संरचनाओं के स्वरूपों को प्रभावित करता हैं तथा इन संरचनाओं के स्वरूपों से प्रभावित होती है इनके योगदान को सकेन्द्रित साक्षात्कार में ही जाना जा सकता है।

क. गहन अध्ययनः इसके अन्तर्गत साक्षात्कार के समय उत्तरदाता से किसी भी विषय पर गहन तथा गहराई के साथ पूछताछ की जाती है जिसमें विषय से संबन्धित प्रत्येक पक्ष पर उत्तरदाता के विचार जानने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार का साक्षात्कार तभी सफल हो सकता है जब–

- साक्षात्कारकर्ता इस कार्य में वि"ोष अनुभवी तथा प्र"िाक्षित हो।
- सामाजिक परिस्थितियों तथा मनोवैज्ञानिक कारकों का सामान्य ज्ञान होना आव"यक है।

इस प्रकार के साक्षात्कार में पूर्व में कोई नि"ंचत परिकल्पना नहीं होती साथ ही अनौपचारिक परिस्थितियों तथा औपचारिक परिस्थिति में भी ऐसे गहन साक्षात्कार सम्पन्न किये जा सकते हैं जिनमें उत्तरदाता से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तरीकों से तथा सूक्ष्म स्तर तक पूछ–पूछ कर नवीन जानकारी प्राप्त की जाती है। जटिल भावनाओं एवं विचारों को केवल ऐसे साक्षात्कार से ही मालूम किया जा सकता है।

ख. संचार साक्षात्कार : ऐसे साक्षात्कार के अन्तर्गत उत्तरदाता एवं साक्षात्कारकर्ता के बीच संदर्भ एवं माध्य के रूप में जनसंचार का काई भी साधन जैसे रेडियो, टीवी, प्रेस आदि हो सकता है। पत्रकारिता में कोई भी संचार वि"ोषज्ञ उत्तरदाताओं की सूची निर्धारित करके उनसे वार्तालाप करता है। वार्तालाप के द्वारा किसी भी विषय या जनसंचार माध्य की कोई भी समस्या को लिया जा सकता है तत्प"चात उस पर गहन साक्षात्कार किया जाता है।

ग. पैनल साक्षात्कार : इस प्रकार के साक्षात्कार को निम्नलिखित तरीके से किया जाता है –

1. प्रथम उत्तरदाता की सूची बनायी जाती है
2. उत्तरदाताओं का दो या तीन बार साक्षात्कार किया जाता है

3. साक्षात्कार निर्धारित अवधि के अन्तराल के उपरांत उत्तरदाताओं से सम्पर्क स्थापित किया जाता है।

प्रथम बार साक्षात्कार तब किया जाता है जब वह कारक अनुपस्थित हो। ऐसे में जो उत्तरदाताओं से विचार या तथ्य प्राप्त होते हैं उन्हें लिख लिया जाता है, इसके प"चात किसी कारक/घटना को उत्तरदाता महसूस करते है एक निर्धारित समय के अनुभव के उपरांत उन्हीं उत्तरदाता से पुनः साक्षात्कार लिया जाता है तथा नवीन कारकों के प्रभाव जानने के लिए उत्तरदाताओं से प्र"न पूछे जाते हैं जिससे उनकी मानसिकता में आये परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त हो सके। तीसरी बार भी इन्हीं उत्तरदाओं से पा"च व्याख्या के साक्षात्कार हेतु सम्पर्क स्थापित कर प्रभावों की जानकारी प्राप्त की जाती है।

बोध–प्रश्न 4

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार के उद्दे"यों को लिखिए ?

....
....
....
....
....
....

13.6 केन्दित समूह साक्षात्कार के लाभ

सारान्ताकोस के अनुसार इस साक्षात्कार के निम्न लाभ हैं, जिनका विवरण निम्नवत है–

(1) गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन : इस पद्धति की मौलिक विशेषता यह है कि इसके माध्यम से किसी भी सामाजिक इकाई या समस्या का सूक्ष्म और गहन अध्ययन किया जा सकता है। यह पद्धति किसी समस्या या इकाई के एक पक्ष का अध्ययन नहीं करती बल्कि इकाई से सम्बन्धित सभी पहलुओं का अध्ययन किया जाता है इसीलिये इसे सामाजिक सूक्ष्मदर्शक यन्त्र माना है। साथ ही इस पद्धति में उत्तरदाता को प्र"नों के उत्तर देने में अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्रता रहती है।

(2) व्यवहार कु"ालता– साक्षात्कार कर्ता की भूमिका सौम्य होती है। उसको बहुत सोच समझ कर कार्य करता है और अपने व्यवहार को परिस्थितियों के अनुकूल नियंत्रित करता है। केन्द्रित समूह साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता व्यवहार कु"ाल होता है। जिस कारण वह दूसरों को अपनी ओर आकर्षित करके सदस्यों से पूर्ण सहयोग प्राप्त करता है।

(3) विशिष्ट पहलुओं का अध्ययन : इसमें प्रतिनिधि इकाइयों का गहन अध्ययन किया जाता है इसके माध्यम से इकाइयों के एक पत्र का अध्ययन न करके विशिष्ट पहलुओं जैसे पारिवारिक, आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा राजनैतिक आदि का अध्ययन किया जाता है। जानकारी अधिक वि"ाष्ट होती है।

(4) विस्तृत जानकारी– साक्षात्कार कर्ता का सामाजिक अनुसधान समस्या से सामग्री संकलन करने में साक्षात्कार निर्दे"ाका का प्रयोग करता है। साक्षात्कारकर्ता एक के बाद एक बिन्दु पर सूचनादाता को जितनी विस्तृत अथवा जितनी संक्षिप्त सूचना वह देना चाहता है, उसे देने के लिए प्रेरित करता है। इसमें सूचना संकलित करते समय सूचनादाता को उत्तर देने के पर्याप्त स्वतन्त्रता रहती है जिस कारण अधिक जानकारी प्राप्त होने के अवसर बढ़ जाते हैं।

बोध–प्रश्न 5

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार के लाभों का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

13.7 केन्द्रीय समूह साक्षात्कार की सीमाएं

केन्द्रीय समूह साक्षात्कार में समस्या या घटना का गहन अध्ययन करने के प"चात् भी यह विधि में निम्नांकित सीमाएं हैं जो इस प्रकार है।

1. प्र"नावली तथा साक्षात्कार विधि के विपरीत केन्द्रीय समूह साक्षात्कार संख्यात्मक जानकारी प्राप्त करने की एक अच्छी विधि नही है।

2. केन्द्रीय समूह साक्षात्कार के माध्यम से किसी सामाजिक इकाई या समस्या के बारे एकत्र की गई जानकारी की व्याख्या करते हैं तो इसमें एक समूह में जो आम सहमति होती है वह सभी सदस्यों की राय का प्रतिनिधित्व नही करती है क्योकि कुछ च्यक्तियों को चर्चा में हावी हानेा पड़ता है और कम मुखर लोग अपना योगदान नही करते हैं। इस प्रकार केन्द्रीय समूह साक्षात्कार आंकड़ों के संग्रह की विधि का प्रतिनिधित्व नही कर सकती।

3. केन्द्रीय समूह साक्षात्कार में शोधकर्ता की निर्भारता रहती है जिस कारण केन्द्रीय समूह साक्षात्कार की वैधता पर सवाल उठाया जाता है क्योंकि केन्द्रीय समूह साक्षात्कार के माध्यम से प्राप्त किये गये परिणाम स्वयं शोधकर्ता के पढ़ने से प्रभावित होते हैं।

13.8 सारांश

इस इकाई में हमने सबसे पहले केन्द्रित समूह साक्षात्कार का अर्थ समझाते हुए उसके चरणों की चर्चा करते हुए स्पष्ट किया है कि किसी सामाजिक इकाई के गहन एवं विस्तृत अध्ययन करने तथा इस इकाई के बारे में सम्पूर्ण गुणात्मक आँकड़े एकत्रित करने की महत्वपूर्ण प्रविधि है। इसके प"चात् केन्द्रित समूह साक्षात्कार की वि"ोषताओं तथा उद्दे"यों की चर्चा की है। केन्द्रित समूह साक्षात्कार द्वारा किसी भी संस्था या विषय का सम्पूर्ण अध्ययन करने के लिए व्यवस्थित प्रणाली का प्रयोग किया जाता है जिससे संस्था का गहन अध्ययन सम्भव हो सके। इस पद्धति में सूचनादाता को अपने विचार रखने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है जिस कारण गहन और विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

13.9 परिभाषिक शब्दावली

साक्षात्कार– साक्षात्कार सोद्दे"य वार्तालाप है जिसमें एक व्यक्ति दूसरे से सूचना संकलित करता है।
परिकल्पना– उपकल्पना एक ऐसा पूर्व विचार होता है जो शोधकर्ता किसी भी विषय के संबंध में अपने प्रारम्भिक ज्ञान एवं सामान्य अनुभव पर बनाता है।
सामाजिक अनुसंधान– जब अनुसंधान के क्षेत्र एवं विषयवस्तु को सामाजिक प्रघटनाओं के क्रमबद्ध व व्यवस्थित अध्ययन तक सीमित कर दिया जाता है तो सामाजिक अनुसंधान कहलाता है।
बंद प्र"न– ऐसे प्र"न जिनके आगे सूचनादाताओं द्वारा दिए जाने वाले संभावित उत्तर होते हैं।

खुले प्र"न– ऐसे प्र"न जिनका उत्तर सूचनादाता अपने स्वयं के शब्दों में देता है।

13.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers.

Young P.V. (1960). Scientific Social Surveys and Research. Asia Publishing House. Bombay.

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** कालेज बुक डिपो .जयपुर.

राय, पारस नाथ. **2004. अनुसंधान परिचय.** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल. आागरा.

13.11 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार का अर्थ शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार के चरण शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार की वि"ोषताएं शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार के उद्दे"य शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार के लाभ शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

13.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

- जहोडा, मेरी, मोर्टन, डी. और स्टुअर्ट, डब्ल्यू कुक, **1951,** रिसर्च मैथड्स इन सो"ाल रिले"ान्स"ा, ड्रायडन, न्यूयार्क।
- गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सो"ियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरने"ानल. ऑकलैण्ड.
- जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।
- ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

13.13 निबंधात्मक प्र"न

1– केन्द्रित समूह साक्षात्कार किसे कहते हैं ? केन्द्रित समूह साक्षात्कार के प्रमुख चरणों की विवेचना कीजिए।

2 – केन्द्रित समूह साक्षात्कार की प्रणाली का उल्लेख करतें हुए केन्द्रित समूह साक्षात्कार की वि"ोषताओं का वर्णन कीजिए।

3– केन्द्रित समूह साक्षात्कार की प्रणाली का उल्लेख करतें हुए केन्द्रित समूह साक्षात्कार के उद्दे"यों का वर्णन कीजिए।

4– समूह साक्षात्कार किसे कहते हैं ? केन्द्रित समूह साक्षात्कार के लाभ या सीमाओं की विवेचना कीजिए।

इकाई 14 वृतान्त तथा मौखिक इतिहास
Narratives & Oral Histories

14.0 उद्दे"य

14.1 प्रस्तावना

14.2 वृतान्त का अर्थ

14.3 मौखिक इतिहास का अर्थ

14.4 मौखिक इतिहस एवं वृतान्त प्रविधियों द्वारा तथ्य संकलन में कठिनाइयां

14.5 सारांश

14.6 परिभाषिक शब्दावली

14.7 बोध–प्रश्नों के उत्तर

14.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

14.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

14.10 निबंधात्मक प्र"न

14.0 उद्दे"य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

4 वृतान्त के अर्थ को समझ पाना,
5 मौखिक इतिहास के अर्थ को समझ पाना,
6 गुणात्मक तथ्यों के संकलन में कठिनाई को समझ पाना,

14.1 प्रस्तावना

वृतान्त तथा मौखिक इतिहास दोनों ही ऐतिहासिक अनुसंधान का सबसे प्राचीन स्रोत माना जाता है क्योंकि इतिहास की लिखित परम्परा कई वर्षों प"चात् प्रारम्भ हुई। आधुनिक स्वरूप प्रदान करने की दृष्टि से इन दोनों के अभिलेखन में टेपरिकार्डर पर प्रयोग किया जा रहा है। सामाजिक अनुसंधान ने गुणात्मक तथा गणनात्मक दोनों प्रकार की सामग्री का अपना अलग–अलग महत्व होता है। अनुसंधानकर्ता अनुसंधान पर अध्ययन की समस्या की प्रकृति के अनुरूप एकत्र की जाने वाली सामग्री के बारे में निर्णय लेता है। गुणात्मक सामग्री को एकत्रित करने में सहभागी अवलोकन, वैयक्तिक अध्ययन जीवन इतिहास, तथा अन्तर्वस्तु विष्ले"णप्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। गणनात्मक तथ्यों के संकलन में प्र"नावली, अनुसूची तथा साक्षात्कार जैसी प्रविधियों का महत्वपूर्ण स्थान है। जब हम किसी समस्या का अध्ययन करते हैं तो मौखिक इतिहास तथा वृतान्तों द्वारा महत्वपूर्ण एवं अत्यन्त उपयोगी गुणात्मक सामग्री संकलित की जाती है, साथ ही वृतान्त तथा मौखिक इतिहास द्वारा सामाजिक घटनाओं तथा तथ्यों के बारे में विस्तृत जानकारी उपलब्ध कराने में सहायता प्रदान करते हैं।

14.2 वृतान्त का अर्थ

वृतान्त ऐतिहासिक सामग्री को संकलित करने एवं सुरक्षित रखने की प्रमुख पद्धति है इसके अन्तर्गत उन व्यक्तियों का अभिलिखित साक्षात्कार किया जाता है जो भूतकालीन घटनाओं में अपनी सहभागिता रखते हो अथवा जो पुरातन जीवन पद्धति का अनुभव रखते हों। वृतान्त में अनुसंधानकर्ता उन लोगों के

अनुभव जानने अथवा अभिलिखित करने का प्रयास करता है जो किसी वि"ोष घटना की जानकारी रखते हैं तथा वे उनमें सहभागी रहे हों। ब्रिटि"ा शासन काल में अनेक अंग्रेज प्र"ाासक

कई बार वृतान्त प्रि"ाक्षित अंग्रेज विद्वानों द्वारा स्वयं लिखे गये जिनका प्रका"ान टिप्पणियों और पूछताछ के रूप में हुआ। साथ ही कई अंग्रेजों द्वारा भारत की जनजातियों क्षेत्रों तथा दूरदराज गांवों के बारे में वृतान्त लिखे गये हैं जिनके माध्यम से जनजातीय क्षेत्र तथा दूरदराज गांवों के उस समय की जीवन पद्धति के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

14.3 मौखिक इतिहास का अर्थ

मौखिक इतिहास ऐतिहासिक सामग्री संकलित की प्रमुख पद्धति है। इतिहास लेखन में कई आधार एवं रूप हैं। मौखिक इतिहास विधि में वयोवृद्ध व्यक्तियों से साक्षात्कार किया जाता है और उन घटनाओं के बारे में जानकारी एकत्रित की जाती है जो उनकी बाल्यावस्था, कि"ोारावस्था, युवावस्था और प्रौढ़ावस्था में घटी है और वे उन घटनाओं के प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में च"मदीद गवाह रहे हैं। इसके साथ ही उनसे अपनी बाल्यावस्था, कि"ोारावस्था, युवावस्था और प्रौढ़ावस्था की घटनाओं , कार्याकलापों और मनोभावों के बारे में भी बताने के लिए कहा जाता है। इस प्रकार इस विधि द्वारा विगत इतिहास लेखन कर जीवन इतिहासों की रचना की जाती है। यह विधि सर्वेक्षणं विधि और सामाजिक इतिहास का मिलाजुला रूप है। यह आमतौर पर किसी व्यक्ति द्वारा दिये गये कथन होते हैं जो अनुसंधानकर्ता किसी व्यक्ति से गहन साक्षात्कार के माध्यम से एकत्र करता है। जैसे किसी अपराधी या निर्धन व्यक्ति की आप बीती। इस अध्ययन के लिए साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के पूर्ण सहयोग की आव"यकता होती है। मौखिक इतिहास का अर्थ दो रूपों में स्पष्ट किया जा सकता है–

1. यह गुणात्मक अनुसंधान की प्रक्रिया है जिसमें व्यक्तिगत साक्षात्कार को आधार माना जाता है ताकि भूतकालीन घटनाओं से संबन्धित अर्थों निर्वचनों एवं अनुभवों को समझा जा सके।
2. इसे मौलिक ऐतिहासिक प्रलेख माना जाता है जोकि आगामी अनुसंधानों हेतु प्राथमिक सामग्री उपलब्ध कराने का कार्य करता है इसमें आडियो या विडियों तथा टेपरिकार्डर का प्रयोग किया जाता है जो स्वयं में उत्पादन है।

बोध–प्रश्न 1

(i) वृतान्त तथा मौखिक इतिहास के अर्थ को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

14.4 मौखिक इतिहस एवं वृतान्त प्रविधियों द्वारा तथ्य संकलन में कठिनाइयां

मौखिक इतिहस एवं वृतान्त प्रविधियों द्वारा गुणात्मक तथ्यों को संकलन के प्रयोग करने पर निम्नलिखित कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है –

1. **उचित सम्पर्क का अभाव** : इस प्रविधियों की सर्वप्रथम कठिनाई उन लोगों से सम्पर्क स्थापित करने से संबन्धित है क्योंकि व्यक्तियों द्वारा सरलता से अपने जीवन के बारे में बताने के लिए तैयार नही होते हैं अथवा अपने अनुभव के बारे में बताने हेतु तत्पर नहीं होते।

2. **वि"वसनीयता की कमी** : इस प्रविधियों द्वारा एकत्रित तथ्य और सूचनाओं में वि"वसनीयता की कमी होती है क्योंकि संबन्धित व्यक्तियों द्वारा सूचनाओं अथवा अपने अनुभवों को बढ़ा चढ़ा कर बताते हैं जिसमें सूचनाओं की वि"वसनीयता सन्देहजनक हो जाती है।
3. **विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में समन्वय की कमी** : सामाजिक अध्ययन में इस प्रकार की गुणात्मक प्रविधियों का प्रयोग करने के लिए यह आव"यक है कि अनुसंधानकर्ता को सबसे पहले विभिन्न सामाजिक विज्ञानों के परिपेक्ष्य की विस्तृत जानकारी प्राप्त करना अनिवार्य है। इन विभिन्न प्रकार के परिस्थितियों में समन्वय स्थापित करने में कठिनाई आती है। अनुसंधानकर्ता को जो सामाग्री इन विभिन्न परिपेक्ष्यों से प्राप्त होती है उसका क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण भी एक समस्या बन जाती हे।
4. **व्यक्तिगत अभिनति** : सूचनादाता एवं अनुसंधानकर्ता दोनों की ओर से अभिनति पैदा होने की सम्भावना सदैव बनी रहती है। दोनों की भूमिकाओं में समन्वय रखना तथा व्यक्तिगत पक्षपात को नियंत्रित करना दोनों प्रविधियों के प्रयोग में आने वाली प्रमुख कठिनाई है।
5. **नैतिक मूल्यों**: सूचनादाता एवं अनुसंधानकर्ता में इन प्रविधियों द्वारा सामग्री एकत्रित करने हेतु स्थापित सम्पर्क एवं एकत्रित सूचना से संबन्धित एक अन्य कठिनाई नैतिक मूल्यों से संबन्धित है यदि अनुसंधानकर्ता यदि नैतिक मूल्यों के कारण सूचनादाता द्वारा बताये गये वृतान्त को हू ब हू प्रस्तुत करता है तो हो सकता है कि सूचनादाता के हितों को किसी प्रकार का नुकसान हो, यदि सूचनादाता होने वाले नुकसान के प्रति सचेत है तो वह अनेक ऐसी सूचनाएं जीवन इतिहास एवं वृतान्त में लिखता ही नहीं है।

बोध–प्रश्न 1

(i) वृतान्त तथा मौखिक इतिहास की किन्ही दो कठिनाइयों को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

14.5 सारां"ा

वृतान्त सदियों पुरानी तथ्य संकलन की एक प्रविधि है इसी प्रकार की एक और प्रविधि है जिसे मौखिक इतिहास कहते है। जो गुणात्मक तथ्यों को संकलित करने की महत्वपूर्ण प्रविधियॉ हैं। अतीत में कोई ऐसी सूविधा नहीं थी जिससे इनको संग्रहीत किया जा सके। अर्थात् लिखित परम्परा नहीं थी सारे लोग मौखिक रूप में ही याद करते थे और आव"यकता पड़ने पर अपनी स्मरण शक्ति के कारण उनको वस्तु या घटना के बारे में बता भी देते थे। वर्तमान में अनेक अत्याधुनिक उपकरणों के माध्यम से सूचनाओं का संकलन किया जाता है जो अधिक वि"वसनीय होते हैं।

14.6 परिभाषिक शब्दावली

वि"वसनीयता– यह सांख्यिकीय जांच या किसी अध्ययन में असंगति, वस्तुनिष्ठता और स्पष्टता को बताता है।

साक्षात्कार– एक व्यक्ति अथवा समूह के साथ विशिष्ट प्रायोजन से आयोजित औपचारिक वार्तालाप की प्रक्रिया साक्षात्कार कहलाती है।

तथ्य–तथ्य का तात्पर्य किसी ऐसी घटना से है जिसका अवलोकन किया जा सके।

सूचनादाता– वे लोग जो सर्वेक्षण के बारे में सूचना देते हैं। यह सूचना साक्षात्कार या प्रश्नावली के माध्यम से ली जाती सकती है।

14.7 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर वृतान्त का अर्थ तथा मौखिक इतिहास का अर्थ शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर वृतान्त तथा मौखिक इतिहास की कठिनाइयां शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

14.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** कालेज बुक डिपो .जयपुर.

राय, पारस नाथ. **2004. अनुसंधान परिचय.** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल. आगरा.

गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोशियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरनेशनल. ऑकलैण्ड.

Donald Polkinghorne, *Narrative Knowing and the Human Sciences* , Albany: SUNY Press, 1988

Coffey, Amanda & Paul Atkinson (1996). "Making Sense of Qualitative Data." Thousand Oaks, CA: Sage Publications.

Polkinghorne, Donald E. (1995). Narrative configuration in qualitative analysis. Qualitative studies in education, Vol. 8, issue 2.

14.9 सहायक उपयोगी पाठ्य साम्रगी

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers.

Young P.V. (1960). Scientific Social Surveys and Research. Asia Publishing House. Bombay.

Riessman, C.K. (1993). "Narrative Analysis". Newbury Park: Sage Publications.

Smith C.P. (2000). Content analysis and narrative analysis. In: Reis HT, Judd CM, eds. *Handbook of research methods in social and personality psychology*. New York, NY: Cambridge University Press.

14.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. वृतान्त से आप क्या समझते है ? वृतान्त तथा मौखिक इतिहास की कठिनाइयों का उल्लेख कीजिए।
2. मौखिक इतिहास से आप क्या समझते है ? वृतान्त तथा मौखिक इतिहास की कठिनाइयों का उल्लेख कीजिए।

इकाई 15 द्वितीयक आधार सामग्री तथा कार्यालयी अभिलेख
Secondary Data Base & Official Document

15.0 उद्दे"य
15.1 प्रस्तावना
15.2 आधार सामग्री प्रलेख
15.3 प्रलेखों के प्रकार
15.4 प्रलेख के लाभ
15.5 प्रलेख की समस्याएं
15.6 कार्यालय अभिलेख
15.7 सारांश
15.8 परिभाषिक शब्दावली
15.9 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर
15.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
15.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
15.12 निबंधात्मक प्र"न

15.0 उद्दे"य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- आधार सामग्री प्रलेख के अर्थ को समझ पाना,
- प्रलेख के प्रकार को समझ पाना,
- आधार सामग्री प्रलेख की उपयोगिता तथा कठिनाई को समझ पाना,
- कार्यालय अभिलेख को बताना।

15.1 प्रस्तावना

सामाजिक अनुसंधान के लिए केवल प्राथमिक सामग्री ही पर्याप्त नहीं होती बल्कि अनेक सामाजिक घटनाओं को समझने तथा प्राथमिक तथ्यों की प्रमाणिकता की परीक्षा करने में द्वितीयक सामग्री के संकलन की भी आव"यकता होती है। द्वितीयक तथ्य से अभिप्राय उन सभी सूचनाओं से है जो इस अध्ययन के पूर्व किसी अन्य व्यक्ति या संस्था द्वारा एकत्रित किये गये हों। इनमें पत्र, डायरियां, आत्मकथाएं, पाण्डुलिपियां, सरकारी प्रतिवेदन, जनगणना रिर्पोट, गेजेटियर, प्रलेख, अभिलेख आदि आते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि द्वितीयक तथ्य पहले से उपलब्ध होते हैं जिनका उपयोग कोई शोधकर्ता अपने शोध विषय की आव"यकतानुसार करता है। किसी शोधकर्ता सरकारी या गैरसरकारी संगठन द्वारा इस प्रकार की सामग्री से पहले संकलित किये होते हैं।

15.2 द्वितीयक आधार सामग्री

द्वितीयक स्रोतों द्वारा एकत्रित सामग्री को द्वितीयक आधार सामग्री कहा जाता है। इसे अनुसंधानकर्ता दूसरे के अनुसंधान से प्राप्त करता है अर्था इसे स्वयं अनुसंधानकर्ता संकलित नही करता है। द्वितीयक तथ्यों के संग्रह में प्रलेख शोध के लिए महत्वपूर्ण आधार सामग्री प्रदान करते हैं। शोध कार्य आरम्भ करने से पूर्व परिकल्पनाओं के निर्माण में द्वितीयक सामग्री का इनमें पुस्तकें, पत्रिकाएं, अखबार, रिपोर्ट, फाइलें, आत्मकथाएं, पत्र तथा डायरियां ये सभी कुल आते हैं। किसी भी समाज के इतिहास को ज्ञात

करने में द्वितीयक सामग्री अत्यन्त उपयोगी होती है। द्वितीयक सामग्री का प्रयोग करते समय अनुसंधानकर्ता के लिए यह स्थापित करना अनिवार्य होता है कि जिन पद्धतियों, साधनों, साक्ष्यों एवं प्रलेखों का उसने अपने अनुसंधान में प्रयोग किया है वे वि"वसनीय और संदेहरहित हैं।

15.3 प्रलेखों के प्रकार

प्रकाि"ात तथा अप्रकाि"ात प्रलेखों को द्वितीयक आधार सामग्री के रूप में सम्मिलित करते हैं। प्रलेखों को हम मुख्यतः छः प्रकारों में विभाजित कर सकते हैं –

1. विधि और नियम
2. प्र"ाासनिक प्रतिवेदन
3. शोध इतिहास
4. आंकड़ों के प्रका"ान
5. व्यक्तिगत प्रलेख
6. अभिलेख

1. विधि और नियम : सामाजिक शोध में यदि किसी सरकारी या गैर सरकारी संगठन से संबन्धित अध्ययन करना हो तो उसके लिए संविधान, विधि और नियमों की जानकारी होना बहुत आव"यक होगी। अनेक अन्य संगठनों जैसे राजनीतिक दलों, स्वैच्छिक समाजसेवी संगठनों और क्लबों के अपने संविधान होते हैं। अध्ययन के लिए दूसरे महत्वपूर्ण प्रलेख विधि से संबन्धित होते हैं। बहुत से संगठन जैसे वि"वविद्यालय, लोक निगम आदि विधि द्वारा ही बनाये जाते हैं। इनका संविधान उस विधि द्वारा होता है जिनके माध्यम से इनकी स्थापना होती है बहुत से दूसरे संगठनों के कार्यों और अधिकारों का वर्णन भी विधियों में होता हैं। उदहारण के लिए, आयकर अधिनियम, दण्ड प्रक्रिया संहिता, कारखाना अधिनियम, औद्यौगिक विवाद अधिनियम, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम आदि एक शोधार्थी के लिए अत्यन्त आव"यक हैं कि वह इन विधियों का स्वयं अध्ययन करे।

दूसरी ओर अध्ययन के लिए नियमों का अध्ययन भी महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय समाज के बहुत से अंग विधियों के स्थान पर नियमों द्वारा नियोजित होते हैं। जैसे संविधान की धारा 309 द्वारा संसद और राज्यों के विधि मण्डलों को यह अधिकार दिया गया है कि वे विधि द्वारा अपने–अपने कर्मचारियों की नियुक्ति तथा सेवा की शर्तों का नियंत्रण करे। प्रत्येक संस्था या संगठन कार्यों को करने के लिए बहुधा नि"चित कार्य विधियां होती हैं, इन्हें भी नियम कहा जा सकता है ये विधियों के अन्तर्गत बने नियमों से भिन्न होते हैं।

2. प्र"ाासनिक प्रतिवेदन : प्रत्येक प्रतिवेदन का यह उद्दे"य होता है कि क्या प्रयत्न किये जा रहे हैं उनमें साधनों पर कितना व्यय हुआ, क्या समस्याएं सामने आयी और क्या निष्पत्ति आयी आदि। यह प्रतिवेदन प्रत्येंक संगठन द्वारा जनता तथा ग्राहकों को तथा निम्न स्तर से उच्च स्तर को दिये जाते हैं। इनके माध्यम से महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होती है यह किसी भी संगठन तथा उसके कार्य के विषय में जानने के महत्वपूर्ण साधन होते हैं। जैसे पंचवर्षीय के प्रतिवेदन, इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा प्रकाि"ात विभिन्न जिलों के गजेटियर्स तथा सांख्यिकीय बुलेटिन आदि भी सूचनाएं प्राप्त करने के मुख्य साधन हैं। संसद द्वारा प्रतिवर्ष प्रस्तुत आर्थिक सर्वेक्षण के माध्यम से पूर्ण आर्थिक जानकारी प्राप्त होती है। चुनाव आयोग, विधान सभा, आम चुनाव तथा अन्य चुनाव का ब्यौरा तथा आंकड़े अपने प्रतिवेदन में प्रस्तुत करता है, प्र"ाासन के प्रत्येक विभाग द्वारा अपने विभाग से संबन्धित पिछले वर्ष की निष्पत्ति और व्यय तथा अगले वर्ष के प्रस्तावित कार्यक्रमों और व्यय का पूर्ण ब्यौरा बजट में मिल जाता है इस प्रकार सभी

प्रतिवेदन द्वितीयक आधार सामाग्री के रूप में महत्वपूर्ण साधन हो सकते हैं जिनसे मूल्यवान सामग्री प्राप्त हो सकती है।

3. शोध इतिवृत्त : सामाजिक अनुसंधान के माध्यम से शोध विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन या शोध प्रबंध भी बहुत अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं अनुसंधानकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत शोध प्रबंध में यद्यपि किसी विषय से संबन्धित पत्रों का अत्यधिक गहन अध्ययन करके महत्वपूर्ण तथ्य प्रका"ा में लाये जाते है लेकिन वि"ोष सामाजिक अनुसंधान की दि"ाा का निर्धारण करने तथा प्राप्त सूचनाओं का सत्यापन करने के लिए शोध प्रतिवेदन बहुत महत्वपूर्ण होते हैं वि"वविद्यालय, सरकार के बहुत से अधिकरण तथा गैर सरकारी संगठन शोध इतिवृत्त का प्रका"ान करते रहते हैं वि"वविद्यालयों में होने वाली शोध पर आधारित सूक्ष्म इतिवृत्त पत्रिकाओं में शोध पत्रों के रूप में प्रकाि"ात होते हैं तथा इसी को बृहद इतिवृत्त पुस्तक के रूप में प्रकाि"ात होता है। साथ ही कुछ शोध कार्य प्रकाि"ात नहीं होते बल्कि वि"वविद्यालयों के पुस्तकालयों में संग्रहित होत हैं। आई. सी. एस. एस. आर., यू0जी0सी0, एन0सी0आर0टी0 तथा अन्य संस्थान प्रायोजनाओं के लिए प्रतिवर्ष अनुदान देती है तथा इनके इतिवृत्तों को प्रकाि"ात भी करवाती है। इतिवृत्त में सग्रहीत सामग्री या आधार सामग्री का पुनः से अन्य शोधकर्ताओं द्वारा उपयोग किया जाता है। ऐतिहासिक सामग्री के बढ़ते हुए प्रयोग के परिणामस्वरूप अनेक सरकारी, अर्द्ध सरकारी एवं गैर सरकारी संगठन एवं संस्थाएं सामग्री आधार एवं सामग्री बैंक तैयार करने का कार्य करने लगे हैं ताकि आव"यकता पडने पर इनका प्रयोग किया जा सके। भारतीय वि"वविद्यालय संघ द्वारा भारतीय वि"वविद्यालयों पर जो सामग्री प्रकाि"ात की जाती है वह आधार सामग्री एवं सामग्री बैंक का कार्य करती है। इसके अन्तर्गत कितने विभाग और उनमें आचार्य, उपाचार्य एवं लैक्चरर आदि का पता चल जाता है। इसी प्रकार भारतीय सामाजिक अनुसंधान परिषद् द्वारा समाज वैज्ञानिकोंकी सम्पूर्ण सूची को पुस्तिका के रूप में तैयार कराया जाता है।

सरकार के विभाग तथा अन्य गैर सरकारी संगठन समय–समय पर शोध का काम करते हैं तथा इतिवृत्त को प्रकाि"ात भी करते हैं। सरकारी संगठनों द्वारा आयोगों के माध्यम से एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता है जिससे मूल्यवान जानकारी प्राप्त होती है। जैसे वित्त आयोग, वेतन आयोग, आदि। गैर सरकारी संगठन भी नियमित रूप से शोध कार्य करवाते रहते हैं और इनके इतिवृत्तों से भी महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होती है।

बोध–प्रश्न 1

(i) इतिवृत्त को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4. आंकड़ों का प्रका"ान : द्वितीयक तथ्यों के अन्तर्गत सरकार द्वारा प्रकाि"ात उन आंकड़ों का वि"ोष महत्व होता है जिन्हें सरकार द्वारा विभिन्न विभागों की सहायता से एकत्र किया जाता है फिर उन्हें प्रकाि"ात कर जनसाधारण को उनकी सूचना दी जाती है इसमें मुख्यतः केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी स्थापना सन् 1951 में हुई जिसका मुख्य उद्दे"य सारे दे"ा के आंकड़ों से संबन्धित कार्यकलापों में समन्वय लाना तथा संप्रत्ययों को परिभाषित कर एक नि"चित मानक तय करना

था। इन्ही मानकों तथा परिभाषाओं के आधार पर सारे दे"ा के आंकड़े तैयार किये गये। यह राज्यों के सांख्यिकीय विभागों के मध्य समन्वय स्थापित करता है और प्रत्येक राज्य का सांख्यिकीय विभाग राज्य सरकार के विभागों के मध्य समन्वय लाता है। जिससे समस्त विभागों के आंकड़ों का आधार एक से रखा जा सके। उदहारण के रूप में निम्नलिखित विभागों द्वारा आंकड़ों का संग्रह तथा प्रका"ान का कार्य किया जाता है–

1. **अर्थ एवं सांख्यिकीय निदे"ालय, विधि तथा कृषि मंत्रालयः** इसकी स्थापना 1947 में हुई थी। इसका मुख्य उद्दे"य कृषि संबंधी आंकड़ों का संग्रह, संसाधन और आंकड़ों का प्रका"ान करना है।
2. **भारतीय सेना सांख्यिकीय संगठन** : इसकी स्थापना 1947 में सीमा के सैनिकों, सामान, गाड़ियों, निवास आदि के आंकड़े तैयार करने के उद्दे"य से हुई थी।
3. **श्रम ब्यूरो** : इसकी स्थापना 1946 में हुई थी इसका कार्य श्रम से संबन्धित आंकड़े तैयार किये जाते हैं।
4. **औद्योगिक सांख्यिकीय विभाग** : उद्योग धंधों से संबन्धित आंकड़ों को तैयार करता है।
5. **राश्ट्रीय प्रतिद"र्ा सर्वेक्षण** : यह संगठन दे"ा की अर्थव्यवस्था के विभिन्न पक्षों से संबन्धित आंकड़े प्रतिद"र्ा सर्वेक्षण द्वारा एकत्र करता है। इसकी स्थापना 1950 में हुई थी।
6. **महापंजीयक और जनगणना आयुक्त विभाग** : यह संगठन जनगणना अधिनियम 1948 के अधीन जनगणना का कार्य करता है।
7. **रिर्जव बैंक ऑफ इंडिया**– वित्त मंत्रालय के अंतर्गत ऋण, वित, गरीबी, मुद्रा–स्फीति, रहन–सहन, प्रतिव्यक्ति आय एवं अन्य आर्थिक तथ्य संकलित किये जाते हैं और विभिन्न प्रतिवेदनों के माध्यम से प्रकाि"ात किये जाते हैं।

क. जनगणना के आंकड़े : जनगणना का तात्पर्य समग्र की समस्त इकाइयों का अध्ययन करना है। इस समग्रता की इकाई एक समूह, समुदाय या सम्पूर्ण राष्ट्र हो सकता है। जनगणना को वृहत् आंकड़ों का एक प्रमुख सामाजिक प्रलेख माना जाता है। वि"व के लगभग सभी दे"ाों में प्रत्येक दस वर्ष प"चात् जनगणना करायी जाती है जिससे उस दे"ा से संबंधित जनसंख्या के बारे में विविध प्रकार की सूचनाओं का संकलन किया जाता है। जनगणना रिपोर्ट के आधार पर ही किसी दे"ा की भावी नीति का निर्माण किया जाता है। नियोजन के इस युग में सामाजिक और आर्थिक जीवन के सभी पक्षों पर सरकार के नियंत्रण में निरंतर वृद्धि होती जा रही है। जनगणना के द्वारा सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन के अनेक महत्वपूर्ण पक्षों के विषय में वि"वसनीय आंकड़े व सूचनायें प्राप्त हो जाती हैं। 1872 में भारत में प्रथम बार जनगणना हुई थी और 1881 में दूसरी। इसके प"चात प्रति दस वर्ष बाद जनगणना होती आ रही है। इन आंकड़ों के माध्यम से हमें परिवार का आकार, ग्रामीण–"ाहरी जनसंख्या, स्त्री–पुरूष अनुपात, जनसंख्या घनत्व, विभिन्न भाषा बोलने वाले की जनसंख्या, विभिन्न धर्मों के लोगों की जनंसख्या, विभिन्न क्षेत्रों में कार्य"ाील व्यक्तियों की संख्या, बेरोजगारी, जन्मदर, मृत्युदर, आयु का विवरण, साक्षरता, प्रति व्यक्ति आय, आदि के विषय में पता लग सकता है। पूरे भारत, प्रत्येक राज्य और प्रत्येक जिले के आंकड़े अलग–अलग प्रकाि"ात किए जाते हैं। इन सब दृष्टिकोण से जनगणना का अत्यधिक महत्व है और इसीलिए कहा जाता है कि जनगणना योजना विकास की कुंजी है। भारत में आज केन्द्र तथा राज्य स्तर पर तथ्य संकलन के कार्य को अत्यधिक व्यापक और व्यवस्थित रूप से पूर्ण किया जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि जनगणना की रिपोर्ट अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उपयोगी प्रका"ान हैं जोकि जनसंख्या से संबंधित विवधि प्रकार के आंकड़ें प्रस्तुत करने एवं भावी नीतियां बनाने में सहायक हैं।

सामग्री संकलन के द्वितीयक स्रोतों के रूप में केन्द्र और राज्य स्तर पर कुछ ऐजन्सियों को अग्रांकित रूप से समझा जा सकता है –

1. **केन्द्र स्तर से संबन्धित स्रोत** : विभिन्न मंत्रालयों तथा सरकार द्वारा गठित संगठन द्वारा अनेक उपयोगी सूचनाओं का संकलन किया जाता है।
2. **कृशि तथा ग्रामीण पुनर्निर्माण मंत्रालय** : इस मंत्रालय के अधीन आर्थिक एवं सांख्यिकीय निदे"ालय द्वारा कृषि, कृषि उपज के मूल्य, कृषि मजदूरी तथा कृषि से संबन्धित विकास कार्यों के बारे में अधिकृत सूचनाओं का संकलन किया जाता है।
3. **वित्त मंत्रालय** : इस मंत्रालय के अधीन रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के द्वारा समय–समय पर अनेक महत्वपूर्ण सर्वेक्षण करके आंकड़ों का संकलन किया जाता है। दे"ा की मुद्रा स्फीति, रहन–सहन का स्तर, प्रति व्यक्ति आय, आर्थिक व्यवस्था से संबंन्धित अनेक तथ्यों को जानने के लिए मंत्रालय के प्रतिवेदन अधिक महत्वपूर्ण स्रोत का कार्य करते हैं।
4. **वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय**– इसके अंतर्गत कुल उत्पादन तथा दे"ा की आर्थिक स्थिति से संबंधित तथ्यों का संकलन कर भारतीय व्यापार पत्रिका में इन आंकड़ों को प्रकाि"ात किया जाता है जो वाणिज्य तथा उद्योग से संबंधित होते हैं।
5. **ि"ाक्षा मंत्रालय**– इसके अंतर्गत ि"ाक्षा का स्तर अर्थात दे"ा में साक्षरता की स्थिति, शैक्षणिक विकास, शैक्षणिक नीतियां, पिछड़े वर्गों के कल्याण तथा सामाजिक नियोजन जैसे समाज कल्याण कार्यों व ि"ाक्षा से संबंधित आंकड़ों का संकलन कर प्रकाि"ात किया जाता है।
6. **श्रम मंत्रालय**– इस मंत्रालय के द्वारा भारतीय श्रम गजट, आर्थिक पत्रिका में श्रमिकों से संबंधित आंकड़ों जैसे श्रमिक अधिनियमों, श्रम सुरक्षा, श्रम कल्याण तथा श्रमिक आय संबंधित तथ्यों को प्रकाि"ात किया जाता है।
7. **सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय**– सूचनाओं और आंकड़ों के संकलन तथा उनके प्रका"ान में इस मंत्रालय की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। इस मंत्रालय का महत्वपूर्ण विभाग प्रका"ान विभाग है इसकी स्थापना 1953 में हुई थी। इस मंत्रालय का प्रका"ान विभाग अन्य सभी मंत्रालयों राज्य सरकारों तथा संगठनों से सूचनाएं प्राप्त करके उन्हें प्रकाि"ात करता है। जैसे जंनसंचार, आर्थिक नियोजन, नागरिक आपूर्ति, कृषि, स्वास्थ्य, ि"ाक्षा, वैज्ञानिक अनुसंधान आदि क्षेत्रों से संबंधित नवीनतम सूचनाओं का संकलन करने के लिए यह विभाग सर्वप्रथम स्रोत है।
8. **गृह मंत्रालय** : दे"ा की आन्तरिक परिस्थितियों या द"ाओं से संबन्धित सूचनाओं को संकलित किया जात है तथा उनका जनगणना प्रतिवेदन तथा भारत की जनगणना प्रपत्र में प्रका"ान रजिस्ट्रार जनरल के कार्यालय से किया जाता है इसके अधीन ही जनगणना संबंधी आकड़ों को एकत्रित करने का कार्य किया जाता है सामाजिक समस्याओं से संबन्धित किसी भी अध्ययन कार्य में इस मंत्रालय द्वारा प्रकाि"ात आंकड़ों का वि"ोष महत्व होता है।
9. **रेल मंत्रालय**– रेलवे सांख्यिकीय मासिक पत्रिका में भारतीय रेल परिवहन संबंधी सूचनाएं प्रकाि"ात की जाती है।
10. **मानव संसाधन विकास मंत्रालय**– इस मंत्रालय के अन्तर्गत दे"ा की साक्षरता, शैखणिक विकास, सामाजिक नियोजन ि"ाक्षा संबंधी नीतियां, पिछड़े वर्गों के कल्याण तथा मानवीय स्रोतों के उपयोग की द"ाा आदि के आधार पर सूचनाओं को प्रकाि"ात किया जाता है । सामाजिक अध्ययनों में इस मंत्रालय के प्रतिवेदनों को वि"ोष रूप से उपयोगी तथा प्रमाणिक सिद्ध होते हैं।

11. **नियोजन मंत्रालय** : वर्तमान परिस्थितियों में दे"ा के सम्पूर्ण सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन संबंधी कार्यक्रमों को तैयार करने तथा उन्हें लागू करने के लिए विभिन्न मंत्रालयों से आधार सामाग्री प्रदान करने में नियोजन मंत्रालय की भूमिका अत्यधिक है। एक ओर विभिन्न योजनाओं के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण तथ्यों का संकलन किया जाता है तो दूसरी ओर उपलब्ध साधनों और भावी आव"यकताओं में समन्वय करते हुए सभी योजनाओं को प्रस्तुत किया जाता है।
12. **शहरी कार्य तथा रोजगार मंत्रालय**– इस मंत्रालय के माध्यम से नगर नियोजन, नगरीकरण की प्रक्रिया, नागरिक सुविधाओं, तथा नगरीय रोजगार से संबंधित आंकड़े सामाजिक अध्ययनों के लिए प्रमुख द्वितीयक स्रोत है।
13. **केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन** : भारत में केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन प्रायः तीन इकाइयां राष्ट्रीय आय, औद्योगिक विकास तथा विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षणों के लिए स्वतंत्र रूप से कार्य करती हैं जबकि अन्य इकाइयां स्वयं सूचनाओं को एकत्रित नहीं करती बल्कि केन्द्रीय सरकार के विभिन्न विभागों से सूचनाओं का संकलन करके उनका प्रका"ान करती हैं। इनका मुख्य कार्य विभिन्न क्षेत्रों से संबन्धित सूचनाओं को एकत्रित करके उनका समन्वय करना उन्हें प्रका"ान करना है। साधारणतया जिला स्तर की सूचनाएं राज्य स्तर पर समन्वित की जाती है तथा राज्य स्तर की सूचनाएं केन्दीय सांख्यिकीय संगठन को प्रेषित की जाती है।
14. **परिवहन विभाग**– यह विभाग भारतीय परिवहन संबंधी तथ्यों का संकलन कर उन्हे ट्रैफिक सर्वे में प्रकाि"ात करवाता है।
15. **सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय**– इस विभाग की स्थापना 1953 में हुई। इस विभाग का प्रका"ान विभाग तथ्यों के संकलन और प्रका"ान का महत्वपूर्ण कार्य करता है। यह विभाग प्रतिवर्ष अंग्रेजी में इंडिया और हिन्दी भाषा में भारत नाम की पत्रिका का प्रका"ान करता है। इसके अंतर्गत आर्थिक आंकड़े, स्वास्थ्य, ि"ाक्षा, जनसंख्या, जनसंचार, समाज कल्याण, भूमि सुधार, सहकारिता, उद्योग, कृषि, सिंचाई, सांस्कृतिक गतिविधियां परिवहन, श्रम तथा आवास आदि से संबंधित नवीनतम आंकड़े प्रकाि"ात किये जाते हैं।
16. राष्ट्रीय निर्दे"ान सर्वेक्षण संगठन : राष्ट्रीय निर्द"ान सर्वेक्षण निदे"ालय की स्थापना 1950 में हुई जिसका मुख्य उद्दे"य चुने गये क्षेत्रों में निद"ान के आधार पर व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करके उनकी आव"यकताओं की जानकारी प्राप्त करना था तथा इसकी सहायता से योजना आयोग को योजनाओं के निर्धारण में सहायता प्रदान करना था। इस उपयोगिता को देखते हुए सन् 1971 में राष्ट्रीय निद"ान सर्वेक्षण संगठन का निर्माण किया गया यह संगठन दे"ा की अर्थव्यवस्था, आवासीय स्थिति, आय और व्यय के प्रतिमानों, बेरोजगारी तथा कृषि मजदूरों की स्थिति आदि से संबन्धित आंकड़ों को नियमित रूप से एकत्रित करता है तथा योजना आयोग की सहायता करता है। यह स्वयं सूचनाओं की संकलित नहीं करता वरन् सरकारी विभागों द्वारा किये जाने वाले सर्वेक्षण का तकनीकी मार्गद"ान करता है।

उपर्युक्त मंत्रालयों के अतिरिक्त वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय, विधि और न्याय मंत्रालय, पर्यटन मंत्रालय भी सामाजिक अध्ययनों को अनेक उपयोगी सूचनाएं प्रदान करते हैं। केन्द्र में केन्द्रिय सांख्यिकीय संगठन सरकारी आंकड़ों को प्रकाि"ात कर जनसाधारण को उपलक्ष्ध कराने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है साथ ही विभिन्न राज्यों में यह कार्य सांख्यिकीय विभाग द्वारा किया जाता है।

बोध–प्रश्न 2

(i) तथ्य संकलन में केन्द्र सरकार की किन्ही दो ऐजन्सियों को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

ख. **राज्य स्तर से संबन्धित स्रोत** : सामाजिक अनुसंधान में द्वितीयक तथ्यों के रूप में राज्य स्तर के मंत्रालयों तथा विभागों द्वारा प्रकाि"ात आंकड़ों की भूमिका अहम् होती है। राज्य स्तर पर समय–समय पर श्रम कल्याण, स्वास्थ्य, आवास, रोजगार, श्रमिकों की स्थिति आदि विषयों से संबंन्धित आंकड़ों को एकत्रित करके उनका प्रका"ान किया जाता रहता है। पृथक–पृथक विभाग द्वारा पृथक पृथक सूचनाएं एकत्रित की जाती है। इन सूचनाओं को व्यवस्थित रूप से प्रकाि"ात करने का कार्य सूचना विभाग का होता है। राज्य स्तर पर नवीन आंकड़ों को एकत्रित करने तथा उनका समन्वयन करने में सांख्यिकीय ब्यूरो की भूमिका अहम् होती है। इस सांख्यिकीय ब्यूरो की सहायता से जिले स्तर पर सांख्यिकीय अधिकारी नियुक्त किये जाते है जो विभिन्न विभागों से जिले स्तर पर सूचनाएं एकत्रित करते हैं तथा उन्हें सांख्यिकीय ब्यूरो को भेजते हैं।

सरकारी आंकड़ो के गुण–दोश

गुण– 1. अन्य स्रोतों की अपेक्षा सरकारी आंकड़े अधिक वि"वसनीय होते हैं।

2. सामाजिक अनुसंधान में इन आंकड़ो का उपयोग सरलता से उपयोग किया जाता है।

3. सरकारी आंकड़ो का समय समय से प्रका"ान होने के कारण सरलता से आंकड़े प्राप्त किये जा सकते है।

4. ये आंकड़े अधिक वि"वसनीय और प्रमाणिक होते हैं क्योकि इन्हे वृहद संगठन तथा प्रि"ाक्षित व्यक्तियों द्वारा एकत्रित किये जाते हैं।

5. सरकारी आंकड़ो में किसी प्रकार का पक्षपात नही पाया जाता।

6. सरकारी आंकड़े व्यापक जानकारी प्रदान करने के साथ ही योजना निर्माण में सहायक होते हैं।

दोश–1. सरकार आंकड़ो के अंतर्गत सरकार की असफलता द"ार्ाने वाले आंकड़ो को प्रकाि"ात नही कराया जाता क्योंकि ये आंकड़े सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों की दृष्टि के अनुसार ही उपयोग में लसये जाते हैं।

2. सरकारी आंकड़ो में वस्तुनिष्ठा का अभाव पाया जाता है क्योंकि इनके द्वारा केवल विभागों की सफलता को ही द"ार्ाया जाता है।

3. सरकारी कर्मचारियों की लापरवाही, कामचोरी, खाना पूर्ति तथा बेईमानी के कारण वि"वसनीयता को खो देते हैं।

7 **व्यक्तिगत प्रलेख** : व्यक्तिगत प्रलेखों से तात्पर्य प्रलेखों या लिखित सामाग्री से है जिन्हें किसी व्यक्ति द्वारा निजी रूप से लिखा जाता है संकुचित अर्थ में इनमें किसी व्यक्ति द्वारा निजी क्रियाओं, अनुभवों तथा वि"वासों से लिखे गये प्रलेखों को सम्मिलित किया जाता है। व्यक्तिगत प्रलेख सामाजिक घटनाओं को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि इनसे वास्तविक तथ्यों का पता चलता है। इसमें जीवन इतिहास, डायरी तथा व्यक्तिगत प्रमुख रूप से सम्मिलित किया जाता है। जीवन इतिहास से तात्पर्य विस्तृत आत्मकथा से है। तथ्य संकलन के द्वैतीयक स्रोत के रूप में जीवन इतिहास का काफी महत्व है। जीवन इतिहास में व्यक्ति अपने जीवन की घटनाओं और सुझावों का बहुत विस्तार के

साथ स्वाभाविक विवेचन करता है। इसमें किसी व्यक्ति के जीवन इतिहास से उसके समय की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं विभिन्न प्रकार की घटनाओं को समझने में सहायता मिलती है, इससे किसी एक विशेष काल की सामाजिक परिस्थितियों एवं समस्याओं को भली प्रकार समझा जा सकता है। आत्मकथाओं में दूसरे प्रकार के व्यक्तिगत प्रलेखों में कुछ अधिक विस्तृत होने ही सम्भावना है क्योंकि लेखक अपने गुणों को बढ़ाकर लिखता है साथ ही पुरानी घटना होती है जिनके बारे में लेखक को उनके विषय में याद न हो। लेखक अपने लम्बे जीवन में कुछ घटनाएं चुन लेता है यह चुनाव उसके विचारों को प्रभावित करता है इन कारणों से आत्मकथाओं से प्राप्त ऐतिहासिक जानकारी विकृत हो जाने की सम्भावना रहती है।

सामान्य व्यक्ति अपने जीवन में कई पत्र लिखता है। इनमें व्यक्ति महत्वपूर्ण विचारों, भावनाओं, जीवन की प्रमुख घटनाओं, अनुभवों, प्रेम, घृणा, अपनी योजनाओं आदि को व्यक्त करता है जिसके द्वारा जीवन के अप्रत्याशित और अत्यधिक गोपनीय तथ्यों को भी ज्ञात किया जा सकता है। अतः इनमें यथार्थ तथा विश्वसनीय सामग्री मिल पाती है। अर्थात् व्यक्तियों द्वारा लिखे गये निजी पत्र भी उनके बारे में महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराने में सहायता प्रदान करते हैं। पत्र भी दूसरे व्यक्तियों को प्रभावित करने के उद्दे"य से लिखे जाते हैं इसलिए उनमें भी केवल घटनाओं का सत्य वृतान्त नहीं होता। साथ ही पत्रों का उपलब्ध हो जाना एक कठिन कार्य है तथा यदि एक ही पक्ष के पत्र उपलब्ध हो या बीच के कुछ पत्र न मिले तो सामग्री में क्रमबद्धता नहीं रहती।

डायरी के माध्यम से व्यक्ति के दैनिक क्रियाकलाप और उसके अन्तः मन की भावनाओं को समझने में सहायता मिलती है। चूंकि डायरी एक पूर्णतः गोपनीय दस्तावेज है, अतः व्यक्ति के जीवन की रहस्यमयी बातों का पता लगाने का एक विश्वसनीय स्रोत हैं ये सब बाते सिर्फ डायरी में लिखी जा सकती हैं। डायरी एक निजी प्रलेख है जिसमें कुछ लोग अपने दैनिक जीवन की प्रमुख घटनाओं , अनुभवों तथा वर्तमान परिस्थितियों के बारे में अपनी प्रतिक्रियाओं को विस्तृत अथवा संकेतक रूप में डायरी लिखते रहते हैं किन्तु ये कभी–कभी अच्छी आधार सामग्री नहीं दे पाती। यह सम्भव है कि वे संघर्षों और जीवन के नाटकीय पक्षों को अधिक महत्व दे दें और सुख शान्ति के काल को कम। डायरी में संकेतो द्वारा लिखा गया है तो उनका अर्थ लगाना कठिन हो सकता है। डायरियां वि"वसनीय सामग्री या आंकड़ो के स्रोत हैं तथा उनसे लिखने वाले के बारे में अनेक ऐसे रहस्यों का भी पता चलता हैं। कभी कभी डायरी भी प्रका"ान के उद्दे"य से लिखी जाती है और तब उसमें भी प्रभावोत्पादन के प्रयत्न के कारण विकृति आ जाती है।

बोध–प्रश्न 3

(i) व्यक्तिगत प्रलेख को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

6. अभिलेख : अप्रत्यक्ष एवं लिखित सामग्री के रूप में अभिलेखों का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अन्तर्गत व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास संबंधी जानकारी विद्यमान होती है। बहुत से सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा अपनी प्र"ासकीय आव"यकताओं की पूरा करने के लिए अनेक महत्वपूर्ण

तथ्य एवं सूचनाएं संकलित करके रखे जाते हैं। अभिलेख प्रलेखों का एक महत्वपूर्ण प्रकार है। प्रत्येक संगठन में अभिलेखों में महत्वपूर्ण निर्णयों, निर्णयों से पूर्व के विचार विम"र्ा तथा वाद में उनके कार्यालयों का वृतान्त मिलता है। यह सम्पूर्ण सामग्री विभ्भिन्न समितियों, संगठनों, आयोगों के प्रतिवेदन व समय यमय पर आयोजित होने वाली बैठकों की कार्यवाहियों के रूप में होती है। यद्यपि यह सामग्री गोपनीय होती है, परन्तु साथ ही काफी वि"वसनीय भी होती है। इन अभिलेखों को हम प्रायः दो भागों में विभाजित करते हैं –

1. सभाओं समीतियों आदि की कार्यवाही
2. कार्यालय अभिलेख

सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन में सभाओं, समितियों आदि की कार्यवाही का अभिलेख रखा जाता है जो हमें संगठन के क्रियाकलापों से अवगत कराता है इसमें विधेयक, विभिन्न आयोगों की कार्यवाही, राज्य मण्डलों की कार्यवाही, सभाओं, परिषदों, समितियों की कार्यवाही, मंत्रीपरिषद की कार्यवाही से संबन्धित कार्यवाही की जानकारी हमें प्राप्त होती है साथ ही न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों, आयोगों एवं समीतियों के प्रतिवेदन, अनुसंधान संस्थानों के प्रका"ान, अनुसंधान लेख, सरकारी तथा गैर सरकारी पत्रिकाएं आदि उल्लेखनीय हैं।

15.4 प्रलेखों के लाभ

सामाजिक अनुसंधान में प्राथमिक एवे द्वितीयक दोनों प्रकार की आधार सामग्री एकत्रित की जाती है। द्वितीयक सामग्री का अनुसंधान में अपना अलग महत्व होता है । द्वितीयक सामग्री के प्रमुख गुण निम्नांकित हैं–

1. **धन व समय की बचत**– प्रलेखों के उपयोग का एक लाभ यह है कि इनके द्वारा बहुत सी पूर्व से एकत्रित सागग्री मिल जाती है। अनुसंधानकर्ता जो सामग्री स्वयं एकत्रित करता है उसे प्राथमिक सामग्री कहते हैं। दूसरों द्वारा किसी अन्य उद्दे"य के लिए एकत्रित की गयी सामग्री गौण आधार सामग्री कहलाती है। जिसके कारण अनुसंधानकर्ता के समय, श्रम एवं धन के व्यर्थ प्रयोग से बचत करते हैं क्योंकि अनुसंधानकर्ता को गौण आधार सामग्री से उपयोगी लिखित सामग्री प्राप्त हो जाती है। जैसे पुलिस विभाग में अपराधों, ि"ाक्षा विभाग में विद्यार्थियों के आंकड़े आदि के बारे में सूचनाएं प्राप्त होती है। गौण आधार सामग्री हमें मुख्यतः प्रलेखों से मिलती है जिनके आंकड़ो को सरकारी व गैर सरकारी संगठनों के द्वारा नियमित रूप से एकत्रित किये जाते हैं।
2. **भूतकालीन घटनाओं का अध्ययन**– प्रलेखों का दूसरा महत्वपूर्ण लाभ इसके द्वारा भूतकाल की घटनाओं या विषयों में पता लगता है। अर्थात हमें ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त होती है। भूतकालीन घटनाओं का क्षेत्रीय अध्ययन करना समव नही होता। वर्तमान की सामग्री को तो हम स्वयं एकत्र कर सकते है लेकिन अतीत की सामग्री को उसी काल या समय के व्यक्तियों से प्राप्त होती है। इसके लिए बहुधा उस समय के प्रलेखों का उपयोग करना होता है। इसके माध्यम से हमें काल विषय के बारे में पता चलता है। समाज"ाास्त्र की इतिहास के अध्ययन से संबंधित शाखा को ऐतिहासिक समाज"ाास्त्र कहते हैं।
3. **निर्भरता का अभाव**– सामाजिक अनुसंधान की प्रविधियों में हमें दूसरे व्यक्तियों पर निर्भर रहना पड़ता है जैसे साक्षात्कार द्वारा आधार सामग्री संग्रह करने में उत्तरदाताओं पर निर्भर रहना पड़ता है। लेकिन प्रलेखों के उपयोग द्वार इस प्रकार की निर्भरता नही रहती है। प्रलेखों का मिलना सदैव आसान नही होता क्योंकि कोई भी सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन द्वारा अपने बहुत से प्रलेखों को गोपनीय माानने के कारण अनुसंधान कर्ताओं को उपलब्ध नहीं

कराते। पुराने प्रलेख जिनका महत्व संस्था के लिए कम हो जाता है एक शोधकर्ता को आसानी से उपलब्ध होने के कारण काफी उपयोगी साबित होते हैं।

4. **पक्षपात से बचाव**– प्रलेखों का एक लाभ यह है कि अनुसंधान कर्ता द्वारा किसी प्रकार के पक्षपात करने की सम्भावना तथा सामग्री को अपने मूल्यों के अनुरूप तोड़ मरोड़ लेने की सम्भावना कम होती है। जिस व्यवहार का अध्ययन हम करना चाहते हैं वह अध्ययन के कारण ही और उसके द्वारा परिवर्तित हो जाता है साथ ही सूचनादाताओं द्वारा भी प्र"नों का सही उत्तर प्राप्त नही होता जिसके द्वारा भी व्यवहार प्रभावित हो जाता है। प्रलेखों में यह कठिनाई कम उन्पन्न होती है। जैसे कोई शोधकर्ता विधि से संबंधित अध्ययन करना चाहता है तो उसके अभिलेखों से बहुत सी महत्वपूर्ण वि"वसनीय तथा प्रमाणिक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं के अभिलेखों द्वारा कई उपयोगी आधार सामग्री प्राप्त की जा सकती है।

15.5 प्रलेखों के समस्याएं

यद्यपि द्वितीयक सामग्री सामाजिक अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता को महत्वपूर्ण योगदान देती है, फिर भी इसके प्रयोग के कारण अनुसंधान में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन प्रलेखों के प्रमुख समस्याएं निम्नांकित हैं –

1. **कम वि"वसनीय**– प्रलेखों के उपयोग में कई समस्याएं आती हैं जिनमें से एक यह है कि सरकारी तथा गैर संरकारी संगठनों द्वारा एकत्रित आंकड़े सदैव सत्य नही होते हैं क्योंकि इन आंकड़ो को वैज्ञानिक ढ़ग से संकलित करने में काफी कठिनाइयां उठाानी पढ़ती हैं। जिन्हे इस कार्य हेतु रखा गया है वह पूर्ण ईमानदारी के साथ आंकड़े एकत्र करने के स्थान पर अनुमान से लिख दे या फिर पूर्व के आंकड़ों में थोड़ा बहुत फेरबदल कर नवीन आंकड़ों को प्रस्तुत करे। सरकारी आंकड़ो के संकलन में नियुक्त कर्मचारी अपने उच्च अधिकारी के सम्मुख अपने कार्य को अच्छा बताने की प्रवृत्ति के कारण, इन आंकडों को गलत रूप में प्रस्तुत करता है तो उनकी मौलिकता की वि"वसनीयता में कमी आती है।
2. **आकड़ो की भिन्नता** – प्रलेखों की दूसरी महत्वपूर्ण समस्या एक ही विषय से संबंधित आंकड़ों में भिन्नता का पाया जाना हैं क्योकि किसी भी सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन के माध्यम से किसी भी विषय में आंकड़े एकत्र किये जाते है तो वह संस्थाएं आंकड़ो को एकत्र करने से पूर्व उनसे संबंधित मानको और परिभाषाओं से पूर्ण रूप से भिज्ञ नही होते। आंकड़ों की शुद्धता परिभाषा की स्पष्टता पर निर्भर करती है । परिभाषाओं और मानको की भिन्न्ता के कारण कभी कभी ऐसा होता है कि अलग अलग संगठनों द्वारा एकत्रित एक ही विषय से संबंधित आंकड़े अलग अलग होते हैं। साथ ही द्वितीयक सामग्री का उपयोग करने से पूर्व यह जांच भी कर लेनी चाहिए कि आंकड़ो को एकत्र करने में क्या पद्धति अपनायी गई।
3. **लेखक की अभिनति**– सभी प्रलेख लेखकों के वि"ाष्ट दृष्टिकोणों द्वारा प्रभावित होते है और हो सकता है कि अनुसंधानकर्ता को वास्तविकता की पूर्ण जानकारी न हो। क्योकि वे जिस दे"ाकाल तथा परिस्थितियों में तैयार किये जाते हैं उसे जााने के प"चात ही उसका उपयोग किया जा सकता है। संदर्भ के साथ ही बात का अर्थ तथा महत्व सभी कुछ बदल जाता है। उदाहरणार्थ पहले के इतिहासकार राजाओं और सामंतो के विषय में लिखते थे, जनसाधारण के विषय में उनकी जानकारी कम ही होती थी और उनके विषय में लिखना महत्वपूर्ण नही समझते थे। सामान्यतया यह प्रमाणित करना कठिन होता था कि जिस व्यक्ति के प्रलेखों को द्वितीयक सामग्री के रूप में प्रयोग कर रहे हैं वह एक निष्पक्ष , ईमानदार , संयोग्य व्यक्ति था या नहीं।

इसलिए पुराने वृतांतो को पडने से स्पष्ट हो जाता है कि इसमें दुख सुख, न्याय अन्याय आदि उच्च वर्गों के आंतरिक संबंधों के संदर्भ में ही देखे और प्रस्तुत किये जाते थे। उनका विषय साधारण जनता नही थे। इसलिए प्रलेखों का उपयोग करने से पर्व यह ध्यान रखना आव"यक है कि किस संदर्भ के लिए और किस के द्वारा लिखे गए।

4. **अपर्याप्त सूचना**– सामान्यतया प्रलेखों द्वारा उपलब्ध सूचनाएं अपर्याप्त होती हैं क्योंकि उन्हें अनुसंधान के उद्दे"य एा अनुसंधानकर्ता द्वारा एकत्रित नही किया जाता। इनका उपयोग करने से पूर्व यह भी ध्यान देना चाहिए इनकों किस उद्दे"य के लिए लिखा गया है। उद्दे"य की दृष्टि से कुछ जानकारी उपयोगी हो सकती है और कुछ हमारे लिए उपयोगी न हो। बहुत सी काल्पनिक बातों का भी या यह हो सकता है कि कुछ बाते भूल से या किसी और कारण से छूट गयी हों।

बोध–प्रश्न 4

(i) प्रलेखों के दो महत्वपूर्ण लाभो तथा समस्याओं का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

15.6 कार्यालय अभिलेख

इनमें वृहद संगठनों के कार्यालयों में भी अभिलेख रखे जाते हैं इन संगठनों में प्रत्येक महत्वपूर्ण मामले पर कोई भी निर्णय लेने से पूर्व निर्णय से संबन्धित आव"यक जानकारी एकत्रित की जाती है तत्प"चात संगठन के अधिकारियों द्वारा विभिन्न पहलुओं पर विचार विम"ार होता है फिर निर्णय किया जाता है फिर निर्णय सर्वसम्मति से पारित होने के प"चात इसके कार्यान्वयन के लिए आदे"ा दिये जाते हैं और अन्य कार्य किये जाते हैं। इस कार्यवाही से संबन्धित मामले को अभिलेख कहते हैं इसे कार्यालय में कुछ समय तक सुरक्षित रखा जाता है और आव"यकतानुसार निकाल कर देख लिया जाता है इस अभिलेख की महत्वपूर्ण कार्य यह है कि जैसे ही इससे मिलता जुलता कोई मामला आता है तो अभिलेख देख कर यह आसानी से ज्ञात हो जाता है कि पहले इस मामले पर क्या निर्णय लिया गया तथा इस निर्णय लेने के पीछे कारण क्या था।

प्रत्येक कार्यालयी अभिलेख को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया जाता है ये दोनों भाग बहुधा अलग–अलग फाइलों में सुरक्षित रखे जाते हैं।

1. पत्र व्यवहार : पत्र व्यवहार का तात्पर्य संगठन के अन्य अंगों तथा बाहर के विभागों के साथ जो जानकारी साझा की जाती है उसे पत्र व्यवहार कहा जाता है इसमें विभाग से संबन्धित विभिन्न पहलुओं या विचारों को पत्र व्यवहार के माध्यम से अभिकरणों को प्रेषित किया जाता है तथा एक प्रति को भविष्य के लिए फाइल में सुरक्षित रख दिया जाता है तथा अन्य अधिकरणों में प्राप्त उत्तरों को भी अलग फाइल में रखा जाता है। समय–समय पर विभिन्न विभाग अन्य विभाग से जानकारी प्राप्त करने या विभाग में संबन्धित लिये गये निर्णयों को पत्र व्यवहार के माध्यम से दूसरे विभाग में भेजे जाते हैं।

2. टिप्पणियाँ और आदे"ा : इसके अन्तर्गत संगठन के अन्दर विभिन्न तलों पर प्रकट किये गये विचार टिप्पणियों के रूप में, लिये गये निर्णय तथा उनके क्रियान्वयन के लिए दिये गये आदे"ा रहते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अभिलेख दूसरे रूपों में रखे जाते हैं जैसे लेखा एक नि"चत रूप में लेखा पुस्तकों में रखा जाता है।

भारत सरकार एवं राज्य सरकार के अभिलेखागारों में पुराने अभिलेख मिल सकते हैं केन्द्र सरकार का अभिलेखागार नई दिल्ली में स्थित है इसमें कई वर्षों पुराने अभिलेख देखे जा सकते हैं। इसमें कुछ फाइलें पुस्तकें, तथा मानचित्र उपलब्ध हैं इसमें कुछ अभिलेखों के सूक्ष्म छायाचित्र भी बना लिए गये हैं। इसमें महत्वपूर्ण व्यक्तियों और नेताओं के व्यक्तिगत प्रलेख हैं। इन अभिलेखागार में शोधकर्ता को महत्वपूर्ण जानकारी मिल जाती है।

बोध–प्रश्न 5

(i) कार्यालयी अभिलेख को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

15.7 सारांश

आधार सामग्री के स्रोतो के रूप में प्रलेखों का महत्वपूर्ण स्थान है इनके द्वारा समय, धन और श्रम तीनो की बचत होती है। ऐतिहासिक सामग्री की प्राप्ति तथा इससे सामाजिक परिवर्तन के अध्ययन में सहायता मिलती है। अनेक संस्थाओं द्वारा भी ऐसे प्रलेख तैयार किये जाते है तथा इनके द्वारा सामग्री या आंकड़ें अपने निजी प्रयोग के लिए संकलित की जाती हैं। जिनमें बहुमूल्य और उपयोगी सामग्री उपलब्ध करायी जाती है ताकि उस जानकारी में रूचि रखने वाले अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययनों को अधिक उपयोगी बना सकें। बृहत स्तर पर उपलब्ध आंकड़े अनुसंधानकर्ता को ऐसा आधार प्रदान करते हैं कि वह सिद्धांतों तक का निर्माण करने में सफल हो जाता है।

15.8 पारिभाषिक शब्दावली

प्र"नावली–प्र"नावली सामाजिक अनुसंधान में आंकड़ें संकलन करने के लिए प्रयोग किया जाने वाला एक ऐसा उपकरण हैं जोकि प्र"नों की सूची या तालिका के रूप में है।

जीवन इतिहास– जीवन इतिहास का तात्पर्य विस्तृत आत्मकथा से है।

जनगणना– जनगणना का तात्पर्य समग्र की समस्त इकाइयों का अध्ययन करना है।

व्यक्तिगत प्रलेख– व्यक्तिगत प्रलेखों का तात्पर्य ऐसं प्रलेखों या लिखित सामग्री से है जिन्हें किसी व्यक्ति द्वारा निजी रूप में लिखा जाता है।

सिंद्धांत– सिद्धांत सामाजिक वास्तविकता के बार में ही अवलोकित प्रस्तावनाओं का सार है।

15.9 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रलेखों के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये इतिवृत्त के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रलेखों के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये जनगणना के आंकड़े के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रलेखों के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये व्यक्तिगत प्रलेख के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रलेखों के लाभ तथा प्रलेखों की समस्याएं शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 5
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर कार्यालय अभिलेख शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

15.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सो"ियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरने"ानल. ऑकलैण्ड.

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Best J. W. (1959). Research in Education. Prentice-Hall Inc. Englewood Cliffs, New Jercy.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers

15.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** कालेज बुक डिपो .जयपुर.

ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

Gardner, Lindzey and Elliott, (2nd ed.). (1975). The Handbook of Social Psychology. vol II. Amerind Publishing Co. New Delhi.

15.12 निबंधात्मक प्र"न

1. द्वितीयक आधार सामग्री के प्रमुख प्रकार कौन से हैं ? स्पष्ट कीजिए
2. द्वितीयक आधार सामगी से आप क्या समझते हैं। प्रलेखों के लाभों तथा समस्याओं की विवेचना कीजिए।
3. जनगणना को ऐतिहासिक स्रोत क्यो कहां जाता है? समझाइये।
4. द्वितीयक आधार सामग्री से आप क्या समझते हैं कार्यालय अभिलेख की विवेचना कीजिए।